दादा भगवान कथित

क्लेश रहित जीवन

दादा भगवान कथित

क्लेश रहित जीवन

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरूबहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : अजीत सी. पटेल
महाविदेह फाउन्डेशन
'दादा दर्शन', 5, ममतापार्क सोसाइटी,
नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा,
अहमदाबाद - ३८००१४, गुजरात
फोन - (०७९) २७५४०४०८, २७५४३९७९

©
All Rights reserved - Shri Deepakbhai Desai
Trimandir, Simandhar City,
Ahmedabad-Kalol Highway, Post - Adalaj,
Dist.-Gandhinagar-382421, Gujarat, India.

प्रथम संस्करण : ३००० प्रतियाँ, जून २०१०

भाव मूल्य : 'परम विनय' और
'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : २५ रुपये

लेसर कम्पोज़ : दादा भगवान फाउन्डेशन, अहमदाबाद

मुद्रक : महाविदेह फाउन्डेशन (प्रिन्टिंग डिवीज़न),
पार्श्वनाथ चैम्बर्स, नई रिज़र्व बैंक के पास,
उस्मानपुरा, अहमदाबाद-३८० ०१४.
फोन : (०७९) २७५४२९६४, ३०००४८२३

त्रिमंत्र

व्यवहार और धर्म सिखलाया जगत् को

एक पुस्तक व्यवहारिक ज्ञान की बनाओ। इससे लोगों का व्यवहार सुधरे तब भी बहुत हो गया। और मेरे शब्द हैं उससे उनका मन बदल जाएगा। शब्द मेरे ही रखना। शब्दों में बदलाव मत करना। वचनबलवाले शब्द हैं, मालिकी बिना के शब्द हैं। परन्तु उन्हें सुव्यवस्थित करके रखना है आपको।

मेरा यह जो व्यावहारिक ज्ञान है न, वह तो ऑल ऑवर वर्ल्ड हर एक को काम में आएगा। पूरी मनुष्यजाति के काम आएगा।

हमारा व्यवहार बहुत ऊँचा था। वह व्यवहार सिखलाता हूँ और धर्म भी सिखलाता हूँ। स्थूलवालों को स्थूल, सूक्ष्मवालों को सूक्ष्म परन्तु हर एक को काम में आएगा। इसलिए ऐसा कुछ करो कि लोगों को हैल्पफुल हो। मैंने बहुत पुस्तकें पढ़ी हैं, इन लोगों को मदद हो ऐसीं। परन्तु कुछ भला हो ऐसा नहीं था। थोड़ी-बहुत हैल्प होगी। बाकी जीवन सुधारे ऐसा होता ही नहीं! क्योंकि वह तो मन का, डॉक्टर ऑफ माइन्ड हो तभी होता है! वह, आई एम द फुल डॉक्टर ऑफ माइन्ड!

- दादाश्री

दादा भगवान कौन ?

जून १९५८ की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन, प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए। और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सम्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल, गुजरात के चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कान्ट्रेक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षु जनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना। अक्रम अर्थात् लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट!

वे स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि "यह जो आपको दिखते है वे दादा भगवान नहीं है, वे तो 'ए.एम.पटेल' है। हम ज्ञानी पुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।"

'व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं', इस सिद्धांत से उन्होंने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्होंने किसीके पास से पैसा नहीं लिया बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लिंक

'मैं तो कुछ लोगों को अपने हाथों सिद्धि प्रदान करनेवाला हूँ। पीछे अनुगामी चाहिए कि नहीं चाहिए? पीछे लोगों को मार्ग तो चाहिए न?''

– दादाश्री

परम पूज्य दादाश्री गाँव-गाँव, देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षु जनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे। आपश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूज्य डॉ. नीरूबहन अमीन (नीरूमाँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थीं। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरूमाँ वैसे ही मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थी। पूज्य दीपकभाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। नीरूमाँ की उपस्थिति में ही उनके आशीर्वाद से पूज्य दीपकभाई देश-विदेशो में कईं जगहों पर जाकर मुमुक्षुओं को आत्मज्ञान करवा रहे थे, जो नीरूमाँ के देहविलय पश्चात् आज भी जारी है। इस आत्मज्ञानप्राप्ति के बाद हज़ारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, जिम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

ग्रंथ में मुद्रित वाणी मोक्षार्थी को मार्गदर्शन में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी, लेकिन मोक्षप्राप्ति हेतु आत्मज्ञान प्राप्त करना ज़रूरी है। अक्रम मार्ग के द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति का मार्ग आज भी खुला है। जैसे प्रज्वलित दीपक ही दूसरा दीपक प्रज्वलित कर सकता है, उसी प्रकार प्रत्यक्ष आत्मज्ञानी से आत्मज्ञान प्राप्त कर के ही स्वयं का आत्मा जागृत हो सकता है।

निवेदन

परम पूज्य 'दादा भगवान' के प्रश्नोत्तरी सत्संग में पूछे गये प्रश्न के उत्तर में उनके श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहार ज्ञान संबंधी जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता हैं। उसी साक्षात सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो हम सबके लिए वरदानरूप साबित होगी।

प्रस्तुत अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के मापदण्ड पर शायद पूरी न उतरे, परन्तु पूज्य दादाश्री की गुजराती वाणी का शब्दश: हिन्दी अनुवाद करने का प्रयत्न किया गया है, ताकि वाचक को ऐसा अनुभव हो कि दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है। फिर भी दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वे इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद संबंधी कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

पाठकों से...

- इस पुस्तक में मुद्रित पाठ्यसामग्री मूलत: गुजराती '*क्लेश विनानुं जीवन*' का हिन्दी रुपांतर है।
- इस पुस्तक में 'आत्मा' शब्द का प्रयोग संस्कृत और गुजराती भाषा की तरह पुल्लिंग में किया गया है।
- जहाँ-जहाँ पर 'चंदूलाल' नाम का प्रयोग किया गया है, वहाँ-वहाँ पाठक स्वयं का नाम समझकर पठन करें।
- पुस्तक में अगर कोई बात आप समझ न पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें।
- दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों '*इटालिक्स*' में रखे गये हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालाँकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द ( ) में अर्थ के रूप में दिये गये हैं। ऐसे सभी शब्द और शब्दार्थ पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

संपादकीय

जीवन तो जी लिया जाता है हर किसी से, परन्तु खरा जीवन उसका जीया हुआ कहलाता है कि जो जीवन क्लेश रहित हो!

कलियुग में तो घर-घर रोज़ सुबह पहले ही चाय-नाश्ता ही क्लेश से होता है! फिर पूरे दिन में क्लेश के भोजन और फाँकने की बात ही क्या करनी? अरे, सतयुग, द्वापर और त्रेता में भी बड़े-बड़े पुरुषों के जीवन में क्लेश आया ही करते थे। सात्विक पांडवों को सारी ज़िन्दगी कौरवों के साथ मुकाबला करने की व्यूह रचना में ही गई! रामचंद्रजी जैसों को वनवास और सीता के हरण से लेकर ठेठ अश्वमेघ यज्ञ हुआ वहाँ तक संघर्ष ही रहा! हाँ, आध्यात्मिक समझ से वे इन सबको समताभाव से पार कर गए, वह उनकी महान सिद्धि मानी जाएगी!

यह, क्लेशमय जीवन जाए तो उसका मुख्य कारण नासमझी ही है! 'तमाम दु:खों का मूल तू खुद ही है!' परम पूज्य दादाश्री का यह विधान कितनी गहनता से दु:खों के मूल कारण को खुला करता है, जो कभी भी किसी के दिमाग़ में ही नहीं आया था!

जीवन नैया किस गाँव ले जानी है वह निश्चित किए बिना, दिशा जाने बिना उसे चलाते ही जाते हैं, चलाते ही जाते हैं तो मंजिल कहाँ से मिले? पतवार घुमा घुमाकर थक जाते हैं, हार जाते हैं, और अंत में बीच समुद्र में डूब जाते हैं! इसलिए जीवन का ध्येय निश्चित करना अति-अति आवश्यक है। ध्येय बिना का जीवन पट्टा लगाए बिना का इंजन चलाते रहने जैसा है? यदि अंतिम ध्येय चाहिए तो वह मोक्ष का है और बीच का चाहिए तो जीवन सुखमय नहीं हो तो कुछ नहीं परन्तु क्लेशमय तो नहीं ही होना चाहिए। हररोज़ सुबह दिल से पाँच बार प्रार्थना करनी चाहिए कि 'प्राप्त मन-वचन-काया से इस जगत् में किसी भी जीव को किंचित् मात्र दु:ख न हो, न हो, न हो!' और उसके बावजूद भी किसी को भूल से दु:ख दे दिया जाए तो उसका हृदयपूर्वक पछतावा करके प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करके धो डालने से जीवन वास्तव में शांतिमय गुज़रता है।

घर में माँ-बाप-बच्चों के बीच की कच-कच का अंत समझ से ही

आएगा। इसमें मुख्य तो माँ-बाप को ही समझना है। अतिशय भावुकता, मोह, ममता मार अवश्य खिलाते हैं और स्व-पर का अहित करके ही रहते हैं। 'फ़र्ज़ पूरे करने हैं, पर भावुकता के हिंडोले में झूलना और फिर गिरना नहीं है।' परम पूज्य दादाश्री ने माँ-बाप और बच्चों के व्यवहार की बहुत ही गहरी समझ दोनों के गहरे मानस को समझकर खुल्ली करी है, जिससे लाखों के जीवन सुधर गए हैं!

पति-पत्नी अति-अति प्रेमवाले होने के बावजूद अति-अति क्लेश, ऐसा दोनों के ही जीवन में देखने को मिलता है। एक-दूसरे की *हूंफ* से इतने अधिक बंधे हुए हैं कि अंदर सदा क्लेश हो फिर भी बाहर पति-पत्नी की तरह पूरा जीवन जी लेते हैं। पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार किस प्रकार हो, उसका मार्गदर्शन संपूज्य श्री दादाश्री ने हँसते-हँसाते दे दिया है।

सास-बहू का व्यवहार, व्यवसाय में सेठ-नौकर या व्यापारी-व्यापारी के पार्टनरों के साथ के व्यवहार को भी क्लेश रहित कैसे जीना उसकी चाबियाँ दी हैं।

केवल आत्मा-आत्मा करके व्यवहार की पूरी-पूरी उपेक्षा करके आगे बढ़नेवाले साधक ज्ञानीपद को प्राप्त नहीं कर सकते। क्योंकि उनका ज्ञान बाँझ ज्ञान माना जाता है। असल ज्ञानी जैसे कि परम पूज्य दादाश्री ने व्यवहार और निश्चय के दो पंखों को समानांतर करके मोक्षगगन में विहार किया है और लाखों को करवाया है और व्यवहार ज्ञान और आत्मज्ञान की चोटी पर की समझ देकर जागृत कर दिया है।

प्रस्तुत पुस्तिका में जीवन जीने की कला, जो परम पूज्य दादाश्री के श्रीमुख से निकली हुई बोधकला को संक्षिप्त में संकलित करने में आया है। विस्तारपूर्वक अधिक जानने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के साथ के व्यवहार के सोल्युशन के लिए बड़े-बड़े ग्रंथ प्राप्त करके अधिक गहरी समझ सुज्ञ पाठक को प्राप्त कर लेनी ज़रूरी है। माँ-बाप-बच्चों का व्यवहार, पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार, वाणी का व्यवहार, पैसों का व्यवहार इत्यादि व्यवहार ज्ञान के ग्रंथों का आराधन करके क्लेश रहित जीवन जीया जा सकता है।

- डॉ. नीरुबहन अमीन के जय सच्चिदानंद

अनुक्रमणिका

क्लेश रहित जीवन

१. जीवन जीने की कला

ऐसी 'लाइफ' में क्या सार? १
परन्तु वह कला कौन सिखलाए? २
समझ कैसी? कि दुःखमय... ४
ऐसे शौक की कहाँ ज़रूरत है? ६
किसमें हित? निश्चित करना पड़ेगा ८
और ऐसी गोठवणी से सुख... १०
बैर खपे और आनंद भी रहे १२
साहिबी, फिर भी भोगते नहीं १४
संसार सहज ही चले, वहाँ... १५

२. योग-उपयोग परोपकाराय

जीवन में, महत् कार्य ही ये दो १७
परोपकार से पुण्य साथ में १७
परोपकार, परिणाम में लाभ ही १८

३. दुःख वास्तव में है?

'राइट बिलीफ़' वहाँ दुःख नहीं २२
दुःख तो कब माना जाता है? २२
'पेमेन्ट' में तो समता रखनी... २४
...निश्चित करने जैसा 'प्रोजेक्ट'... २६
मात्र भावना ही करनी है २६

४. फ़ैमिलि आर्गेनाइज़ेशन

यह तो कैसी लाइफ? २८
ऐसा संस्कार सिंचन शोभा देता... २९
प्रेममय डीलिंग - बच्चे सुधरेंगे... ३०
...नहीं तो मौन रखकर 'देखते' रहो ३१
...खुद का ही सुधारने की ज़रूरत ३२
दख़ल नहीं, 'एडजस्ट' होने... ३३
सुधारने के लिए 'कहना' बंद... ३५
रिलेटिव समझकर उपलक रहना ३६
सलाह देनी, परन्तु देनी ही पड़े... ३८
अब, इस भव में तो संभाल ले ३८
सच्ची सगाई या परायी पीड़ा? ३९
...फिर भी उचित व्यवहार... ४०
फ़र्ज़ में नाटकीय रहो ४१
बच्चों के साथ 'ग्लास विद केर' ४२
घर, एक बगीचा ४४
उसमें मूर्च्छित होने जैसा है ही... ४५
व्यवहार नोर्मेलिटीपूर्वक होना चाहिए ४६
उसकी तो आशा ही मत रखना ४७
'मित्रता', वह भी 'एडजस्टमेन्ट' ४८
खरा धर्मोदय ही अब ४८
संस्कार प्राप्त करवाए, वैसा... ४९
इसलिए सद्भावना की ओर मोड़ो ५०

५. समझ से सोहे गृहसंसार

मतभेद में समाधान किस प्रकार? ५१
...इसलिए टकराव टालो ५३
सहन? नहीं, सोल्युशन लाओ ५४
हिसाब चुके या कॉज़ेज़ पड़े? ५६
'न्याय स्वरूप', वहाँ उपाय तप ५७
उत्तम तो, एडजस्ट एवरीव्हेर ५८
घर में चलन छोड़ना तो पड़ेगा न? ६०
रिएक्शनरी प्रयत्न नहीं ही... ६१
...नहीं तो प्रार्थना का एडजस्टमेन्ट ६२
'ज्ञानी' के पास से एडजस्टमेन्ट ६३

आश्रित को कुचलना, घोर अन्याय ६३
साइन्स समझने जैसा ६५
जो भुगते उसकी ही भूल ६६
मियाँ-बीवी ६६
झगड़ा करो, पर बगीचे में ६८
...यह तो कैसा मोह? ६८
...ऐसा करके भी क्लेश टाला ६९
मतभेद से पहले ही सावधानी ७१
क्लेश बगैर का घर, मंदिर जैसा ७२
उल्टी कमाई, क्लेश कराए ७३
प्रयोग तो करके देखो ७४
धर्म किया (!) फिर भी क्लेश? ७४
...तब भी हम सुल्टा करें ७५
'पलटकर' मतभेद टाला ७६
...यह तो कैसा फँसाव? ७८
आक्षेप, कितने दुःखदायी! ८१
खड़कने में, जोखिमदारी खुद... ८२
प्रकृति पहचानकर सावधानी रखना ८३
डीलिंग नहीं आए, तो दोष... ८३
'व्यवहार' को 'इस' तरह से... ८७
'मार' का फिर बदला लेती है ९०
फरियाद नहीं, निकाल लाना है ९१
सुख लेने में फँसाव बढ़ा ९२
इस तरह शादी निश्चित होती है ९३
'कॉमनसेन्स' से 'सोल्युशन'... ९४
रिलेटिव, अंत में दगा समझ में... ९४
कुछ समझना तो पड़ेगा न? ९६
रिलेटिव में तो जोड़ना ९८
वह सुधरा हुआ कब तक टिके? ९९
एडजस्ट हो जाएँ, तब भी सुधरे ९९
सुधारने के बदले सुधरने... १००
किसे सुधारने का अधिकार? १०१
व्यवहार निभाना, एडजस्ट होकर १०१
नहीं तो व्यवहार की गुत्थियाँ... १०४
काउन्टरपुली-एडजस्टमेन्ट की रीति १०४
उल्टा कहने से कलह हुई... १०६
अहो! व्यवहार का मतलब ही... १०७
...और सम्यक् कहने से कलह...१०७
टकोर, अहंकारपूर्वक नहीं करते १०८
यह अबोला तो बोझा बढ़ाए १०९
प्रकृति के अनुसार एडजस्टमेन्ट... ११०
सरलता से भी सुलझ जाए १११
...सामनेवाले का समाधान... १११
झगड़ा, रोज़ तो कैसे पुसाए? ११२
'झगड़ाप्रूफ' हो जाने जैसा है ११३
बैरबीज में से झगड़ों का उद्भव ११४
ज्ञान से, बैरबीज छूटे ११४
जैसा अभिप्राय वैसा असर ११५
यह सद्विचारणा, कितनी अच्छी ११५
शंका, वह भी लड़ाई-झगड़े... ११६
ऐसी वाणी को निबाह लें ११७
ममता के पेच खोलें किस तरह? ११७
सभी जगह फँसाव कहाँ जाएँ? ११८
पोलम्पोल कब तक ढँकनी? ११९
...ऐसे फँसाव बढ़ता गया १२०
...उसे तो 'लटकती सलाम!' १२१
एक घंटे का गुनाह, दंड ज़िन्दगी पूरी १२२
पगला अहंकर, तो लड़ाई... १२३

ऐसी वाणी बोलने जैसी नहीं है १२४
संसार निभाने के संस्कार-कहाँ? १२५
इसमें प्रेम जैसा कहाँ रहा? १२५
नोर्मेलिटी, सीखने जैसी १२६
...शक्तियाँ कितनी 'डाउन' गई? १२७
भूल के अनुसार भूलवाला मिले १२८
शक्तियाँ खिलानेवाला चाहिए १२९
प्रतिक्रमण से, हिसाब सब छूटें १२९
...तो संसार अस्त हो १३०
'ज्ञानी' छुड़वाएँ, संसारजाल से १३१
ऐसी भावना से छुड़वानेवाले
मिलते ही हैं १३२

६. व्यपार, धर्म समेत

जीवन किसलिए खर्च हुए? १३४
विचारणा करनी, चिंता नहीं १३४
चुकाने की नीयत में चोखे रहो १३५
...जोखिम समझकर, निर्भय रहना १३६
ग्राहकी के भी नियम हैं १३६
प्रामाणिकता, भगवान का... १३८
...नफा-नुकसान में, हर्ष-शोक... १३९
व्यापार में हिताहित १३९
ब्याज लेने में आपत्ति? १३९
किफ़ायत, तो 'नोबल' रखनी १४०

७. ऊपरी का व्यवहार

अन्डरहैन्ड की तो रक्षा करनी... १४१
सत्ता का दुरुपयोग, तो... १४२

८. कुदरत के वहाँ गेस्ट

कुदरत, जन्म से ही हितकारी १४४
पर दख़लंदाज़ी से दुःख मोल... १४६
...फिर भी कुदरत, सदा मदद... १४७

९. मनुष्यपन की क़ीमत

क़ीमत तो, सिन्सियारिटी... १४९
'इनसिन्सियारिटी' से भी मोक्ष १५०

१०. आदर्श व्यवहार

अंत में, व्यवहार आदर्श चाहिएगा १५१
शुद्ध व्यवहार : सद्व्यवहार १५३
आदर्श व्यवहार से मोक्षार्थ सधे १५४

क्लेश रहित जीवन

१. जीवन जीने की कला

ऐसी 'लाइफ' में क्या सार?

इस जीवन का हेतु क्या होगा, वह समझ में आता है? कोई हेतु तो होगा न? छोटे थे, फिर बूढ़े होते हैं और फिर अरथी निकालते हैं। अरथी निकालते हैं, तब दिया हुआ नाम ले लेते हैं। यहाँ आए कि तुरन्त ही नाम दिया जाता है, व्यवहार चलाने के लिए! जैसे ड्रामे में भर्तृहरि नाम देते हैं न? 'ड्रामा' पूरा तब फिर नाम पूरा। ऐसे यह व्यवहार चलाने के लिए नाम देते हैं, और उस नाम पर बंगला, मोटर, पैसे रखते हैं और अरथी निकालते हैं, तब वह सब ज़ब्त हो जाता है। लोग जीवन गुज़ारते हैं और फिर गुज़र जाते हैं। ये शब्द ही 'इटसेल्फ' कहते हैं कि ये सब अवस्थाएँ हैं। गुज़ारा का मतलब ही राहखर्च! अब इस जीवन का हेतु मौज-मज़े करना होगा या फिर परोपकार के लिए होगा? या फिर शादी करके घर चलाना, वह हेतु होगा? यह शादी तो अनिवार्य होती है। किसी को शादी अनिवार्य न हो तो शादी हो ही नहीं। परन्तु बरबस शादी होती है न?! यह सब क्या नाम कमाने का हेतु है? पहले सीता और ऐसी सतियाँ हो गई हैं, जिनका नाम हो गया। परन्तु नाम तो यहाँ का यहाँ रहनेवाला है। पर साथ में क्या ले जाना है? आपकी गुत्थियाँ!

आपको मोक्ष में जाना हो तो जाना, और नहीं जाना हो तो मत जाना। परन्तु यहाँ आपकी गुत्थियों के सभी खुलासे कर जाओ। यहाँ तो हरएक प्रकार के खुलासे होते हैं। ये व्यवहारिक खुलासे होते हैं तो भी वकील पैसे लेते हैं! पर यह तो अमूल्य खुलासा, उसका मूल्य ही नहीं होता न।

यह सब उलझा हुआ है! और वह आपको अकेले को ही है, ऐसा नहीं है, पूरे जगत् को है। 'द वर्ल्ड इज़ द पज़ल इटसेल्फ।' यह 'वर्ल्ड' इटसेल्फ पज़ल हो गया है।

धर्म वस्तु तो बाद में करनी है, परन्तु पहले जीवन जीने की कला जानो और शादी करने से पहले बाप होने का योग्यतापत्र प्राप्त करो। एक इंजन लाकर उसमें पेट्रोल डालें और उसे चलाते रहें, पर वह मीनिंगलेस जीवन किस काम का? जीवन तो हेतु सहित होना चाहिए। यह तो इंजन चलता रहता है, चलता ही रहता है, वह निरर्थक नहीं होना चाहिए। उससे पट्टा जोड़ दें, तब भी कुछ पीसा जाए। पर यह तो सारी ज़िन्दगी पूरी हो जाए, फिर भी कुछ भी पीसा नहीं जाता और ऊपर से अगले भव के गुनाह खड़े करता है।

यह तो लाइफ पूरी फ्रेक्चर हो गई है। किसलिए जीते हैं, उसका भान भी नहीं रहा कि यह मनुष्यसार निकालने के लिए मैं जीता हूँ! मनुष्यसार क्या है? तब कहे, जिस गति में जाना हो, वह गति मिले या फिर मोक्ष में जाना हो तो मोक्ष में जाया जा सके। ऐसे मनुष्यसार का किसी को भान ही नहीं है, इसलिए भटकते रहते हैं।

परन्तु वह कला कौन सिखलाए?

आज जगत् को हिताहित का भान ही नहीं है, संसार के हिताहित का कुछ लोगों को भान होता है, क्योंकि वह बुद्धि के आधार पर कितनों ने निश्चित किया होता है। पर वह संसारी भान कहलाता है कि संसार में किस तरह मैं सुखी होऊँ? असल में तो यह भी करेक्ट नहीं है। करेक्टनेस तो कब कहलाती है कि जीवन जीने की कला सीखा हो तब। यह वकील हुआ, फिर भी कोई जीवन जीने की कला आई नहीं। तब डॉक्टर बिना फिर भी वह कला नहीं आई। यह आप आर्टिस्ट की कला सीख लाए या दूसरी कोई भी कला सीख लाए, वह कोई जीवन जीने की कला नहीं कहलाती। जीवन जीने की कला तो, कोई मनुष्य अच्छा जीवन जीता हो, उसे हम कहें कि आप यह किस तरह जीवन जीते हो, ऐसा कुछ मुझे

सिखलाओ। मैं किस तरह चलूँ, तो वह कला सीख सकता हूँ? उसके कलाधर चाहिए, उसका कलाधर होना चाहिए, उसका गुरु होना चाहिए। पर इसकी तो किसी को पड़ी ही नहीं न! जीवन जीने की कला की तो बात ही उड़ाकर रखी है न? हमारे पास यदि कोई रहता हो तो उसे यह कला मिल जाए। फिर भी, पूरे जगत् को यह कला नहीं आती ऐसा हमसे नहीं कहा जा सकता। परन्तु यदि कम्पलीट जीवन जीने की कला सीखे हुए हों न तो लाइफ इज़ी रहे, परन्तु धर्म तो साथ में चाहिए ही। जीवन जीने की कला में धर्म मुख्य वस्तु है। और धर्म में भी दूसरा कुछ नहीं, मोक्षधर्म की भी बात नहीं, मात्र भगवान की आज्ञारूपी धर्म पालना है। महावीर भगवान या कृष्ण भगवान या जिस किसी भगवान को आप मानते हों, उनकी आज्ञाएँ क्या कहना चाहती हैं, वे समझकर पालो। अब सभी न पाली जाएँ तो जितनी पाली जा सकें, उतनी सच्ची। अब आज्ञा में ऐसा हो कि ब्रह्मचर्य पालना और हम शादी करके ले आएँ तो वह विरोधाभास हुआ कहलाएगा। असल में वे ऐसा नहीं कहते कि आप ऐसा विरोधाभासवाला करना। वे तो ऐसा कहते हैं कि तेरे से जितनी हमारी आज्ञाएँ एडजस्ट हों, उतनी एडजस्ट कर। अपने से दो आज्ञाएँ एडजस्ट नहीं हुई तो क्या सभी आज्ञाएँ रख देनी चाहिए? अपने से होता नहीं, इसीलिए क्या हमें छोड़ देना चाहिए? आपको कैसा लगता है? कोई दो नहीं पाल सकते तो दूसरी दो आज्ञाएँ पाल सकें तब भी बहुत हो गया।

लोगों को व्यवहारधर्म भी इतना ऊँचा मिलना चाहिए कि जिससे लोगों को जीवन जीने की कला आए। जीवन जीने की कला आए उसे ही व्यवहारधर्म कहा है। कोई तप, त्याग करने से वह कला आती नहीं है। यह तो अजीर्ण हुआ हो, तो कुछ उपवास जैसा करना। जिसे जीवन जीने की कला आ गई उसे तो पूरा व्यवहारधर्म आ गया, और निश्चयधर्म तो डेवलप होकर आए हों, तो प्राप्त होता है और इस अक्रम मार्ग में तो निश्चयधर्म ज्ञानी की कृपा से ही प्राप्त हो जाता है! 'ज्ञानी पुरुष' के पास तो अनंत ज्ञानकलाएँ होती हैं और अनंत प्रकार की बोधकलाएँ होती हैं! वे कलाएँ इतनी सुंदर होती हैं कि सर्व प्रकार के दु:खों से मुक्त करती हैं।

समझ कैसी? कि दुःखमय जीवन जीया!

'यह' ज्ञान ही ऐसा है कि जो सीधा करे और जगत् के लोग तो हमने सीधा डाला हो, फिर भी उल्टा कर देते हैं। क्योंकि समझ उल्टी है। उल्टी समझ है, इसीलिए उल्टा करते हैं, नहीं तो इस हिंदुस्तान में किसी जगह पर दुःख नहीं हैं? ये जो दुःख हैं वे नासमझी के दुःख हैं और लोग सरकार को कोसते हैं, भगवान को कोसते हैं कि ये हमें दुःख देते हैं! लोग तो बस कोसने का धंधा ही सीखे हैं।

अभी कोई नासमझी से, भूल से खटमल मारने की दवाई पी जाए तो वह दवाई उसे छोड़ देगी?

प्रश्नकर्ता : नहीं छोड़ेगी।

दादाश्री : क्यों, भूल से पी ली थी न? जान-बूझकर नहीं पी फिर भी वह नहीं छोड़ेगी?

प्रश्नकर्ता : नहीं। उसका असर नहीं छोड़ेगा।

दादाश्री : अब उसे मारता है कौन? वह खटमल मारने की दवाई उसे मारती है, भगवान नहीं मारता, यह दुःख देना या दूसरी कोई वस्तु करनी वह भगवान नहीं करता, पुद्‌गल ही दुःख देता है। यह खटमल की दवाई भी पुद्‌गल ही है न? हमें इसका अनुभव होता है या नहीं होता? इस काल के जीव पूर्वविराधक वृत्तियोंवाले हैं, पूर्वविराधक कहलाते हैं। पहले के काल के लोग तो खाने-पीने का नहीं हो, कपड़े-लत्ते नहीं हों, फिर भी चला लेते थे, और अभी तो कोई भी कमी नहीं, फिर भी इतनी अधिक कलह ही कलह! उसमें भी पति को इन्कम टैक्स, सेल्स टैक्स के लफड़े होते हैं, इसीलिए वहाँ के साहब से वे डरते हैं और घर पर बाईसाहब को पूछें कि आप क्यों डरती हो? तब वह कहे कि मेरे पति सख्त हैं।

चार वस्तुएँ मिली हों और कलह करें, वे सब मूर्ख, फूलिश कहलाते हैं। टाइम पर खाना मिलता है या नहीं मिलता? फिर चाहे जैसा हो, घी

वाला या बिना घी का, पर मिलता है न? टाइम पर चाय मिलती है या नहीं मिलती? फिर दो टाइम हो या एक टाइम, पर चाय मिलती है या नहीं मिलती? और कपड़े मिलते है या नहीं मिलते? कमीज़-पेन्ट, सर्दी में, ठंड में पहनने को कपड़े मिलते हैं या नहीं मिलते? पड़े रहने के लिए कोठड़ी है या नहीं? इतनी चार वस्तुएँ मिलें और फिर शोर मचाएँ, उन सभी को जेल में डाल देना चाहिए! फिर भी उसे शिकायत रहती हो तो उसे शादी कर लेनी चाहिए। शादी की शिकायत के लिए जेल में नहीं डाल देते। इन चार वस्तुओं के साथ इसकी ज़रूरत है। उमर हो जाए, उसे शादी के लिए मना नहीं कर सकते। पर इसमें भी, कितने ही शादी हो गई हो और उसे तोड़ डालते हैं, और फिर अकेले रहते हैं और दुःख मोल लेते हैं। हो चुकी शादी को तोड़ डालते हैं, किस तरह की पब्लिक है यह?! ये चार-पाँच वस्तुएँ न हों तो हम समझें कि इसे ज़रा अड़चन पड़ रही है। वह भी दुःख नहीं कहलाता, अड़चन कहलाता है। यह तो सारा दिन दुःख में निकालता है, सारा दिन *तरंग* (शेखचिल्ली जैसी कल्पनाएँ) करता ही रहता है। तरह-तरह के तरंग करता रहता है!

एक व्यक्ति का मुँह ज़रा हिटलर जैसा था, उसका नाक ज़रा मिलता-जुलता था। वह अपने आपको मन में खुद मान बैठा था कि हम तो हिटलर जैसे हैं! घनचक्कर! कहाँ हिटलर और कहाँ तू? क्या मान बैठा है? हिटलर तो यों ही आवाज़ दे, तो सारी दुनिया हिल उठे! अब इन लोगों के तरंगों का कहाँ पार आए?

इसलिए वस्तु की कोई ज़रूरत नहीं है, यह तो अज्ञानता का दुःख है। हम 'स्वरूपज्ञान' देते हैं, फिर दुःख नहीं रहते। हमारे पाँच वाक्यों में आप कहाँ नहीं रहते, उतना ही बस देखते रहना है! अपने टाइम पर खाना खाने का सब मिलता रहेगा। और वह फिर 'व्यवस्थित' है। यदि दाढ़ी अपने आप उगती है तो क्या तुझे खाने-पीने का नहीं मिलेगा? इस दाढ़ी की इच्छा नहीं है, फिर भी वह बढ़ती है न! अब आपको अधिक वस्तुओं की ज़रूरत नहीं है न? अधिक वस्तुओं की देखो न कितनी सारी उपाधी है! आपको स्वरूपज्ञान मिलने से पहले तरंगें आती थीं न?

तरंगो को आप पहचानते हो न?

प्रश्नकर्ता : जी हाँ, तरंगें आती थीं।

दादाश्री : भीतर तरह-तरह की तरंगें आया करती हैं, उन तरंगों को भगवान ने आकाशी फूल कहा है। आकाशी फूल कैसा था और कैसा नहीं था? उसके जैसी बात! सभी तरंग में और अनंग में, दो में ही पड़े हुए हैं। ऐसे, सीधी *धौल* (हथेली से मारना) नहीं मारते हैं। सीधी धौल मारें वह तो पद्धतिपूर्वक का कहलाता है। भीतर 'एक धौल लगा दूँगा' ऐसी अनंग धौल मारता रहता है। जगत् तरंगी भूतों में तड़पता रहता है। ऐसा होगा तो, ऐसा होगा और वैसा होगा।

ऐसे शौक की कहाँ ज़रूरत है?

जगत् पूरा 'अन्नेसेसरी' परिग्रह के सागर में डूब गया है। 'नेसेसरी' को भगवान परिग्रह कहते नहीं हैं। इसलिए हरएक को खुद की नेसेसिटी कितनी है, यह निश्चित कर लेना चाहिए। इस देह को मुख्य किसकी ज़रूरत है? मुख्य तो हवा की। वह उसे हर क्षण फ्री ऑफ कॉस्ट मिलती ही रहती है। दूसरा, पानी की ज़रूरत है। वह भी उसे फ्री ऑफ कॉस्ट मिलता ही रहता है। फिर ज़रूरत खाने की है। भूख लगती है मतलब क्या कि फायर हुई, इसीलिए उसे बुझाओ। इस फायर को बुझाने के लिए क्या चाहिए? तब ये लोग कहते हैं कि 'श्रीखंड, बासुंदी!' अरे नहीं, जो हो वह डाल दे न अंदर। खिचड़ी-कढ़ी डाली हो तब भी वह बुझ जाती है। फिर सेकन्डरी स्टेज की ज़रूरत में पहनने का, पड़े रहने का वह है। जीने के लिए क्या मान की ज़रूरत है? यह तो मान को ढूंढता है और मूर्च्छित होकर फिरता है। यह सब 'ज्ञानी पुरुष' के पास से जान लेना चाहिए न?

एक दिन यदि नल में चीनी डाला हुआ पानी आए तो लोग ऊब जाएँ। अरे! ऊब गए? तो कहे, 'हाँ, हमें तो सादा ही पानी चाहिए।' ऐसा यदि हो न तो उसे सच्चे की क़ीमत समझ में आए। ये लोग तो फेन्टा और कोकाकोला खोजते हैं। अरे, तुझे किसकी ज़रूरत है वह जान ले न! शुद्ध हवा, शुद्ध पानी और रात को खिचड़ी मिल गई तो यह देह शोर

मचाता है? नहीं मचाता। इसलिए ज़रूरतें क्या है, इतना निश्चित कर लो। जब कि ये लोग खास प्रकार की आइस्क्रीम ढूंढेंगे। कबीर साहब क्या कहते हैं?

'तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी फ़ेल।'

अन्नेसेसरी के लिए बेकार ही भागदौड़ करता है, वही फ़ेल कहलाता है। तू हिन्दुस्तान में रहता है और नहाने के लिए पानी माँगे तो हम तुझे फ़ेल नहीं कहेंगे?

'अपने फ़ेल मिटा दे, फिर गली-गली में फिर।'

इस देह की ज़रूरतें कितनी? शुद्ध घी, दूध चाहिए। तब वह शुद्ध नहीं देते और पेट में कचरा डालते हैं। वे फ़ेल किस काम के? ये सिर में क्या डालते हैं? शेम्पू, साबुन जैसा नहीं दिखता और पानी जैसा दिखता है, ऐसा सिर में डालेंगे। इन अक्कल के खज़ानो ने ऐसी खोज करी कि जो फ़ेल नहीं थे वे भी फ़ेल हो गए! इससे अंतरसुख घट गया! भगवान ने क्या कहा था कि बाह्यसुख और अंतरसुख के बीच में पाँच-दस प्रतिशत फर्क होगा तो चलेगा, पर यह नब्बे प्रतिशत का फर्क हो तब तो नहीं चलेगा। इतना बड़ा होने के बाद फिर वह फ़ेल होता है, मरना पड़ेगा। पर ऐसे नहीं मरा जाता और सहन करना पड़ता है। ये तो केवल फ़ेल ही हैं, अन्नेसेसरी ज़रूरतें खड़ी करी हैं।

एक घंटा बज़ार बंद हो गया हो जाए तो लोगों को चिंता हो जाती है! अरे, तुझे क्या चाहिए कि तुझे चिंता होती है? तो कहे कि, मुझे ज़रा आइस्क्रीम चाहिए, सिगरेट चाहिए। यह तो फ़ेल ही बढ़ाया न? यह अंदर सुख नहीं है इसलिए लोग बाहर ढूंढते रहते हैं। भीतर अंतरसुख की जो सिलक थी, वह भी आज चली गई है। अंतरसुख का बैलेन्स मत तोड़ना। यह तो जैसे अच्छा लगे वैसे *सिलक* (राहखर्च, पूँजी) खर्च कर डाली। तो फिर अंतरसुख का बैलेन्स ही किस तरह रहे? नकल करके जीना अच्छा या असल? ये बच्चे एक-दूसरे की नकल करते हैं। हमें नकल कैसी? ये फ़ॉरेन के लोग अपनी नकल कर जाते हैं। पर ये तो फ़ॉरेन के थोड़े

हिप्पी यहाँ आए और यहाँ के लोगों ने उनकी नकल कर डाली। इसे जीवन कहा ही कैसे जाए?

लोग 'गुड़ मिलता नहीं, चीनी मिलती नहीं' ऐसे शोर मचाते रहते हैं। खाने की चीज़ों के लिए क्या शोर मचाना चाहिए? खाने की चीज़ों को तो तुच्छ माना गया है। खाने का तो, पेट है तो मिल ही जाता है। दाँत है उतने कौर मिल ही जाते हैं। दाँत भी कैसे हैं! चीरने के, फाड़ने के, चबाने के, अलग-अलग। ये आँखें कितनी अच्छी हैं? करोड़ रुपये दें तब भी ऐसी आँखें मिलें? नहीं मिलें। अरे, लाख रुपये हों तब भी अभागा कहेगा, 'मैं दुःखी हूँ'। अपने पास इतनी सारी क़ीमती वस्तुएँ हैं, उनकी क़ीमत समझता नहीं है। ये सिर्फ आँख की ही क़ीमत समझे, तब भी सुख लगे।

ये दाँत भी अंत में तो दिवालिया निकालनेवाले हैं, पर आजकल बनावटी दाँत डालकर उन्हें पहले जैसे बना देते हैं। पर वह भूत जैसा लगता है। कुदरत को नये दाँत देने होते तो वह नहीं देती? छोटे बच्चे को नये दाँत देती है न?

इस देह को गेहूँ खिलाए, दाल खिलाई, फिर भी अंत में अरथी! सबकी अरथी! अंत में तो यह अरथी ही निकलनेवाली है। अरथी यानी कुदरत की ज़ब्ती। सब यहीं रखकर जाना है और साथ में क्या ले जाना है? घरवालों के साथ की, ग्राहकों के साथ की, व्यापारियों के साथ की गुत्थियाँ! भगवान ने कहा है कि 'हे जीवों! समझो, समझो, समझो। मनुष्यपन फिर से मिलना महादुर्लभ है।'

जीवन जीने की कला इस काल में नहीं होती है। मोक्ष का मार्ग तो जाने दो, पर जीवन जीना तो आना चाहिए न?

किसमें हित? निश्चित करना पड़ेगा

हमारे पास व्यवहार जागृति तो निरंतर होती है! कोई घड़ी की कंपनी मेरे पास से पैसे नहीं ले गई है। किसी रेडियोवाले की कंपनी मेरे पास

से पैसे नहीं ले गई है। हमने तो खरीदा ही नहीं। इन सबका अर्थ ही क्या है? मीनिंगलेस है। जिस घड़ी ने मुझे परेशान किया, जिसे देखते ही अंदर अत्यंत दुःख लगे, वह किस काम का? काफी कुछ लोगों को बाप को देखने से अंदर द्वेष और चिढ़ होती है। खुद पढ़ता नहीं हो, किताब एक तरफ रखकर खेल में पड़ा हो, और अचानक बाप को देखे तो उसे द्वेष और चिढ़ होती है, वैसे ही इस घड़ी को देखते ही चिढ़ होती है तो फिर रखो घड़ी को एक तरफ। और यह दूसरा सब, रेडियो, टी.वी. तो प्रत्यक्ष पागलपन है, प्रत्यक्ष 'मेडनेस' है।

प्रश्नकर्ता : रेडियो तो घर-घर में हैं।

दादाश्री : वह बात अलग है। जहाँ ज्ञान ही नहीं, वहाँ पर क्या हो? उसे ही मोह कहते हैं न? मोह किसे कहते हैं? बिना ज़रूरत की चीज़ को लाएँ और ज़रूरत की चीज़ में कमी करे, उसका नाम मोह कहलाता है।

यह किसके जैसा है, वह कहूँ? इस प्याज़ को चीनी की चासनी में डालकर दें तो ले आए, उसके जैसा है। अरे, तुझे प्याज़ खानी है या चासनी खानी है, वह पहले पक्का तो कर। प्याज़ वह प्याज़ होनी चाहिए। नहीं तो प्याज़ खाने का अर्थ ही क्या है? यह तो सारा पागलपन है। खुद का कोई डिसीज़न नहीं, खुद की सूझ नहीं और कुछ भान ही नहीं है! किसी को प्याज़ को चीनी की चासनी में खाते हुए देखे तो खुद भी खाता है! प्याज़ ऐसी वस्तु है कि चीनी की चासनी में डाला कि वह यूज़लेस हो जाता है। इसलिए किसी को भान नहीं है, बिलकुल बेभानपना है। खुद अपने आप को मन में मानता है कि मैं कुछ हूँ और उसे ना भी कैसे कहा जाए हमसे? ये आदिवासी भी मन में समझते हैं कि मैं कुछ हूँ। क्योंकि उसे ऐसा होता है कि इन दो गायों और इन दो बैलों का मैं ऊपरी हूँ! और उन चार जनों का वह ऊपरी ही माना जाएगा न? जब उन्हें मारना हो, तब वह मार सकता है, उसके लिए अधिकारी है वह। और किसी का ऊपरी न हो तो अंत में पत्नी का तो ऊपरी होगा ही। इसे कैसे पहुँच सकें? जहाँ विवेक नहीं, सार-असार का भान नहीं, वहाँ क्या हो? मोक्ष की बात तो जाने दो, पर सांसारिक हिताहित का भी भान नहीं है।

संसार क्या कहता है कि रेशमी चादर मुफ्त में मिलती हो तो वह लाकर बिछाओ मत और कॉटन मोल मिलती हो तब भी लाओ। अब आप पूछोगे कि इसमें क्या फायदा! तो कहे, यह मुफ्त लाने की आदत पड़ने के बाद यदि कभी नहीं मिले तो मुश्किल में पड़ जाएगा। इसलिए ऐसी आदत रखना कि हमेशा मिलता रहे। इसलिए कॉटन की खरीदकर लाना। नहीं तो आदत पड़ने के बाद मुश्किल लगेगा। यह जगत् ही सारा ऐसा हो गया है, उपयोग नाम को भी नहीं मिलता। बड़े-बड़े आचार्य महाराजों को कहें कि साहब ये चार गद्दों में आज सो जाइए। तो उन्हें महाउपाधि लगेगी, नींद ही नहीं आएगी सारी रात! क्योंकि दरी पर सोने की आदत पड़ी हुई है न! इन्हें दरी की आदत हो गई है और ये चार गद्दो की आदतवाले हैं। भगवान को तो दोनों ही कबूल नहीं हैं। साधु के तप को या गृहस्थी के विलास को भगवान कबूल करते नहीं। वे तो कहते हैं कि यदि आपका उपयोगपूर्वक होगा तो वह सच्चा। उपयोग नहीं और ऐसे ही आदत पड़ जाए तो सब मीनिंगलेस कहलाता है।

बातें ही समझने की है कि इस रास्ते पर ऐसा है और इस रास्ते पर ऐसा है। फिर निश्चित करना है कि कौन-से रास्ते जाना चाहिए! नहीं समझ में आए तो 'दादा' को पूछना। तब दादा आपको बताएँगे कि ये तीन रास्ते जोखिमवाले हैं और यह रास्ता बिना जोखिम का है, उस रास्ते पर हमारे आशीर्वाद लेकर चलना है।

और ऐसी *गोठवणी* से सुख आता है

एक व्यक्ति मुझे कहता है कि, 'मुझे कुछ समझ नहीं पड़ती है। कुछ आशीर्वाद मुझे दीजिए।' उसके सिर पर हाथ रखकर मैंने कहा, 'जा, आज से सुख की दुकान खोल। अभी तेरे पास जो है वह दुकान खाली कर डाल।' सुख की दुकान मतलब क्या? सुबह से उठे तब से दूसरे को सुख देना, दूसरा व्यापार नहीं करना। अब उस मनुष्य को तो यह बहुत अच्छी तरह से समझ में आ गया। उसने तो बस यह शुरू कर दिया, इसलिए वह तो खूब आनंद में आ गया! सुख की दुकान खोले न, तब फिर तेरे भाग में सुख ही रहेगा और लोगों के भाग में भी सुख ही जाएगा।

हमारी हलवाई की दुकान हो फिर किसी के वहाँ जलेबी मोल लेने जाना पड़ता है? जब खानी हो तब खा सकते हैं। दुकान ही हलवाई की हो वहाँ फिर क्या? इसलिए तू सुख की ही दुकान खोलना। फिर कोई उपाधी ही नहीं।

आपको जिसकी दुकान खोलनी हो उसकी खोली जा सकती है। यदि हररोज़ न खोली जा सके तो सप्ताह में एक दिन रविवार के दिन तो खोलो! आज रविवार है, 'दादा' ने कहा है कि सुख की दुकान खोलनी है। आपको सुख के ग्राहक मिल आएँगे। 'व्यवस्थित' का नियम ही ऐसा है कि ग्राहक मिलवा देता है। व्यवस्थित का नियम यह है कि तूने जो निश्चित किया हो उस अनुसार तुझे ग्राहक भिजवा देता है।

जिसे जो अच्छा लगता हो, उसे उसकी दुकान खोलनी चाहिए। कितने तो उकसाते ही रहते हैं। उसमें से उन्हें क्या मिलता है? किसी को हलवाई का शौक हो तो वह किसकी दुकान खोलेगा? हलवाई की ही न। लोगों को किसका शौक है? सुख का। तो सुख की ही दुकान खोल, जिससे लोग सुख पाएँ और खुद के घरवाले भी सुख भोगें। खाओ, पीओ और मज़े करो। आनेवाले दु:ख के फोटो मत उतारो। सिर्फ नाम सुना कि चंदूभाई आनेवाले हैं, अभी तक आए नहीं हैं, सिर्फ पत्र ही आया है, तब से ही उसके फोटो खींचने शुरू कर देते हैं।

ये 'दादा' तो 'ज्ञानी पुरुष' उनकी दुकान कैसी चलती है? पूरा दिन! यह दादा की सुख की दुकान, उसमें किसी ने पत्थर डाला हो तब भी फिर उसे गुलाबजामुन खिलाते हैं। सामनेवाले को थोड़े ही पता है कि यह सुख की दुकान है इसलिए यहाँ पत्थर नहीं मारा जाए? वह तो, निशाना लगाए बिना जहाँ मन में आया वहाँ मारता है।

हमें किसी को दु:ख नहीं देना है, ऐसा निश्चित किया फिर भी देनेवाला तो दे ही जाएगा न? तब क्या करेगा तू? देख मैं तुझे एक रास्ता बताऊँ। तुझे सप्ताह में एक दिन 'पोस्ट ऑफिस' बंद रखना है। उस दिन किसी का मनीऑर्डर स्वीकारना नहीं है और किसी को मनीऑर्डर करना

भी नहीं है। और यदि कोई भेजे तो उसे एक तरफ रख देना और कहना कि आज पोस्ट ऑफिस बंद है, कल बात करेंगे। हमारा तो कायम पोस्ट ऑफिस बंद ही होता है।

ये दिवाली के दिन सब किसलिए समझदार हो जाते हैं? उनकी 'बिलीफ़' बदल जाती है, इसलिए। आज दिवाली का दिन है, आनंद में जाने देना है ऐसा निश्चित करते हैं, इसलिए उनकी बिलीफ़ बदल जाती है, इसलिए आनंद में रहते हैं। 'हम' मालिक हैं, इसलिए *गोठवणी* (सेटिंग) कर सकते हैं। तूने निश्चित किया हो कि आज मुझे हलकापन नहीं करना है। तो तुझसे हलकापन नहीं होगा। ये हफ्ते में एक दिन हमें नियम में रहना है, पोस्ट ऑफिस बंद करके एक दिन बैठना है। फिर चाहे लोग चिल्लाएँ कि आज पोस्ट ऑफिस बंद है?

बैर खपे और आनंद भी रहे

इस जगत् में किसी भी जीव को किंचित् मात्र दुःख नहीं देने की भावना हो तभी कमाई कहलाती है। ऐसी भावना रोज़ सुबह करनी चाहिए। कोई गाली दे, वह हमें पसंद नहीं हो तो उसे जमा ही करना चाहिए, पता नहीं लगाना है कि मैंने उसे कब दी थी। हमें तो तुरन्त ही जमा कर लेनी चाहिए कि हिसाब पूरा हो गया। और यदि चार वापिस दे दीं तो बहीखाता चलता ही रहेगा, उसे ऋणानुबंध कहते हैं। बही बंद की यानी खाता बंद। ये लोग तो क्या करते हैं कि उसने एक गाली दी हो तो यह ऊपर से चार देता है! भगवान ने क्या कहा है कि जो रकम तुझे अच्छी लगती हो वह उधार दे और अच्छी नहीं लगती हो, तो उधार मत देना। कोई व्यक्ति कहे कि आप बहुत अच्छे हो तो हम भी कहें कि, 'भाई आप भी बहुत अच्छे हो।' ऐसी अच्छी लगनेवाली बातें उधार दो तो चलेगा।

यह संसार, पूरा हिसाब चुकाने का कारखाना है। बैर तो सास बनकर, बहू बनकर, बेटा बनकर, अंत में बैल बनकर भी चुकाना पड़ता है। बैल लेने के बाद, रुपये बारह सौ चुकाने के बाद, फिर दूसरे दिन वह मर जाता है! ऐसा है यह जगत्!! अनंत जन्म बैर में ही गए हैं! यह जगत् बैर से

खड़ा रहा है! ये हिन्दू तो घर में बैर बाँधते हैं और इन मुस्लिमों को देखो तो वे घर में बैर नहीं बाँधते हैं, बाहर झगड़ा कर आते हैं। वे जानते हैं कि हमें तो इसी के इसी कमरे में और इसी के साथ ही रात को पड़े रहना है, वहाँ झगड़ा करना कैसे पुसाए? जीवन जीने की कला क्या है कि संसार में बैर न बंधे और छूट जाएँ। तो भाग तो ये साधु-संन्यासी भी जाते ही हैं न? भाग नहीं जाना चाहिए। यह तो जीवन संग्राम है, जन्म से ही संग्राम शुरू! वहाँ लोग मौज-मज़े में पड़ गए हैं!

घर के सभी लोगों के साथ, आसपास, ऑफिस में सब लोगों के साथ 'समभाव से निकाल' करना। घर में नहीं भाता हो ऐसा भोजन थाली में आया, वहाँ समभाव से निकाल करना। किसी को परेशान मत करना, जो थाली में आए वह खाना। जो सामने आया वह संयोग है और भगवान ने कहा है कि संयोग को धक्का मारेगा तो वह धक्का तुझे लगेगा! इसलिए हमें नहीं भाती, ऐसी वस्तु परोसी हो तब भी उसमें से दो चीज़ खा लेते हैं। ना खाएँ तो दो लोगों के साथ झगड़े हों। एक तो जो लाया हो, जिसने बनाया हो, उसके साथ झंझट हो, तिरस्कार लगे, और दूसरी तरफ खाने की चीज़ के साथ। खाने की चीज़ कहती है कि मैंने क्या गुनाह किया? मैं तेरे पास आई हूँ, और तू मेरा अपमान किसलिए करता है? तुझे ठीक लगे उतना ले, पर अपमान मत करना मेरा। अब उसे हमें मान नहीं देना चाहिए? हमें तो दे जाएँ, तब भी हम उसे मान देते हैं। क्योंकि एक तो मिलता नहीं है और मिल जाए तो मान देना पड़ता है। यह खाने की चीज़ दी और उसकी आपने कमी निकाली तो इसमें सुख घटेगा या बढ़ेगा?

प्रश्नकर्ता : घटेगा।

दादाश्री : घटे वह व्यापार तो नहीं करोगे न? जिससे सुख घटे ऐसा व्यापार नहीं ही किया जाए न? मुझे तो बहुत बार नहीं भाती हो ऐसी सब्ज़ी हो वह खा लूँ और ऊपर से कहूँ कि आज की सब्ज़ी बहुत अच्छी है।

प्रश्नकर्ता : वह द्रोह नहीं कहलाता? न भाता हो और हम कहें

कि भाता है, तो वह गलत तरह से मन को मनाना नहीं हुआ?

दादाश्री : गलत तरह से मन को मनाना नहीं है। एक तो 'भाता है' ऐसा कहें तो अपने गले उतरेगा। 'नहीं भाता' कहा तो फिर सब्ज़ी को गुस्सा चढ़ेगा। बनानेवाले को गुस्सा चढ़ेगा। और घर के बच्चे क्या समझेंगे कि ये दख़लवाले व्यक्ति हमेशा ऐसा ही किया करते हैं? घर के बच्चे अपनी आबरू (?) देख लेते हैं।

हमारे घर में भी कोई जानता नहीं कि 'दादा' को यह भाता नहीं या भाता है। यह रसोई बनानी वह क्या बनानेवाले के हाथ का खेल है? वह तो खानेवाले के व्यवस्थित के हिसाब से थाली में आता है, उसमें दख़ल नहीं करनी चाहिए।

साहिबी, फिर भी भोगते नहीं

ये होटल में खाते हैं तो बाद में पेट में मरोड़ होते हैं। होटल में खाने के बाद धीरे-धीरे ऐसे सिमट जाता है और एक तरफ पड़ा रहता है। फिर वह जब परिपाक होता है, तब मरोड़ उठते हैं। ऐंठन हो, वह कितने ही वर्षों के बाद परिपाक होता है। हमें तो यह अनुभव हुआ उसके बाद से सबसे कहते कि होटल का नहीं खाना चाहिए। हम एक बार मिठाई की दुकान पर खाने गए थे। वह मिठाई बना रहा था उसमें पसीना पड़ रहा था, कचरा गिर रहा था! आजकल तो घर पर भी खाने का बनाते हैं, वह कहाँ चोखा होता है? आटा गूँदते हैं, तब हाथ नहीं धोए होते, नाख़ून में मैल भरा होता है। आजकल नाख़ून काटते नहीं न? यहाँ कितने ही आते हैं, उनके नाख़ून लंबे होते हैं, तब मुझे उन्हें कहना पड़ता है, 'बहन, इसमें आपको लाभ है क्या? लाभ हो तो नाख़ून रहने देना। तुझे कोई ड्रॉइंग का काम करना हो तो रहने देना।' तब वह कहे कि नहीं, कल काटकर आऊँगी। इन लोगों को कोई सेन्स ही नहीं है! नाख़ून बढ़ाते हैं और कान के पास रेडियो लेकर फिरते हैं! खुद का सुख किसमें है वह भान ही नहीं है, और खुद का भी भान कहाँ है? वह तो लोगों ने जो भान दिया वही भान है।

बाहर कितने सारे एशो-आराम भोगने के हैं! ये लाख रुपये की डबलडेकर बस में आठ आने दें तो यहाँ से ठेठ चर्चगेट तक बैठकर जाने का मिलता है! उसमें गद्दी फिर कितनी अच्छी! अरे! खुद के घर पर भी ऐसी नहीं होती! अब इतने अच्छे पुण्य मिले हैं फिर भी भोगना नहीं आता है, नहीं तो हिन्दुस्तान के मनुष्य को लाख रुपये की बस कहाँ से भाग्य में हो? यह मोटर में जाते हो तो कहीं धूल उड़ती है? ना। वह तो रास्ते धूल बिना के हैं। चले तो पैरों पर भी धूल नहीं चढ़ती। बादशाह को भी उसके समय में रास्ते धूलवाले थे, वह बाहर जाकर आए तो धूल से भर जाता था! और इसे बादशाह से भी ज़्यादा साहिबी है, परन्तु भोगना ही नहीं आता न? यह बस में बैठा हो तब भी अंदर चक्कर शुरू!

संसार सहज ही चले, वहाँ...

कुछ दुःख जैसा है ही नहीं और जो है वे नासमझी के दुःख हैं। इस दुनिया में कितने सारे जीव हैं। असंख्य जीव हैं! परन्तु किसी की पुकार नहीं कि हमारे यहाँ अकाल पड़ा है! और ये मूर्ख हर साल शोर मचाया करते हैं! इस समुद्र में कोई जीव भूखा मर गया हो ऐसा है? ये कौए वगैरह भूखे मर जाते हैं ऐसा है? ना, वे भूख से नहीं मरनेवाले, वह तो कहीं टकरा गए हों, एक्सिडेन्ट हो गया हो, या फिर आयुष्य पूरा हो गया हो, तब मर जाते हैं। कोई कौआ आपको दुःखी दिखा है? कोई सूखकर दुबला हो गया हो ऐसा कौआ देखा है आपने? इन कुत्तों को कभी नींद की गोलियाँ खानी पड़ती हैं? वे तो कितने आराम से सो जाते हैं। ये अभागे ही बीस-बीस गोलियाँ सोने के लिए खाते हैं! नींद तो कुदरत की भेंट है, नींद में तो सचमुच का आनंद होता है! और ये डॉक्टर तो बेहोश होने की दवाईयाँ देते हैं। गोलियाँ खाकर बेहोश होना, वह तो शराब पीते हैं, उसके जैसा है। कोई ब्लडप्रेशरवाला कौआ देखा है आपने! यह मनुष्य नाम का जीव अकेला ही दुःखी है। इस मनुष्य अकेले को ही कॉलेज की ज़रूरत है।

ये चिड़ियाँ सुंदर घोंसला बनाती हैं, तो उन्हें कौन सिखाने गया था?

ये संसार चलाना तो अपने आप ही आ जाए ऐसा है। हाँ, 'स्वरूपज्ञान' प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थ करने की ज़रूरत है। संसार को चलाने के लिए कुछ भी करने की ज़रूरत नहीं है। ये मनुष्य अकेले ही बहुत अधिक अक्कलवाले हैं। इन पशु-पक्षियों के क्या बीवी-बच्चे नहीं हैं? उन्हें शादी करवानी पड़ती है? यह तो मनुष्यों के ही पत्नी-बच्चे हुए हैं। मनुष्य ही शादी करवाने में पड़े हुए हैं। पैसे इकट्ठे करने में पड़े हुए हैं। अरे, आत्मा जानने के पीछे मेहनत कर न! दूसरे किसी के लिए मेहनत-मज़दूरी करने जैसी है ही नहीं। अभी तक जो कुछ किया है, वह दुःख मनाने जैसा किया है। यह बच्चे को चोरी करना कौन सिखाता है? सब बीज में ही रहा हुआ है। यह नीम हरएक पत्ते में कड़वा किसलिए है? उसके बीज में ही कड़वाहट रही हुई है। ये मनुष्य अकेले ही दुःखी-दुःखी हैं, परन्तु उसमें उनका कोई दोष नहीं। क्योंकि चौथे आरे तक सुख था, और यह तो पाँचवाँ आरा, इस *आरे* (कालचक्र का बारहवाँ हिस्सा) का नाम ही दूषमकाल! इसलिए महादुःख उठाकर भी समता उत्पन्न नहीं होती है। काल का नाम ही दूषम!! फिर सुषम ढूंढना वह भूल है न?

२. योग-उपयोग परोपकाराय

जीवन में, महत् कार्य ही ये दो

मनुष्य का जन्म किसलिए है? खुद का यह बंधन, हमेशा का बंधन टूटे इस हेतु के लिए है, 'एब्सोल्यूट' होने के लिए है और यदि यह 'एब्सोल्यूट' होने का ज्ञान प्राप्त नहीं हो, तो तू दूसरों के लिए जीना। ये दो ही कार्य करने के लिए हिन्दुस्तान में जन्म है। ये दो कार्य लोग करते होंगे? लोगों ने तो मिलावट करके मनुष्य में से जानवर में जाने की कला खोज निकाली है।

परोपकार से पुण्य साथ में

जब तक मोक्ष ना मिले, तब तक पुण्य अकेला ही मित्र समान काम करता है और पाप-दुश्मन के समान काम करता है। अब आपको दुश्मन रखना है या मित्र रखना है? वह आपको जो अच्छा लगे, उसके अनुसार निश्चित करना है। और मित्र का संयोग कैसे हो, वह पूछ लेना और दुश्मन का संयोग कैसे जाए, वह भी पूछ लेना। यदि दुश्मन पसंद हो उसका संयोग कैसे हो वह पूछे, तो हम उसे कहेंगे कि जितना चाहे उतना उधार करके घी पीना, चाहे जहाँ भटकना, और तुझे ठीक लगे वैसे मज़े करना, फिर आगे जो होगा देखा जाएगा! और पुण्यरूपी मित्र चाहिए तो हम बता दें कि भाई इस पेड़ के पास से सीख ले। कोई वृक्ष अपना फल खुद खा जाता है? कोई गुलाब अपना फूल खा जाता होगा? थोड़ा-सा तो खाता होगा, नहीं? हम नहीं हों तब रात को खा जाता होगा, नहीं? नहीं खा जाता?

प्रश्नकर्ता : नहीं खाता।

दादाश्री : ये पेड़-पौधे तो मनुष्यों को फल देने के लिए मनुष्यों

की सेवा में हैं। अब पेड़ों को क्या मिलता है? उनकी ऊर्ध्वगति होती है और मनुष्य आगे बढ़ते हैं, उनकी हेल्प लेकर! ऐसा मानो कि, हमने आम खाया, उसमें आम के पेड़ का क्या गया? और हमें क्या मिला? हमने आम खाया, इसलिए हमें आनंद हुआ। उससे हमारी वृत्तियाँ जो बदलीं, उससे हम सौ रुपये जितना अध्यात्म में कमाते हैं। अब आम खाया, इसलिए उसमें से पाँच प्रतिशत आम के पेड़ को आपके हिस्से में से जाता है और पँचानवे प्रतिशत आपके हिस्से में रहता है। यानी वे लोग हमारे हिस्से में से पाँच प्रतिशत ले लेते हैं और वे बेचारे ऊर्ध्वगति में जाते हैं और हमारी अधोगति नहीं होती है, हम भी आगे बढ़ते हैं। इसलिए ये पेड़ कहते हैं कि हमारा सबकुछ भोगो, हरएक प्रकार के फल-फूल भोगो।

इसलिए यह संसार आपको पुसाता हो, संसार आपको पसंद हो, संसार की चीज़ों की इच्छा हो, संसार के विषयों की वांछना हो तो इतना करो, 'योग उपयोग परोपकाराय।' योग यानी इस मन-वचन-काया का योग, और उपयोग यानी बुद्धि का उपयोग, मन का उपयोग करना, चित्त का उपयोग करना, ये सभी दूसरों के लिए उपयोग करना और दूसरों के लिए नहीं खर्च करते, तब भी हमारे लोग आख़िर में घरवालों के लिए भी खर्च करते हैं न? इस कुतिया को खाने का क्यों मिलता है? जिन बच्चों के भीतर भगवान रहे हैं, उन बच्चों की वह सेवा करती है। इसलिए उसे सब मिल जाता है। इस आधार पर संसार सारा चल रहा है। इस पेड़ को खुराक कहाँ से मिलती है? इन पेड़ों ने कोई पुरुषार्थ किया है? वे तो ज़रा भी 'इमोशनल' नहीं हैं। वे कभी 'इमोशनल' होते हैं? वे तो कभी आगे-पीछे होते ही नहीं। उन्हें कभी ऐसा होता नहीं कि यहाँ से एक मील दूर विश्वामित्री नदी है, तो वहाँ जाकर पानी पी आऊँ!

परोपकार, परिणाम में लाभ ही

प्रश्नकर्ता : इस संसार में अच्छे कृत्य कौन-से कहलाते हैं? उसकी परिभाषा दी जा सकती है?

दादाश्री : हाँ, अच्छे कृत्य तो ये पेड़ सभी करते हैं। वे बिलकुल

अच्छे कृत्य करते हैं। पर वे खुद कर्त्ता भाव में नहीं हैं। ये पेड़ जीवित हैं। सभी दूसरों के लिए अपने फल देते हैं। आप अपने फल दूसरों को दे दो। आपको अपने फल मिलते रहेंगे। आपके जो फल उत्पन्न हों-दैहिक फल, मानसिक फल, वाचिक फल, 'फ्री ऑफ कोस्ट' लोगों को देते रहो तो आपको आपकी हरएक वस्तु मिल जाएगी। आपकी जीवन की ज़रूरतों में किंचित् मात्र अड़चन नहीं आएगी और जब वे फल आप अपने आप खा जाओगे तो अड़चन आएगी। यदि आम का पेड़ अपने फल खुद खा जाए तो उसका जो मालिक होगा, वह क्या करेगा? उसे काट देगा न? इसी तरह ये लोग अपने फल खुद खा जाते हैं। इतना ही नहीं ऊपर से फ़ीस माँगते हैं। एक अर्ज़ी लिखने के बाईस रुपये माँगते हैं! जिस देश में 'फ्री ऑफ कोस्ट' वकालत करते थे और ऊपर से अपने घर भोजन कराकर वकालत करते थे, वहाँ यह दशा हुई है। यदि गाँव में झगड़ा हुआ हो, तो नगरसेठ उन दो झगड़नेवालों से कहता, 'भैया चन्दूलाल आज साढ़े दस बजे आप घर आना और नगीनदास, आप भी उसी समय घर आना।' और नगीनदास की जगह यदि कोई मज़दूर होता या किसान होता, जो लड़ रहे होते तो उनको घर बुला लेता। दोनों को बिठाकर, दोनों को सहमत करवा देता। जिसके पैसे चुकाने हों, उसे थोड़े नक़द दिलवाकर, बाकी के किश्तों में देने की व्यवस्था करवा देता। फिर दोनों से कहता, 'चलो, मेरे साथ भोजन करने बैठ जाओ।' दोनों को खाना खिलाकर घर भेज देता। हैं आज ऐसे वकील? इसलिए समझो और समय को पहचानकर चलो। और यदि खुद, खुद के लिए ही करे, तो मरते समय दुःखी होता है। जीव निकलता नहीं और बंगले-मोटर छोड़कर जा नहीं पाता!

और यह लाइफ यदि परोपकार के लिए जाएगी तो आपको कोई भी कमी नहीं रहेगी। किसी तरह की आपको अड़चन नहीं आएगी। आपकी जो-जो इच्छाएँ हैं, वे सभी पूरी होंगी और ऐसे उछल-कूद करोगे, तो एक भी इच्छा पूरी नहीं होगी। क्योंकि वह रीति, आपको नींद ही नहीं आने देगी। इन सेठों को तो नींद ही नहीं आती है, तीन-तीन, चार-चार दिन तक सो ही नहीं पाते, क्योंकि लूटपाट ही की है, जिस-तिस की।

प्रश्नकर्ता : परोपकारी मनुष्य लोगों के भले के लिए कहे तो भी लोग वह समझने के लिए तैयार ही नहीं हैं, उसका क्या?

दादाश्री : ऐसा है कि यदि परोपकार करनेवाला सामनेवाले की समझ देखे तो वह वकालत कहलाती है। इसलिए सामनेवाले की समझ देखनी ही नहीं चाहिए। यह आम का पेड़ है, वह फल देता है। तब वह आम का पेड़ अपने कितने आम खाता होगा?

प्रश्नकर्ता : एक भी नहीं।

दादाश्री : तो वे सारे आम किसके लिए हैं?

प्रश्नकर्ता : दूसरों के लिए।

दादाश्री : हाँ, तब वह आम का पेड़ देखता है कि यह लुच्चा है कि भला है, ऐसा देखता है? जो आए और ले जाए उसके वे आम, मेरे नहीं। परोपकारी जीवन तो वह जीता है।

प्रश्नकर्ता : पर जो उपकार करे उसके ऊपर ही लोग दोषारोपण करते हैं, फिर भी उपकार करना?

दादाश्री : हाँ, वही देखने का है न! अपकार पर उपकार करे वही सच्चा है। ऐसी समझ लोग कहाँ से लाए? ऐसी समझ हो तब तो फिर काम ही हो गया! यह परोपकारी की तो बहुत ऊँची स्थिति है, यही सारे मनुष्य जीवन का ध्येय है। और हिन्दुस्तान में दूसरा ध्येय, अंतिम ध्येय मोक्षप्राप्ति का है।

प्रश्नकर्ता : परोपकार के साथ 'इगोइज़म' की संगति होती है?

दादाश्री : हमेशा परोपकार जो करता है, उसका 'इगोइज़म' नोर्मल ही होता है, उसका वास्तविक 'इगोइज़म' होता है और जो कोर्ट में डेढ़ सौ रुपये फ़ीस लेकर दूसरों का काम करते हों, उनका 'इगोइज़म' बहुत बढ़ा हुआ होता है। अर्थात् जो 'इगोइज़म' बढ़ाने का नहीं होता, वह 'इगोइज़म' बहुत बढ़ गया होता है।

इस जगत् का कुदरती नियम क्या है कि आप अपने फल दूसरों को देंगे तो कुदरत आपका चला लेगी। यही गुह्य साइन्स है। यह परोक्ष धर्म है। बाद में प्रत्यक्ष धर्म आता है, आत्मधर्म अंत में आता है। मनुष्य जीवन का हिसाब इतना ही है! अर्क़ इतना ही है कि मन-वचन-काया दूसरों के लिए वापरो।

३. दु:ख वास्तव में है?

'राइट बिलीफ़' वहाँ दु:ख नहीं

प्रश्नकर्ता : दादा, दु:ख के विषय में कुछ कहिए। यह दु:ख किसमें से उत्पन्न होता है?

दादाश्री : आप यदि आत्मा हो तो आत्मा को दु:ख होता ही नहीं कभी भी और आप चंदूलाल हो तो दु:ख होता है। आप आत्मा हो तो दु:ख होता नहीं, उल्टे दु:ख हो, वह खतम हो जाता है। 'मैं चंदूलाल हूँ' वह 'रोंग बिलीफ़' है। यह मेरी वाइफ है, ये मेरी मदर हैं, फादर हैं, चाचा हैं, या मैं एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट का व्यापारी हूँ, ये सभी तरह-तरह की रोंग बिलीफ़ हैं। इन सभी रोंग बिलीफ़ों के कारण दु:ख उत्पन्न होता है। यदि रोंग बिलीफ़ चली जाए और राइट बिलीफ़ बैठ जाए तो जगत् में कोई दु:ख है ही नहीं। और आपके जैसे (खाते-पीते सुखी घर के) को दु:ख होता नहीं है। यह तो सब बिना काम के नासमझी के दु:ख है।

दु:ख तो कब माना जाता है?

दु:ख किसे कहते हैं? इस शरीर को भूख लगे, तब फिर खाने का आठ घंटे-बारह घंटे न मिले तब दु:ख माना जाता है। प्यास लगने के बाद दो-तीन घंटे पानी नहीं मिले तो वह दु:ख जैसा लगता है। संडास लगने के बाद संडास में जाने नहीं दे, तो फिर उसे दु:ख होगा कि नहीं होगा? संडास से भी अधिक, ये पेशाबघर हैं. वे सब बंद कर दें न, तो लोग सभी शोर मचाकर रख दें। इन पेशाबघरों का तो महान दु:ख है लोगों को। इन सभी दु:खों को दु:ख कहा जाता है।

प्रश्नकर्ता : यह सब ठीक है, परन्तु अभी संसार में देखें तो दस

में से नौ लोगों को दु:ख है।

दादाश्री : दस में से नौ नहीं, हज़ार में दो लोग सुखी होंगे, थोड़े-बहुत शांति में होंगे। बाकी सब रात-दिन जलते ही रहते हैं। शक्करकंद भट्ठी में रखे हों, तो कितनी तरफ से सिकते हैं?

प्रश्नकर्ता : यह दु:ख जो कायम है, उसमें से फायदा किस तरह उठाना चाहिए?

दादाश्री : इस दु:ख पर विचार करने लगे, तो दु:ख जैसा नहीं लगेगा। दु:ख का यदि यथार्थ प्रतिक्रमण करोगे तो दु:ख जैसा नहीं लगेगा। यह बिना सोचे ठोकमठोक किया है कि यह दु:ख है, यह दु:ख है! ऐसा मानो न, कि आपके वहाँ बहुत समय का पुराना सोफासेट है। अब आपके मित्र के घर सोफासेट हो ही नहीं, इसलिए वह आज नयी तरह का सोफासेट लाया। वह आपकी पत्नी देखकर आईं। फिर घर आकर आपको कहे कि आपके मित्र के घर पर कितना सुंदर सोफासेट है और अपने यहाँ खराब हो गए हैं। तो यह दु:ख आया! घर में दु:ख नहीं था वह, देखने गए वहाँ से दु:ख लेकर आए।

आपने बंगला नहीं बनवाया हो और आपके मित्र ने बंगला बनवाया और आपकी वाइफ वहाँ जाए, देखे, और कहे कि कितना अच्छा बंगला उन्होंने बनवाया। और हम तो बिना बंगले के हैं! वह दु:ख आया!!! यानी कि ये सब दु:ख खड़े किए हुए हैं।

मैं न्यायाधीश होऊँ तो सबको सुखी करके सज़ा करूँ। किसी को उसके गुनाह के लिए सज़ा करने की आए, तो पहले तो मैं उसे पाँच वर्ष से कम सज़ा हो सके ऐसा नहीं है, ऐसी बात करूँ। फिर वकील कम करने का कहे, तब मैं चार वर्ष, फिर तीन वर्ष, दो वर्ष, ऐसे करते-करते अंत में छह महीने की सज़ा करूँ। इससे वह जेल में तो जाए, पर सुखी हो। मन में सुखी हो कि छह महीने में ही पूरा हो गया, यह तो मान्यता का ही दु:ख है। यदि उसे पहले से ही, छह महीने की सज़ा होगी, ऐसा कहने में आए तो उसे वह बहुत ज़्यादा लगे।

'पेमेन्ट' में तो समता रखनी चाहिए

यह आपको, गद्दी पर बैठे हों वैसा सुख है, फिर भी भोगना नहीं आए तब क्या हो? अस्सी रुपये मन के भाववाले बासमती हो उसके अंदर रेती डालते हैं। यह दु:ख आया हो तो उसे ज़रा कहना तो चाहिए न, 'यहाँ क्यों आए हो? हम तो दादा के हैं। आपको यहाँ आना नहीं है। आप जाओ दूसरी जगह। यहाँ कहाँ आए आप? आप घर भूल गए।' इतना उनसे कहें तो वे चले जाते हैं। यह तो आपने बिलकुल अहिंसा करी(!) दु:ख आएँ तो उन्हें भी घुसने दें? उन्हें तो निकाल बाहर करना चाहिए, उसमें अहिंसा टूटती नहीं है। दु:ख का अपमान करें तो वे चले जाते हैं। आप तो उसका अपमान भी नहीं करते। इतने अधिक अहिंसक नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : दु:ख को मनाएँ तो नहीं जाएगा?

दादाश्री : ना। उसे मनाना नहीं चाहिए। उसे पटाएँ तो वह पटाया नहीं जा सके ऐसा है। उसे तो आँखें दिखानी पड़ती हैं। वह नपुंसक जाति है। यानी उस जाति का स्वभाव ही ऐसा है। उसे अटाने-पटाने जाएँ तो वह ज़्यादा तालियाँ बजाता है और अपने पास ही पास आता जाता है।

'वारस अहो महावीरना, शूरवीरता रेलावजो,
कायर बनो ना कोई दी, कष्टो सदा कंपावजो।'

हम घर में बैठे हों, और कष्ट आएँ, तो वे हमें देखकर काँप जाएँ और समझें कि हम यहाँ कहाँ आ फँसे! हम घर भूल गए लगते हैं! ये कष्ट हमारे मालिक नहीं, वे तो नौकर हैं।

यदि कष्ट हमसे काँपे नहीं तो हम 'दादा के' कैसे? कष्ट से कहें कि, 'दो ही क्यों आए? पाँच होकर आओ। अब तुम्हारे सभी पेमेन्ट कर दूँगा।' कोई हमें गालियाँ दे तो अपना ज्ञान उसे क्या कहता है? "वह तो 'तुझे' पहचानता ही नहीं।" उल्टे 'तुझे' 'उसे' कहना है कि 'भाई कोई भूल हुई होगी, इसीलिए गालियाँ दे गया। इसलिए शांति रखना।' इतना किया कि तेरा 'पेमेन्ट' हो गया! ये लोग तो कष्ट आते हैं तो शोर मचा देते हैं कि 'मैं मर गया!' ऐसा बोलते हैं। मरना तो एक ही बार है और

बोलते हैं सौ-सौ बार कि 'मैं मर गया?' अरे जीवित है और किसलिए मर गया हूँ, ऐसा बोलता है? मरने के बाद बोलना न कि मैं मर गया। ज़िन्दा कभी मर जाता है? 'मैं मर गया' यह वाक्य तो सारी ज़िन्दगी में बोलना नहीं है। सच्चे दु:ख को जानना चाहिए कि दु:ख किसे कहते हैं?

इस बच्चे को मैं मारता हूँ तो भी वह रोता नहीं और हँसता है, उसका क्या कारण है? और आप उसे सिर्फ एक चपत लगाओ तो वह रोने लगेगा, उसका क्या कारण है? उसे लगा इसलिए? ना, उसे लगने का दु:ख नहीं है। उसका अपमान किया उसका उसे दु:ख है।

इसे दु:ख कहें ही कैसे? दु:ख तो किसे कहते हैं कि खाने का न मिले, संडास जाने का न मिले, पेशाब करने का न मिले, वह दु:ख कहलाता है। यह तो सरकार ने घर-घर में संडास बनवा दिए हैं, नहीं तो पहले गाँव में लोटा लेकर जंगल में जाना पड़ता था। अब तो बेडरूम में से उठे कि ये रहा संडास! पहले के ठाकुर के वहाँ भी नहीं थी, ऐसी सुविधा आज के मनुष्य भोग रहे हैं। ठाकुर को भी संडास जाने के लिए लोटा लेकर जाना पड़ता था। उसने जुलाब लिया हो तो ठाकुर भी दौड़ता। और सारे दिन ऐसा हो गया और वैसा हो गया, ऐसे शोर मचाते रहते हैं। अरे, क्या हो गया पर? यह गिर गया, वह गिर गया, क्या गिर गया? बिना काम के किसलिए शोर मचाते रहते हो?

ये दु:ख हैं, वे उल्टी समझ के हैं। यदि सही समझ फिट करें तो दु:ख जैसा है ही नहीं। यह अपना पैर पक गया हो तो हमें पता लगाना चाहिए कि मेरे जैसा दु:ख लोगों को है कि क्या? अस्पताल में देखकर आएँ तब वहाँ पता चले कि अहोहो! दु:ख तो यहीं है। मेरे पैर में ज़रा-सा ही लगा है और मैं नाहक दु:खी हो रहा हूँ। यह तो जाँच तो करनी पड़ेगी न? बिना जाँच किए दु:ख मान लें तो फिर क्या हो? आप सभी पुण्यवानों को दु:ख हो ही कैसे? आप पुण्यवान के घर में जन्मे हैं। थोड़ी ही मेहनत से सारे दिन का खाना-पीना मिला करता है।

प्रश्नकर्ता : सबको खुद का दु:ख बड़ा लगता है न?

दादाश्री : वह तो खुद खड़ा किया हुआ है, इसलिए जितना बड़ा करना हो उतना हो सकता है, चालीस गुना करना हो तो उतना हो।

...निश्चित करने जैसा 'प्रोजेक्ट'

इन मनुष्यों को जीवन जीना भी नहीं आया, जीवन जीने की चाबी ही खो गई है। चाबी बिलकुल खो गई थी, तो अब वापिस कुछ अच्छा हुआ है। इन अंग्रेज़ों के आने के बाद लोग खुद के कट्टर संस्कारों में से ढीले पड़े हैं, इसलिए दूसरों में दख़ल नहीं करते, और मेहनत करते रहते हैं। पहले तो सिर्फ दख़ल ही करते थे।

ये लोग फिजूल मार खाते रहते हैं। इस जगत् में आपका कोई बाप भी ऊपरी नहीं है। आप संपूर्ण स्वतंत्र हो। आपका प्रोजेक्ट भी स्वतंत्र है, पर आपका प्रोजेक्ट ऐसा होना चाहिए कि किसी जीव को आपसे किंचित् मात्र दुःख न हो। आपका प्रोजेक्ट बहुत बड़ा करो, सारी दुनिया जितना करो।

प्रश्नकर्ता : वह संभव है?

दादाश्री : हाँ, मेरा बहुत बड़ा है। किसी भी जीव को दुःख न हो उस तरह से मैं रहता हूँ।

प्रश्नकर्ता : पर दूसरों के लिए तो वह संभव नहीं न?

दादाश्री : संभव नहीं, पर उसका अर्थ ऐसा नहीं कि सब जीवों को दुःख देकर अपना प्रोजेक्ट करना।

ऐसा कोई नियम तो रखना चाहिए न कि किसी को कम से कम दुःख हो? ऐसा प्रोजेक्ट कर सकते हैं न। मैं आपको बिलकुल असंभव है, वह तो करने को नहीं कहता न।

...मात्र भावना ही करनी है

प्रश्नकर्ता : किसी को दुःख ही नहीं, तो फिर हम दूसरों को दुःख दें तो उसे दुःख किस प्रकार से होता है?

दादाश्री : दु:ख उसकी मान्यता में से गया नहीं न? आप मुझे धौल मारो तो मुझे दु:ख नहीं होगा, परन्तु दूसरे को तो उसकी मान्यता में धौल से दु:ख है, इसीलिए उसे मारोगे तो उसे दु:ख होगा ही। रोंग बिलीफ़ अभी तक गई नहीं है। कोई हमें धौल मारे तो हमें दु:ख होता है, उस लेवल से देखना चाहिए। किसी को धौल मारते समय मन में आना चाहिए कि मुझे धौल मारे तो क्या हो?

हम किसी के पास से रुपये दस हज़ार उधार ले आए, फिर अपने संजोग पलट गए, इसलिए मन में विचार आए कि पैसे वापिस नहीं दूँ तो क्या होनेवाला है? उस घड़ी हमें न्याय से जाँच करनी चाहिए कि 'मेरे यहाँ से कोई पैसे ले गया हो और मुझे वापिस न दे तो क्या होगा मुझे?' ऐसी न्यायबुद्धि चाहिए। ऐसा हो तो मुझे बहुत ही दु:ख होगा। इसी प्रकार सामनेवाले को भी दु:ख होगा। इसलिए मुझे पैसे वापिस देने ही हैं।' ऐसा निश्चित करना चाहिए और ऐसा निश्चित करो तो फिर दे सकोगे।

प्रश्नकर्ता : मन में ऐसा होता है कि ये दस करोड़ का आसामी है, तो हम उसे दस हज़ार नहीं दें तो उसे कोई तकलीफ नहीं होगी।

दादाश्री : उसे तकलीफ नहीं होगी, ऐसा आपको भले लगता हो, पर वैसा है नहीं। वह करोड़पति, उसके बेटे के लिए एक रुपये की वस्तु लानी हो तब भी सोच-समझकर लाता है। किसी करोड़पति के घर आपने पैसे इधर-उधर रखे हुए देखे हैं? पैसा हरएक को जान की तरह प्यारा होता है।

अपने भाव ऐसे होने चाहिए कि इस जगत् में अपने मन-वचन-काया से किसी जीव को किंचित् मात्र दु:ख न हो।

प्रश्नकर्ता : पर उस तरह से सामान्य मनुष्य को अनुसरण करना मुश्किल पड़ता है न?

दादाश्री : मैं आपको आज ही उस प्रकार का वर्तन करने का नहीं कहता हूँ। मात्र भावना ही करने को कहता हूँ। भावना अर्थात् आपका निश्चय।

४. फ़ैमिलि आर्गेनाइज़ेशन

यह तो कैसी लाइफ?

'फ़ैमिलि आर्गेनाइज़ेशन' का ज्ञान है आपके पास? हमारे हिन्दुस्तान में 'हाउ टु आर्गेनाइज़ फ़ैमिलि' वह ज्ञान ही कम है। फ़ॉरेनवाले तो फ़ैमिलि जैसा समझते ही नहीं। वे तो जेम्स बीस साल का हुआ, तब उसके माँ-बाप विलियम और मेरी, जेम्स से कहेंगे कि 'तू तेरे अलग और हम दो तोता-मैना अलग!' उन्हें फ़ैमिलि आर्गेनाइज़ करने की बहुत आदत ही नहीं न? और उनकी फ़ैमिलि तो साफ साफ ही कह देती है। मेरी के साथ विलियम को नहीं जमा, तब फिर डायवोर्स की ही बात! और हमारे यहाँ तो कहाँ डायवोर्स की बात? अपने तो साथ-साथ ही रहना है, कलह करना और वापिस सोना भी वहीं पर, उसी रूम में ही!

यह जीवन जीने का रास्ता नहीं है। यह फ़ैमिलि लाइफ नहीं कहलाती। अरे! अपने यहाँ की बुढ़ियाओं को जीवन जीने का तरीक़ा पूछा होता तो कहतीं कि आराम से खाओ-पीओ, जल्दबाज़ी क्यों करते हो? इन्सान को किस चीज़ की नेसेसिटी है, उसकी पहले जाँच करनी पड़े। दूसरी सब अन्नेसेसिटी। वे अननेसेसिटी की वस्तुएँ मनुष्य को उलझाती हैं, फिर नींद की गोलियाँ खानी पड़ती हैं।

ये घर में किसलिए लड़ाइयाँ होती हैं? बच्चों के साथ क्यों बोलाचाली हो जाती है? वह सब जानना तो पड़ेगा न? यह लड़का सामने बोले और उसके लिए डॉक्टर को पूछें कि कुछ बताइए, पर वह क्या दवाई बताए? उसकी ही पत्नी उसके सामने बोलती हो न!

यह तो सारी ज़िन्दगी रूई का सर्वे करता है, कोई लौंग का सर्वे करता है, कुछ न कुछ सर्वे करते हैं, पर अंदर का सर्वे कभी भी नहीं किया।

सेठ आपकी सुगंध आपके घर में आती है?

प्रश्नकर्ता : सुगंध मतलब क्या?

दादाश्री : आपके घर के सब लोगों को आप राज़ी रखते हो? घर में कलह होती नहीं न?

प्रश्नकर्ता : कलह तो होती है। रोज़ होती है।

दादाश्री : तब किस तरह के पैदा हुए आप कि पत्नी को शांति नहीं दी, बच्चों को शांति नहीं दी, अरे! आपने खुद को भी शांति नहीं दी! आपको मोक्ष में जाना हो तो मुझे आपको डाँटना पड़ेगा और आपको देवगति में जाना हो तो दूसरा सरल रास्ता आपको लिख दूँ। फिर तो मैं आपको 'आइए सेठ, पधारिए' ऐसा कहूँगा। मुझे दोनों भाषाएँ आती हैं। यह भ्रांति की भाषा मैं भूल नहीं गया हूँ। पहले 'तुंडे तुंडे मतिर्भिन्ना' थी, वह अभी तुमडे तुमडे मतिर्भिन्न हो गई है! तुंड गए और तुमडे रहे! संसार के हिताहित का भी कोई भान नहीं है।

ऐसा संस्कार सिंचन शोभा देता है?

माँ-बाप के तौर पर किस तरह रहना उसका भी भान नहीं है। एक भाई थे खुद की पत्नी को बुलाते हैं, 'अरे, मुन्ने की मम्मी कहाँ गई?' तब मुन्ने की मम्मी अंदर से बोलती है, 'क्यों, क्या है?' तब भाई कहें, 'यहाँ आ, जल्दी जल्दी यहाँ आ, देख, देख तेरे बच्चे को! कैसा पराक्रम करना आता है, अरे देख तो सही!! मुन्ने ने पैर ऊँचे करके मेरी जेब में से कैसे दस रुपये निकाले! कैसा होशियार हो गया है मुन्ना!!'

घनचक्कर, ऐसे कहाँ से पैदा हुए? ये बाप बन बैठे! शरम नहीं आती? इस बच्चे को कैसा उत्तेजन मिला, वह समझ में आता है? बच्चा देखता रहा कि मैंने बहुत बड़ा पराक्रम किया! ऐसा तो शोभा देता है? कुछ नियमवाला होना चाहिए न? यह हिन्दुस्तान का मनुष्यपन इस तरह लुट जाए, वह शोभा देता है हमें? क्या बोलने से बच्चे को अच्छा एन्करेजमेन्ट मिलता है और क्या बोलने से उसे नुकसान होता है, उसका

भान तो होना चाहिए न? यह तो अनटेस्टेड फादर और अनटेस्टेड मदर हैं। बाप मूली और माँ गाजर, फिर बोलो बच्चे कैसे बनें? वे थोड़े ही सेब बनेंगे?

प्रेममय डीलिंग - बच्चे सुधरेंगे ही

एक बाप ने अपने बच्चे को थोड़ा-सा ही हिलाया और बच्चा फट पड़ा, और बाप को कहने लगा कि मेरा और आपका नहीं जमेगा। फिर बाप बच्चे को कहने लगा कि भाई मैंने तुझे कुछ भी खराब नहीं कहा, तू किसलिए गुस्सा होता है? तब मैंने बाप से कहा कि, 'अब किसलिए कमरा धोते हो? पहले हिलाया ही किसलिए?' किसी को हिलाना मत, ये पके हुए फूट (ककड़ी जैसा फल) है। कुछ बोलना मत। मेरी भी चुप और तेरी भी चुप। खा-पीकर मज़े करो।

प्रश्नकर्ता : यह बच्चा खराब लाइन पर चढ़ जाए तो माँ-बाप का फ़र्ज़ है न कि उसे वापिस मोड़ना चाहिए?

दादाश्री : ऐसा है न, कि माँ-बाप होकर उसे कहना चाहिए, पर माँ-बाप हैं ही कहाँ आजकल?

प्रश्नकर्ता : माँ-बाप किसे कहा जाता है?

दादाश्री : माँ-बाप तो वे कहलाते हैं कि बच्चा खराब लाइन पर चला गया हो, फिर भी एक दिन माँ-बाप कहेंगे, 'भाई, ये हमें शोभा नहीं देता, यह तूने क्या किया?' तब दूसरे दिन से उसका बंद हो जाए। ऐसा प्रेम ही कहाँ है? ये तो प्रेम बिना के माँ-बाप। यह जगत् प्रेम से ही वश में होता है। इन माँ-बापों को बच्चों पर कितना प्रेम है? जितना गुलाब के पौधे पर माली का प्रेम होता है उतना! इन्हें माँ-बाप ही कैसे कहा जाए? अन्सर्टिफाइड फादर और अन्सर्टिफाइड मदर। फिर बच्चे की क्या स्थिति हो? असल में तो पहले टेस्टिंग करवाकर सर्टिफिकेट प्राप्त करने के बाद ही शादी करने की छूट होनी चाहिए। परीक्षा में पास हुए बिना, सर्टिफिकेट के बिना गवर्नमेन्ट में भी नौकरी पर नहीं लेते हैं, तो इसमें सर्टिफिकेट

बगैर शादी कैसे कर सकते हैं? यह माँ और बाप बनने की जिम्मेदारी देश के प्रधानमंत्री की जिम्मेदारी से भी अधिक है। प्रधानमंत्री से भी ऊँचा पद है।

प्रश्नकर्ता : सर्टिफाइड फादर-मदर की परिभाषा क्या है?

दादाश्री : अन्सर्टिफाइड माँ-बाप यानी खुद के बच्चे खुद के कहे अनुसार चलते नहीं, खुद के बच्चे खुद पर भाव रखते नहीं, परेशान करते हैं! तब माँ-बाप अन्सर्टिफाइड ही कहलाएँगे न?

...नहीं तो मौन रखकर 'देखते' रहो

एक सिंधी भाई आए थे, वे कहने लगे कि, एक बेटा ऐसा करता है और एक वैसा करता है, उनको कैसे सुधारना चाहिए? मैंने कहा, 'आप ऐसे बच्चे किसलिए लाए? बच्चे अच्छे छाँटकर हमें नहीं लाने चाहिए?' ये हाफ़ूज़ के आम सब एक ही तरह के होते हैं, वे सब मीठी देखकर, चखकर सब लाते हैं। पर आप दो खट्टे ले आए, दो बिगड़े हुए लाए, कसैले लाए, दो मीठे लाए, फिर उसके रस में कोई बरकत आएगी क्या? फिर लड़ाई-झगड़ा करें उसका क्या अर्थ? हम खट्टा आम लेकर आए फिर खट्टे को खट्टा जानना उसका नाम ज्ञान। हमें खट्टा स्वाद आया उसे देखते रहना है। ऐसे इस प्रकृति को देखते रहना है। किसी के हाथ में सत्ता नहीं है। अवस्था मात्र कुदरती रचना है। उसमें किसी का कुछ चलता नहीं, बदलता नहीं और वापिस व्यवस्थित है।

प्रश्नकर्ता : मारने से बच्चे सुधरते हैं या नहीं?

दादाश्री : कभी भी सुधरते नहीं, मारने से कुछ सुधरता नहीं है। इस मशीन को मारकर देखो तो? वह टूट जाएगी। वैसे ही ये बच्चे भी टूट जाएँगे। ऊपर से अच्छे खासे दिखते हैं, पर अंदर से टूट जाते हैं। दूसरों को एन्करेज करना नहीं आता तो फिर मौन रहो न, चाय पीकर चुपचाप। सबके मुँह देखता जा, ये दो पुतले कलह कर रहे हैं, उन्हें देखता जा। यह अपने काबू में नहीं है। हम तो इसके जानकार ही हैं।

जिसे संसार बढ़ाना हो उसे इस संसार में लड़ाई-झगड़ा करना चाहिए, सभी करना चाहिए। जिसे मोक्ष में जाना हो उसको हम, 'क्या हो रहा है' उसे 'देखो', ऐसा कहते हैं।

इस संसार में डाँटकर कुछ भी सुधरनेवाला नहीं है। उल्टे मन में अहंकार करता है कि मैंने बहुत डाँटा। डाँटने के बाद देखो तो माल था वैसा ही होता है, पीतल का हो वह पीतल का और काँसे का हो तो काँसे का ही रहता है। पीतल को मारते रहो तो उसे जंग लगे बगैर रहता है? नहीं रहता। कारण क्या है? तब कहे, जंग लगने का स्वभाव है उसका। इसलिए मौन रहना चाहिए। जैसे सिनेमा में नापसंद सीन आए तो उससे क्या हम जाकर परदा तोड़ डालते हैं? नहीं, उसे भी देखना है। सब ही, पसंद हों ऐसे सीन आते हैं क्या? कुछ तो सिनेमा में कुर्सी पर बैठे-बैठे शोर मचाते हैं कि 'अय! मार डालेगा, मार डालेगा!' ये बड़े दया के डिब्बे देख लो। यह तो सब देखना है। खाओ, पीओ, देखो और मज़े करो!

...खुद का ही सुधारने की ज़रूरत

प्रश्नकर्ता : ये बच्चे शिक्षक के सामने बोलते हैं, वे कब सुधरेंगे?

दादाश्री : जो भूल का परिणाम भुगतता है उसकी भूल है। ये गुरु ही घनचक्कर पैदा हुए हैं कि शिष्य उनके सामने बोलते हैं। ये बच्चे तो समझदार ही हैं, पर गुरु और माँ-बाप घनचक्कर पैदा हुए हैं! और बड़े-बूढ़े पुरानी बातें पकड़कर रखते हैं, फिर बच्चे सामना करेंगे ही न? आजकल माँ-बाप का चारित्र ऐसा होता नहीं है कि बच्चे सामना नहीं करे। ये तो बड़े-बूढ़ों का चारित्र कम हो गया है, इसीलिए बच्चे सामना करते हैं। आचार, विचार और उच्चार में पोजिटिव (सुलटा) बदलाव होता जाए तो खुद परमात्मा हो सकता है और उल्टा बदलाव हो तो राक्षस भी हो सकता है।

लोग सामनेवाले को सुधारने के लिए सब फ्रेक्चर कर डालते हैं। पहले खुद सुधरें तो दूसरों को सुधार सकते हैं। पर खुद के सुधरे बिना सामनेवाला किस तरह सुधरेगा? इसीलिए पहले आपका खुद का बगीचा

सँभालो, फिर दूसरों का देखने जाओ। आपका सँभालोगे तब ही फल-फूल मिलेंगे।

दख़ल नहीं, 'एडजस्ट' होने जैसा है

संसार का मतलब ही समसरण मार्ग, इसलिए निरंतर परिवर्तन ही होता रहता है। जब कि ये बड़े-बूढ़े पुराने ज़माने से ही लिपटे रहते हैं। अरे! ज़माने के अनुसार कर, नहीं तो मार खाकर मर जाएगा। ज़माने के अनुसार एडजस्टमेन्ट लेना चाहिए। मेरा तो चोर के साथ, जेब काटनेवाले के साथ, सबके साथ एडजस्टमेन्ट हो जाता है। चोर के साथ हम बात करें तो वह भी समझता है कि ये करुणावाले हैं। हम चोर को 'तू गलत है' ऐसा नहीं कहते, क्योंकि उसका वह 'व्यू पोइन्ट' है। जब कि लोग उसे नालायक कहकर गालियाँ देते हैं। तब ये वकील क्या झूठे नहीं है? 'बिलकुल झूठा केस भी जिता दूँगा', ऐसा कहते हैं, तो वे ठग नहीं कहलाएँगे? चोर को लुच्चा कहते हैं न, इस बिलकुल झूठे केस को सच्चा कहता है, उसका संसार में विश्वास किस तरह किया जाए? फिर भी उसका चलता है न? किसी को हम गलत नहीं कहते हैं। वह उसके व्यू पोइन्ट से करेक्ट ही है। पर उसे सच्ची बात समझाते हैं कि यह चोरी करता है, उसका फल तुझे क्या आएगा।

ये बूढ़े लोग घर में आएँ तो कहेंगे, 'यह लोहे की अलमारी? यह रेडियो? यह ऐसा क्यों है? वैसा क्यों है?' ऐसे दख़ल करते हैं। अरे, किसी युवक से दोस्ती कर। यह तो युग ही बदलता रहेगा। उसके बिना ये जीएँ किस तरह? कुछ नया देखें, इसलिए मोह होता है। नया नहीं हो तो जीएँ ही कैसे? ऐसा नया अनंत आया और गया, उसमें आपको दख़ल नहीं करनी है। आपको ठीक नहीं लगे तो वह आप मत करो। यह आइस्क्रीम ऐसा नहीं कहती आपको कि हमसे भागो। हमें नहीं खाना हो तो नहीं खाएँ। यह तो बूढ़े लोग उन पर चिढ़ते रहते हैं। ये मतभेद तो ज़माना बदला उसके हैं। ये बच्चे तो ज़माने के अनुसार करते हैं। मोह यानी नया-नया उत्पन्न होता है और नया ही नया दिखता है। हमने बचपन से बुद्धि से बहुत ही सोच लिया कि यह जगत् उल्टा हो रहा है या सीधा हो रहा है,

और वह भी समझा कि किसी को सत्ता ही नहीं है इस जगत् को बदलने की। फिर भी हम क्या कहते हैं कि जमाने के अनुसार एडजस्ट हो जाओ! बेटा नयी ही टोपी पहनकर आए तो ऐसा नहीं कहें कि ऐसी कहाँ से ले आया? इससे तो, एडजस्ट हो जाएँ कि इतनी अच्छी टोपी? कहाँ से लाया? कितने की आई? बहुत सस्ती मिली? ऐसे एडजस्ट हो जाए।

ये बच्चे सारा दिन कान पर रेडियो लगाकर नहीं रखते? क्योंकि यह रस नया-नया उदय में आया है बेचारे को! यह उसका नया डेवलपमेन्ट है। यदि डेवलप हो गया होता, तो कान पर रेडियो लगाता भी नहीं। एकबार देख लेने के बाद वापिस छुआता ही नहीं। नवीन वस्तु को एक बार देखना होता है, उसका हमेशा के लिए अनुभव नहीं लेना होता है। यह तो कान की नयी ही इन्द्रिय आई है, इसलिए सारा दिन रेडियो सुनता रहता है! मनुष्यपन की उसकी शुरूआत हो रही है। मनुष्यपन में हज़ारों बार आया हुआ मनुष्य ऐसा-वैसा नहीं करते।

प्रश्नकर्ता : बच्चों को घूमने-फिरने का बहुत होता है।

दादाश्री : बच्चे कोई हमसे बँधे हुए नहीं हैं। सब अपने-अपने बंधन में हैं, हमें तो इतना ही कहना है कि 'जल्दी आना।' फिर जब आएँ तब 'व्यवस्थित'। व्यवहार सब करना, पर कषाय रहित करना। व्यवहार कषाय रहित हुआ तो मोक्ष, और कषाय सहित व्यवहार-वह संसार।

प्रश्नकर्ता : हमारा भतीजा रोज़ नौ बजे उठता है, कुछ काम हो नहीं पाता।

दादाश्री : हम उसे ओढ़ाकर कहें कि आराम से सो जा भाई। उसकी प्रकृति अलग है, इसलिए देर से उठता है और काम अधिक करता है। और मूर्ख चार बजे का उठा हो तब भी कुछ न करे। मैं भी हरएक काम में हमेशा लेट होता था। स्कूल में घंटी बजने के बाद ही घर से बाहर निकलता। और हमेशा मास्टरजी की डाँट सुनता था। अब मास्टरजी को क्या पता कि मेरी प्रकृति (स्वभाव) क्या है? हरएक का 'रस्टन' अलग, 'पिस्टन' अलग-अलग होता है।

प्रश्नकर्ता : पर देर से उठने में डिसिप्लिन नहीं रहता है न?

दादाश्री : यह देर से उठता है इसीलिए आप कलह करो, वह ही डिसिप्लिन नहीं है। इसीलिए आप कलह करना बंद कर दो। आपको जो-जो शक्तियाँ माँगनी हों, वे इन दादा के पास से रोज़ सौ-सौ बार माँगना, सब मिलेंगी।

अब इन भाईसाब को समझ में आया इसलिए उन्होंने तो हमारी आज्ञा पालकर भतीजे को घर में सभी ने कुछ भी कहने का बंद कर दिया। हफ्ते के बाद परिणाम यह आया कि भतीजा अपने आप ही सात बजे उठने लग गया और घर में सबसे ज़्यादा अच्छी तरह काम करने लग गया।

सुधारने के लिए 'कहना' बंद करो

इस काल में कम बोलना, उसके जैसा कुछ भी नहीं है। इस काल में बोल पत्थर जैसे लगें, ऐसे निकलते हैं, और हरएक का ऐसा ही होता है। इसीलिए बोलने का कम कर देना अच्छा। किसी को कुछ भी कहने जैसा नहीं है। कहने से अधिक बिगड़ता है। उसे कहें कि गाड़ी पर जल्दी जा, तो वह देर से जाता है। और कुछ न कहें तो टाइम पर जाता है। हम नहीं हों तो सब चले ऐसा है। यह तो खुद का झूठा अहंकार है। जिस दिन से बच्चों के साथ कच-कच करना आप बंद करोगे उस दिन से बच्चे सुधरेंगे। आपके बोल अच्छे नहीं निकलते, इसीलिए सामनेवाला चिढ़ता है। आपके बोल वह स्वीकारता नहीं है, उल्टे वे बोल वापिस आते हैं। हम तो बच्चे को खाने का, पीने का बनाकर दें और अपना फ़र्ज़ पूरा करें, दूसरा कुछ कहने जैसा नहीं है। कहने से फायदा नहीं, ऐसा आपका सार निकलता है न? बच्चे बड़े हुए हैं, वे क्या सीढ़ियों पर से गिर जाते हैं? आप अपना आत्मधर्म किसलिए चूकते हो? ये बच्चों के साथ का तो रिलेटिव धर्म है। वहाँ बेकार माथाकूट करने जैसा नहीं है। कलह करते हो, उससे तो मौन रहोगे तो अधिक अच्छा रहेगा। कलह से तो खुद का दिमाग बिगड़ जाता है और सामनेवाले का भी

बिगड़ जाता है।

प्रश्नकर्ता : बच्चे उनकी जिम्मेदारी समझकर रहते नहीं है।

दादाश्री : जिम्मेदारी 'व्यवस्थित' की है, वह तो उसकी जिम्मेदारी समझा हुआ ही है। आपको उसे कहना, आया नहीं इसीलिए गड़बड़ होती है। सामनेवाला माने, तब हमारा कहा हुआ काम का। यह तो माँ-बाप बोलते हैं पागल जैसा, फिर बच्चे भी पागलपन ही करेंगे न।

प्रश्नकर्ता : बच्चे तुच्छता से बोलते हैं।

दादाश्री : हाँ, पर वह आप किस तरह बंद करोगे? यह तो आमने-सामने बंद हो न तो सबका अच्छा होगा।

एक बार मन विषैला हो गया, फिर उसकी लिंक शुरू हो जाती है। फिर मन में उसके लिए ग्रह बंध जाता है कि यह आदमी ऐसा ही है। तब हमें मौन लेकर सामनेवाले को विश्वास में लेने जैसा है। यह बोलते रहने से किसी का सुधरता नहीं। सुधारने का तो 'ज्ञानी पुरुष' की वाणी से सुधरता है। बच्चों के लिए तो माँ-बाप की जोखिमदारी है। हम नहीं बोलें, तो नहीं चलेगा? चलेगा। इसलिए भगवान ने कहा है कि जीते जी ही मरे हुए के जैसे रहो। बिगड़ा हुआ सुधर सकता है। बिगड़े हुए को काट नहीं देना चाहिए। बिगड़े हुए को सुधारना वह हमसे हो सकता है, आपको नहीं करना है। आपको हमारी आज्ञा के अनुसार चलना है। वह तो जो सुधरा हुआ हो वही दूसरों को सुधार सकता है। खुद ही सुधरे नहीं हों, तो दूसरों को किस तरह सुधार सकेंगे?

बच्चों को सुधारना हो तो हमारी इस आज्ञा के अनुसार चलो। घर में छह महीने का मौन लो। बच्चे पूछें तब ही बोलना और वह भी उन्हें कह देना कि मुझे न पूछो तो अच्छा। और बच्चों के लिए उल्टा विचार आए तो उसका तुरन्त ही प्रतिक्रमण कर देना चाहिए।

रिलेटिव समझकर *उपलक* रहना

बच्चों को तो नव महीने पेट में रखना, फिर चलाना, घूमाना, छोटे

हों तब तक। फिर छोड़ देने का। ये गाय-भैंस भी छोड़ देते हैं न? बच्चों को पाँच वर्ष तक टोकना पड़ता है, फिर टोकना भी नहीं चाहिए और बीस साल के बाद तो उसकी पत्नी ही उसे सुधारेगी। हमें सुधारना नहीं होता है।

बच्चों के साथ *उपलक* (सतही, ऊपर ऊपर से, सुपरफ्लुअस) रहना है। असल में तो खुद का कोई है ही नहीं। इस देह के आधार पर मेरे हैं। देह जल जाए तो कोई साथ में आता है? यह तो जो मेरा कहकर छाती से चिपकाते हैं, उनको बहुत उपाधी है। बहुत भावुकता के विचार काम लगते नहीं। बेटा व्यवहार से है। बेटा जल जाए तो इलाज करवाएँ, पर हमने कोई रोने की शर्त रखी है?

सौतेले बच्चे हों तो गोद में बिठाकर दूध पिलाते हैं? ना! वैसा रखना। यह कलियुग है। 'रिलेटिव' संबंध है। रिलेटिव को रिलेटिव रखना चाहिए, 'रियल' नहीं करना चाहिए। यह रियल संबंध होता तो बच्चे से कहें कि तू सुधरे नहीं तब तक अलग रह। पर यह तो रिलेटिव संबंध है इसलिए - एडजस्ट एवरीव्हेर। यह आप सुधारने नहीं आए हो, आप कर्मों के शिकंजे में से छूटने के लिए आए हो। सुधारने के बदले तो अच्छी भावना करो। बाकी कोई किसी को सुधार नहीं सकता। वह तो ज्ञानी पुरुष सुधरे हुए होते हैं, वे दूसरों को सुधार सकते हैं। इसलिए उनके पास ले जाओ। यह बिगड़ते हैं किसलिए? उकसाने से। सारे वर्ल्ड का काम उकसाने से बिगड़ा है। इस कुत्ते को भी छेड़ो तो काट खाता है, काट लेता है। इसलिए लोग कुत्ते को छेड़ते नहीं है। इन मनुष्यों को छेड़े तो क्या होगा? वे भी काट खाएँगे। इसीलिए मत छेड़ना।

यह हमारे एक-एक शब्द में अनंत-अनंत शास्त्र समाए हुए हैं! ये समझे और सीधा चले तो काम ही निकाल दे! एकावतारी हुआ जाए, ऐसा यह विज्ञान है! लाखों जन्म कम हो जाएँगे! इस विज्ञान से तो राग भी उड़ जाता है और द्वेष भी उड़ जाता है और वीतराग हुआ जाता है। अगुरु-लघु स्वभाव का हो जाता है, इसलिए इस विज्ञान का जितना लाभ उठाया जाए उतना कम है।

सलाह देनी, परन्तु देनी ही पड़े तब

हमारी तरह 'अबुध' हो गया तो काम ही हो गया। बुद्धि काम में ली तो संसार खड़ा हो गया वापिस। घर के लोग पूछें, तभी जवाब देना चाहिए हमें, और उस समय मन में हो कि यह नहीं पूछे तो अच्छा, ऐसी हमें मन्नत माननी चाहिए। क्योंकि न पूछे तो हमें यह दिमाग चलाना नहीं पड़ेगा। ऐसा है न, कि हमारे ये पुराने संस्कार सब खतम हो गए हैं। यह दूषमकाल जबरदस्त फैला हुआ है, संस्कारमात्र खतम हो गए हैं। मनुष्य को किसी को समझाना आता नहीं है। बाप बेटे को कुछ कहे तो बेटा कहेगा कि मुझे आपकी सलाह नहीं सुननी है। तब सलाह देनेवाला कैसा और लेनेवाला कैसा? किस तरह के लोग इकट्ठे हुए हो? ये लोग आपकी बात क्यों नहीं सुनते? सच्ची नहीं, इसलिए। सच्ची हो, तो सुनेंगे या नहीं सुनेंगे? ये लोग किसलिए कहते हैं? आसक्ति के कारण कहते हैं। इस आसक्ति के लिए तो लोग खुद के जन्म बिगाड़ते हैं।

अब, इस भव में तो संभाल ले

सब 'व्यवस्थित' चलाता है, कुछ भी बोलने जैसा नहीं है। 'खुद का' धर्म कर लेने जैसा है। पहले तो ऐसा समझते थे कि हम चलाते हैं, इसलिए हमें बुझाना पड़ता है। अब तो चलाना हमें नहीं है न? अब तो यह भी लट्टू और वह भी लट्टू! रखो न पीड़ा यहीं से। प्याला फूटे, कढ़ी ढुल जाए, पत्नी बच्चे को डाँटती हो, तब भी हम इस तरह टेढ़े फिरकर आराम से बैठ जाएँ। हम देखें तब वे कहें न कि आप देख रहे थे और क्यों नहीं बोले? और न हो तो हाथ में माला लेकर फेरने लगें, तब वह कहेगी कि ये तो माला में है। छोड़ो न! हमें क्या लेना-देना? शमशान में नहीं जाना हो तो कच-कच करो! इसलिए कुछ बोलने जैसा नहीं है। यह तो गायें-भैंसें भी उनके बच्चों के साथ उनके तरीके से भों-भों करते हैं, अधिक नहीं बोलते! और ये मनुष्य तो ठेठ तक बोलते ही रहते हैं। बोले वह मूर्ख कहलाता है, सारे घर को खतम कर डालता है। उसका कब पार आए? अनंत जन्मों से संसार में भटके हैं। न किसी का

भला किया, न खुद का भला किया। जो मनुष्य खुद का भला करे वही दूसरों का भला कर सकता है।

सच्ची सगाई या परायी पीड़ा?

बेटा बीमार हो तो हम इलाज सब करवाएँ, पर सबकुछ उपलक अपने बच्चों को कैसे मानने चाहिए? सौतेले। बच्चों को मेरे बच्चे कहा और बच्चा भी मेरी माँ कहता है, पर अंदर लम्बा संबंध नहीं है। इसीलिए इस काल में सौतेले संबंध रखना, नहीं तो मारे गए समझना। बच्चे किसी को मोक्ष में ले जानेवाले नहीं है। यदि आप समझदार होओगे तो बच्चे समझदार होंगे। बच्चों के साथ लाड़-प्यार तो किया जाता होगा? यह लाड़-प्यार तो गोली मारता है। लाड़-प्यार द्वेष में बदल जाता है। खींच-तानकर प्रीत करके चला लेना चाहिए। बाहर 'अच्छा लगता है' ऐसा कहना चाहिए। पर अंदर समझें कि जबरदस्ती प्रीति कर रहे हैं, यह नहीं है सच्चा संबंध। बेटे के संबंध का कब पता चलता है? कि जब हम एक घंटा उसे मारें, गालियाँ दें, तब वह कलदार है या नहीं, उसका पता चलता है। यदि आपका सच्चा बेटा हो, तो आपके मारने के बाद भी वह आपको आपके पैर छूकर कहेगा कि बापूजी, आपका हाथ बहुत दुःख रहा होगा! ऐसा कहनेवाला हो तो सच्चे संबंध रखें। पर यह तो एक घंटा बेटे को डाँटें तो बेटा मारने दौड़ेगा! यह तो मोह को लेकर आसक्ति होती है। 'रियल बेटा' किसे कहा जाता है? कि बाप मर जाए तो बेटा भी शमशान में जाकर कहे कि 'मुझे मर जाना है।' कोई बेटा बाप के साथ मर जाता है आपके मुँबई में?

यह तो सब परायी पीड़ा है। बेटा ऐसा नहीं कहता कि मुझ पर सब लुटा दो, पर यह तो बाप ही बेटे पर सब लुटा देता है। यह अपनी ही भूल है। हमें बाप की तरह सभी फ़र्ज़ निभाने हैं। जितने उचित हों उतने सभी फ़र्ज़ निभाने हैं। एक बाप अपने बेटे को छाती से लगाकर ऐसे दबा रहा था, उसने खूब दबाया इसलिए बेटे ने बाप को काट लिया! कोई आत्मा किसी का पिता-पुत्र हो सकता ही नहीं है। इस कलियुग में तो माँगनेवाले, लेनदार ही बेटे बनकर आए होते हैं! हम ग्राहक से कहें कि मुझे तेरे बिना अच्छा नहीं लगता, तेरे बिना अच्छा नहीं लगता तो ग्राहक क्या करेगा?

मारेगा। यह तो रिलेटिव सगाईयाँ हैं, इसमें से कषाय खड़े होते हैं। इस राग कषाय में से द्वेष कषाय खड़ा होता है। खुशी में उछलना ही नहीं है। यह खीर उफने, तब चूले में से लकड़ा निकाल लेना पड़ता है, उसके जैसा है।

... फिर भी उचित व्यवहार कितना?

प्रश्नकर्ता : बच्चों के बारे में क्या उचित है और क्या अनुचित, वह समझ में नहीं आता।

दादाश्री : जितना सामने चलकर करते हैं वह सब ज़रूरत से ज़्यादा अक़्लमंदी है। वह पाँच वर्ष तक ही करने का होता है। फिर तो बेटा कहे कि बापूजी मुझे फ़ीस दो। तब हम कहें कि भाई पैसा यहाँ नल में नहीं आता है। हमें दो दिन पहले से कहना चाहिए। हमें उधार लेकर आने पड़ते हैं। ऐसा कहकर दूसरे दिन देने चाहिए। बच्चे तो ऐसा समझ बैठे होते हैं कि नल में पानी आता है वैसे बापूजी पानी ही देते हैं। इसलिए बच्चों के साथ ऐसा व्यवहार रखना कि उनसे सगाई बनी रहे और वे सिर पर न चढ़ बैठे, बिगड़ें नहीं। यह तो बेटे को इतना अधिक लाड़ करते हैं कि बेटा बिगड़ जाता है। अतिशय लाड़ तो होता होगा? इस बकरी के ऊपर प्यार आता है? बकरी में और बच्चों में क्या फर्क है? दोनों ही आत्मा हैं। अतिशय लाड़ नहीं और निःस्पृह भी नहीं हो जाना चाहिए। बेटे से कहना चाहिए कि कोई कामकाज हो तो पूछना। मैं बैठा हूँ तब तक कोई अड़चन हो तो पूछना। अड़चन हो तभी, नहीं तो हाथ डालें नहीं। यह तो बेटे की जेब में से पैसे नीचे गिर रहे हों तो बाप शोर मचा देता है, 'अरे चंदू, अरे चंदू।' हम किसलिए शोर मचाएँ? अपने आप पूछेगा तब पता चलेगा। इसमें हम कलह कहाँ करे? और हम नहीं होते तो क्या होता? 'व्यवस्थित' के ताबे में है। और बिना काम के दख़ल करते हैं। संडास भी व्यवस्थित के ताबे है, और आपका आपके पास है। खुद के स्वरूप में खुद हो, वहाँ पुरुषार्थ है। और खुद की स्वसत्ता है। इस पुद्‍गल में पुरुषार्थ है ही नहीं। पुद्‍गल प्रकृति के अधीन है।

बच्चों का अहंकार जागे उसके बाद उसे कुछ कह नहीं सकते और

हम किसलिए कहें? ठोकर लगेगी तो सीखेंगे। बच्चे पाँच वर्ष के हों तब तक कहने की छूट है और पाँच से सोलह वर्षवाले को कभी दो चपत मारनी भी पड़े। पर बीस वर्ष का जवान होने के बाद उसका नाम तक नहीं ले सकते, एक अक्षर भी नहीं बोल सकते, बोलना वह गुनाह कहलाएगा। नहीं तो किसी दिन बंदूक़ मार देगा।

प्रश्नकर्ता : ये 'अन्सर्टिफाइड फादर' और 'मदर' बन गए हैं इसलिए यह पज़ल खड़ा हुआ है?

दादाश्री : हाँ, नहीं तो बच्चे ऐसे होते ही नहीं, बच्चे कहे अनुसार चले ऐसे होते हैं। यह तो माँ-बाप ही ठिकाने बगैर के हैं। ज़मीन वैसी है, बीज वैसा है, माल बेकार है! ऊपर से कहते हैं कि मेरा बेटा महावीर होनेवाला है! महावीर तो होते होंगे? महावीर की माँ तो कैसी होती है? बाप ज़रा टेढ़ा-मेढ़ा हो तो चले पर माँ कैसी होती है?

प्रश्नकर्ता : बच्चों को गढ़ने के लिए या संस्कार के लिए हमें कोई विचार ही नहीं करना चाहिए?

दादाश्री : विचार करने में कोई परेशानी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : पढ़ाई तो स्कूल में होती है पर गढ़ने का क्या?

दादाश्री : गढ़ना सुनार को सौंप देना चाहिए, उनके गढ़नेवाले होते हैं वे गढ़ेंगे। बेटा पंद्रह वर्ष का हो तब तक उसे हमें कहना चाहिए, तब तक हम जैसे हैं वैसा उसे गढ़ दें। फिर उसे उसकी पत्नी ही गढ़ देगी। यह गढ़ना नहीं आता, फिर भी लोग गढ़ते ही है न? इसलिए गढ़ाई अच्छी होती नहीं है। मूर्ति अच्छी बनती नहीं है। नाक ढाई इंच का होना चाहिए, वहाँ साढ़े चार इंच का कर देते हैं। फिर उसकी वाइफ आएगी तो काटकर ठीक करने जाएगी। फिर वह भी उसे काटेगा और कहेगा, 'आ जा।'

फ़र्ज़ में नाटकीय रहो

यह नाटक है! नाटक में बीवी-बच्चों को खुद के कायम के कर लें तो क्या चल सकेगा? हाँ, नाटक में बोलते हैं, वैसे बोलने में परेशानी

नहीं है। 'यह मेरा बड़ा बेटा, शतायु था।' पर सब उपलक, सुपरफ्लुअस, नाटकीय। इन सबको सच्चा माना उसके ही प्रतिक्रमण करने पड़ते हैं। यदि सच्चा न माना होता तो प्रतिक्रमण करने ही नहीं पड़ते, जहाँ सत्य मानने में आया वहाँ राग और द्वेष शुरू हो जाते हैं, और प्रतिक्रमण से ही मोक्ष है। ये दादाजी दिखाते हैं, उस आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान से मोक्ष है।

यह संसार तो *तायफ़ा* (फज़ीता) है बिलकुल, मज़ाक जैसा है। एक घंटे यदि बेटे के साथ लड़ें तो बेटा क्या कहेगा? 'आपको यहाँ रहना हो तो मैं नहीं रहूँगा।' बाप कहे, 'मैं तुझे जायदाद नहीं दूँगा।' तो बेटा कहे, 'आप नहीं देनेवाले कौन?' यह तो मार-ठोककर लें ऐसे हैं। अरे! कोर्ट में एक बेटे ने वकील से कहा कि, 'मेरे बाप की नाक कटे ऐसा करो तो मैं तुझे तीन सौ रुपये ज़्यादा दूँगा।' बाप बेटे से कहता है कि, 'तुझे ऐसा जाना होता, तो जन्म होते ही तुझे मार डाला होता!' तब बेटा कहे कि, 'आपने मार नहीं डाला वही तो आश्चर्य है न!' ऐसा नाटक होनेवाला हो तो किस तरह मारोगे! ऐसे-ऐसे नाटक अनंत प्रकार के हो चुके हैं, अरे! सुनते ही कान के परदे फट जाएँ। अरे! इससे भी कई तरह-तरह का जग में हुआ है इसलिए चेतो जगत् से। अब 'खुद के' देश की ओर मुड़ो, 'स्वदेश' में चलो। परदेश में तो भूत ही भूत है। जहाँ जाओ वहाँ।

कुतिया बच्चों को दूध पिलाती है वह ज़रूरी है, वह कोई उपकार नहीं करती है। भैंस का बछड़ा दो दिन भैंस का दूध नहीं पीए भैंस को बहुत दुःख होता है। यह तो खुद की ग़रज़ से दूध पिलाते हैं। बाप बेटे को बड़ा करता है वह खुद की ग़रज़ से, उसमें नया क्या किया? वह तो फ़र्ज़ है।

बच्चों के साथ 'ग्लास विद केर'

प्रश्नकर्ता : दादा, घर में बेटे-बेटियाँ सुनते नहीं हैं, मैं खूब डाँटता हूँ फिर भी कोई असर नहीं होता।

दादाश्री : यह रेलवे के पार्सल पर लेबल लगाया हुआ आपने देखा है? 'ग्लास विद केर', ऐसा होता है न? वैसे घर में भी 'ग्लास विद केर'

रखना चाहिए। अब ग्लास हो और उसे आप हथौड़े मारते रहो तो क्या होगा? वैसे, घर के लोगों को काँच की तरह सँभालना चाहिए। आपको उस बंडल पर चाहे जितनी भी चिढ़ चढ़ी हो, फिर भी उसे नीचे फेंकोगे? तुरन्त पढ़ लोगे कि 'ग्लास विद केर'! घर में क्या होता है कि कुछ हुआ तो आप तुरन्त ही बेटी को कहने लग जाते हो, 'क्यों ये पर्स खो डाला? कहाँ गई थी? पर्स किस तरह खो गया?' यह आप हथौड़े मारते रहते हो। यह 'ग्लास विद केर' समझे तो फिर स्वरूपज्ञान नहीं दिया हो, तब भी समझ जाए।

इस जगत् को सुधारने का रास्ता ही प्रेम है। जगत् जिसे प्रेम कहता है वह प्रेम नहीं है, वह तो आसक्ति है। ये बेटी को प्रेम करते हो, पर वह प्याला फोड़े तो प्रेम रहता है? तब तो चिढ़ जाते हैं। मतलब, वह आसक्ति है।

बेटे-बेटियाँ हैं, उनके आपको संरक्षक की तरह, ट्रस्टी की तरह रहना है। उनकी शादी करने की चिंता नहीं करनी होती है। घर में जो हो जाए उसे 'करेक्ट' कहना, 'इन्करेक्ट' कहोगे तो कोई फायदा नहीं होगा। गलत देखनेवाले को संताप होगा। एकलौता बेटा मर गया तो करेक्ट है, ऐसा किसी से नहीं कह सकते। वहाँ तो ऐसा ही कहना पड़े कि, बहुत गलत हो गया। दिखावा करना पड़ेगा। ड्रामेटिक करना पड़ेगा। बाकी अंदर तो करेक्ट ही है, ऐसा करके चलें। प्याला जब तक हाथ में है तब तक प्याला है! फिर गिर पड़े और फूट जाए तो करेक्ट है ऐसा कहना चाहिए। बेटी से कहना कि सँभालकर धीरे से लेना पर अंदर करेक्ट है ऐसे कहना। क्रोध भरी वाणी न निकले तब फिर सामनेवाले को नहीं लगेगी। मुँह पर बोल दें, केवल वही क्रोध नहीं कहलाता है, अंदर कुढ़े वह भी क्रोध है। यह सहन करना वह तो डबल क्रोध है। सहन करना यानी दबाते रहना, वह तो एक दिन स्प्रिंग की तरह उछलेगा तब पता चलेगा। सहन किसलिए करना है? इसका तो ज्ञान से हल ला देना है। चूहे ने मूछें काटी वह 'देखना' है और 'जानना' है, उसमें रोना किसलिए? यह जगत् देखने-जानने के लिए है।

घर, एक बगीचा

एक भाई मुझे कहते हैं कि, दादा, घर में मेरी पत्नी ऐसा करती है, वैसा करती है। तब मैंने कहा कि, 'पत्नी को पूछो कि वह क्या कहती है?' वह कहती है कि मेरा पति ऐसा बेकार है। बिना अक्कल का है। अब इसमें आपके अकेले का क्या करने को खोजते हो? तब वे भाई कहते हैं कि मेरा घर तो बिगड़ गया है। बच्चे बिगड़ गए हैं। बीवी बिगड़ गई है। मैंने कहा, 'बिगड़ नहीं गया कुछ भी। आपको वह देखना नहीं आता है। आपका घर आपको देखते आना चाहिए।' आपका घर तो बगीचा है। सत्‌युग, त्रेता और द्वापरयुग में घर यानी खेत जैसे होते थे। किसी खेत में केवल गुलाब ही, किसी खेत में केवल चंपा, किसी में केवड़ा, ऐसा था। अब इस कलियुग में खेत नहीं रहे, बगीचे बन गए हैं। इसलिए एक गुलाब, एक मोगरा और एक चमेली! अब आप घर में बुज़ुर्ग, गुलाब हों और घर में सबको गुलाब बनाने फिरते हो, दूसरे फूलों से कहते हो कि मेरे जैसा क्यों नहीं है। तू तो सफेद है। तेरा सफेद फूल क्यों आया? गुलाबी फूल ला। ऐसे सामनेवाले को मारते रहते हो! अरे! फूल को देखना तो सीखो। आपको इतना तक करना है कि यह कैसी प्रकृति है? किस प्रकार का फूल है? फल-फूल आए, तब तक पौधे को देखते रहना है कि यह कैसा पौधा है? मुझमें काँटे हैं और इसमें नहीं हैं। मेरा गुलाब का पौधा है, इसका गुलाब का नहीं है। फिर फूल आएँ, तब हम जानें कि ओहोहो! यह तो मोगरा है! इसलिए उसके साथ मोगरे के हिसाब से व्यवहार रखना चाहिए। चमेली हो तो उसके हिसाब से वर्तन रखना चाहिए। सामनेवाले की प्रकृति के अनुसार वर्तन रखना चाहिए। पहले तो घर में बूढ़े होते थे तब फिर उनके कहे अनुसार बच्चे चलते थें, बहुएँ चलती थीं। जब कि कलियुग में अलग-अलग प्रकृतियाँ हैं, वे किसी से मेल खाते नहीं, इसलिए इस काल में तो घर में सबकी प्रकृति के स्वभाव के साथ एडजस्ट होकर ही काम लेना चाहिए। वह एडजस्ट नहीं होगा तो रिलेशन बिगड़ जाएँगे। इसीलिए बगीचे को सँभालो और गार्डनर बन जाओ। वाइफ की अलग प्रकृति होती है, बेटों की अलग, बेटियों की अलग-अलग प्रकृति होती

हैं। इसलिए हरएक की प्रकृति का लाभ उठाओ। यह तो रिलेटिव संबंध हैं, वाइफ भी रिलेटिव है। अरे! यह देह ही रिलेटिव है न! रिलेटिव मतलब उसके साथ बिगाड़ो तो वे अलग हो जाएँगे!

किसी को सुधारने की शक्ति इस काल में खतम हो गई है। इसलिए सुधारने की आशा छोड़ दो, क्योंकि मन-वचन-काया की एकात्मवृत्ति हो तभी सामनेवाला सुधर सकता है, मन में जैसा हो, वैसा वाणी में निकले और वैसा ही वर्तन में हों तभी सामनेवाला सुधरे। अभी तो ऐसा है नहीं। घर में हरएक के साथ कैसा व्यवहार रखना उसकी नोर्मेलिटी ला दो।

उसमें मूर्च्छित होने जैसा है ही क्या?

कितने तो बच्चे 'दादा, दादा' कहें, तब दादाजी अंदर मलकते हैं! अरे! बच्चे 'दादा, दादा' न करे तो क्या 'मामा, मामा' करें? ये बच्चे 'दादा, दादा' करते हैं, पर अंदर समझते हैं कि दादा यानी थोड़े समय में मर जानेवाले हैं वे, जो आम अब बेकार हो गए हैं, निकाल फेंकने जैसे हैं, उनका नाम दादा! और दादा अंदर मलकता है कि मैं दादा बना! ऐसा जगत् है।

अरे! पापा को भी बच्चा जाकर मीठी भाषा में कहे कि 'पापाजी, चलो, मम्मी चाय पीने बुला रही है।' तो पापा अंदर ऐसा खुश होता है, ऐसा मलकता है, जैसे साँड मलकाया। एक तो बालभाषा, और मीठी-तोतली भाषा, उसमें भी पापाजी कहते हैं... इसीलिए वहाँ तो प्राइम मिनिस्टर हो तो उसका भी कोई हिसाब नहीं। ये तो मन में क्या ही मान बैठा है कि मेरे अलावा कोई पापा ही नहीं है। अरे पागल! ये कुत्ते, गधे, बिल्ली, निरे पापा ही है न। कौन पापा नहीं है? ये सब कलह उसीकी है न?

समझकर कोई पापा न बने, ऐसा कोई चारित्र किसी के उदय में आए तो उसकी तो आरती उतारनी पड़े। बाकी सभी पापा ही बनते हैं न? बॉस ने ऑफिस में डाँटा हो, और घर पर बेटा 'पापा, पापा' करे तब उस घड़ी सब भूल जाता है और आनंद होता है। क्योंकि यह भी एक प्रकार की मदिरा ही कहलाती है, जो सबकुछ भुला देती है!

एक भी बच्चा न हो और बच्चे का जन्म हो तो वह हँसाता है, पिता को बहुत आनंद करवाता है। जब वह जाता है, तब रुलाता है उतना ही। इसलिए हमें उतना जान लेना है कि आए हैं वे जाएँगे, तब क्या-क्या होगा? इसीलिए आज से हँसना ही नहीं। फिर झँझट ही नहीं न! यह तो किस जन्म में बच्चे नहीं थे? कुत्ते, बिल्ली, सब जगह बच्चे-बच्चे और बच्चे ही सीने से लगाए हैं। इस बिल्ली को भी बेटियाँ ही होती हैं न?

व्यवहार नोर्मेलिटीपूर्वक होना चाहिए

इसलिए हरएक में नोर्मेलिटी ला दो। एक आँख में प्रेम और एक आँख में कठोरता रखना। कड़ाई से सामनेवाले को बहुत नुकसान नहीं होता, क्रोध करने से बहुत नुकसान होता है। कड़ाई यानी क्रोध नहीं, लेकिन फुफकार। हम भी काम पर जाते हैं तब फुफकार मारते हैं। क्यों ऐसा करते हो? क्यों काम नहीं करते? व्यवहार में जिस तरह जिस भाव की ज़रूरत हो, वहाँ वह भाव उत्पन्न न हो तो वह व्यवहार बिगड़ा हुआ कहलाएगा।

एक व्यक्ति मेरे पास आया वह बैंक का मेनेजर था। वह मुझसे कहता है कि मेरे घर में मेरी वाइफ को और बच्चों को मैं एक अक्षर भी कहता नहीं हूँ। मैं बिलकुल ठंडा रहता हूँ। मैंने उनसे कहा, 'आप अंतिम प्रकार के बेकार मनुष्य हो। इस दुनिया में किसी काम के नहीं हो आप।' वह व्यक्ति मन में समझा कि मैं ऐसा कहूँगा, तब फिर ये दादा मुझे बड़ा इनाम देंगे। अरे बेवकूफ, इसका इनाम होता होगा? बेटा उल्टा करता हो, तब उसे हम 'क्यों ऐसा किया? अब ऐसा मत करना।' ऐसे नाटकीय बोलना चाहिए। नहीं तो बेटा ऐसा ही समझेगा कि हम जो कुछ कर रहे हैं वह करेक्ट ही है। क्योंकि पिताजी ने एक्सेप्ट किया है। ऐसा नहीं बोले, इसलिए तो सिर पर सवार हो गए हैं। बोलना सब है पर नाटकीय! बच्चों को रात को बैठाकर समझाएँ, बातचीत करें, घर के सभी कोनों में कचरा तो साफ करना पड़ेगा न? बच्चों को ज़रा-सा हिलाने की ही ज़रूरत होती है। वैसे संस्कार तो होते हैं, पर हिलाने की ज़रूरत होती है। उनको हिलाने में कोई गुनाह है?

प्रश्नकर्ता : दादा, मेरा बेटा पंद्रह सौ रुपये महीने कमाता है, मैं रिटायर्ड हूँ, उसके साथ रहता हूँ। अब बेटा और बहू मुझे टोकते रहते हैं कि आप ऐसा क्यों करते हो? बाहर क्यों जाते हो? इसलिए मैं उनको कहनेवाला हूँ कि मैं घर में से चला जाऊँगा।

दादाश्री : खिलाते-पिलाते हैं अच्छी तरह से?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादा।

दादाश्री : तब फिर चला जाऊँगा ऐसा नहीं बोलते। और कभी कहने के बाद में जाने का नहीं हो पाए, तो अपने बोल खुद को ही निगलने पड़े।

प्रश्नकर्ता : तब फिर मुझे उन्हें कुछ भी नहीं कहना चाहिए?

दादाश्री : बहुत हुआ तो धीरे से कहें कि ऐसा करो तो अच्छा, फिर मानना न मानना आपकी मरज़ी की बात है। आपकी धौल सामनेवाले को लगे ऐसी हो और उससे सामनेवाले में बदलाव होता हो तभी धौल मारना और यदि वह पोली धौल मारोगे तो वह उल्टा विफरेगा। उससे उत्तम तो धौल नहीं मारनी वह है।

घर में चार बच्चे हों, उनमें से दो की कोई भूल नहीं हो तब भी बाप उनको डाँटता रहता है और दूसरे दो भूल करते ही रहते हों, फिर भी उन्हें कुछ नहीं करता। यह सब उसके पूर्व के रूटकॉज़ के कारण है।

उसकी तो आशा ही मत रखना

प्रश्नकर्ता : बच्चों को चिरंजीवी क्यों कहते होंगे?

दादाश्री : चिरंजीवी नहीं लिखें तो दूसरे शब्द घुस जाएँगे। यह बेटा बड़ा हो और सुखी हो, हमारी अरथी उठने से पहले उसे सुखी देखें ऐसी भावना है न? फिर भी अंदर मन में ऐसी आशा है कि यह बुढ़ापे में सेवा करे। ये आम के पेड़ क्यों उगाते हैं? आम खाने के लिए। पर आज के बच्चे, वे आम के पेड़ कैसे हैं? उनमें दो ही आम आएँगे और बाप के

पास से दूसरे दो आम माँगेंगे। इसलिए आशा मत रखना।

एक भाई कहते हैं कि मेरा बेटा कहता है कि आपको महीने के सौ रुपये भेजूँ? तब वे भाई कहते हैं कि मैंने तो उसे कह दिया कि भाई, मुझे तेरे बासमती की ज़रूरत नहीं है, मेरे यहाँ बाजरा उगता है। उससे पेट भरता है। यह नया व्यापार कहाँ शुरू करें? जो है उसमें संतोष है।

'मित्रता', वह भी 'एडजस्टमेन्ट'

प्रश्नकर्ता : बच्चों को मेहमान मानें?

दादाश्री : मेहमान मानने की ज़रूरत नहीं है। इन बच्चों को सुधारने के लिए एक रास्ता है, उनके साथ मित्रता करो। हमने तो बचपन से ही यह रास्ता चुना था। इसलिए इतने छोटे बच्चे के साथ भी मित्रता है और पचासी साल के बूढ़े के साथ भी मित्रता! बच्चों के साथ मित्रता का सेवन करना चाहिए। बच्चे प्रेम ढूँढते हैं, पर प्रेम उनको मिलता नहीं है। इसलिए फिर उनकी मुश्किलें वे ही जानें, कह भी नहीं सकते और सह भी नहीं सकते। आज के युवाओं के लिए रास्ता हमारे पास है। इस जहाज का मस्तूल किस तरफ लेना, वह हमें अंदर से ही रास्ता मिलता है। मेरे पास प्रेम ऐसा उत्पन्न हुआ है कि जो बढ़ता नहीं और घटता भी नहीं। बढ़ता-घटता है वह आसक्ति कहलाता है। जो बढ़े-घटे नहीं वह परमात्म प्रेम है। इसीलिए चाहे वह मनुष्य वश में हो जाता है। मुझे किसी को वश में करना नहीं है, फिर भी प्रेम में हरकोई वश में रहा करता है, हम तो निमित्त हैं।

खरा धर्मोदय ही अब

प्रश्नकर्ता : इस नयी प्रजा में से धर्म का लोप किसलिए होता जा रहा है?

दादाश्री : धर्म का लोप तो हो ही गया है, लोप होना बाकी ही नहीं रहा। अब तो धर्म का उदय हो रहा है। लोप हो जाता है, तब उदय की शुरूआत होती है। जैसे इस सागर में भाटा पूरा हो, तब आधे घंटे में

ज्वार की शुरूआत होती है। उसी तरह यह जगत् चलता रहता है। ज्वार-भाटा नियम के अनुसार। धर्म के बिना तो मनुष्य जी ही नहीं सकता। धर्म के अलावा दूसरा आधार ही क्या है मनुष्य को?

ये बच्चे तो दर्पण हैं। बच्चों के ऊपर से पता चलता है कि हममें कितनी भूल है।

बाप रातभर सोए नहीं और बेटा आराम से सोता है, उसमें बाप की भूल है। मैंने बाप से कहा कि, 'इसमें तेरी ही भूल है। तूने ही पिछले जन्म में बेटे को सिर पर चढ़ाया था, बहकाया था, और वह भी तेरी किसी लालच की खातिर।' यह तो समझने जैसा है। यह अन्सर्टिफाइड फादर और अन्सर्टिफाइड मदर की कोख से बच्चे जन्मे हैं, उसमें वे क्या करें? बीस-पच्चीस वर्ष के हों, तब बाप बन जाते हैं। अभी तक उनका ही बाप उन पर चिल्ला रहा होता है! यह तो रामभरोसे फादर बन जाते हैं। इसमें बच्चों का क्या दोष? ये बच्चे हमारे पास सारी भूलें कबूल करते हैं, चोरी करी हो, तब भी कबूल कर लेते हैं। आलोचना तो गज़ब का पुरुष हो वहीं पर होती है। हिन्दुस्तान का किसी अद्‌भुत स्टेज में बदलाव हो जाएगा।

संस्कार प्राप्त करवाए, वैसा चारित्र चाहिए

प्रश्नकर्ता : दादा, घरसंसार पूरा शांतिमय रहे और अंतरात्मा का जतन हो ऐसा कर दीजिए।

दादाश्री : घरसंसार शांतिमय रहे उतना ही नहीं, मगर बच्चे भी हमारा देखकर अधिक संस्कारी हों, ऐसा है। यह तो सब माँ-बाप का पागलपन देखकर बच्चे भी पागल हो गए हैं, क्योंकि माँ-बाप के आचार-विचार पद्धति अनुसार नहीं है। पति-पत्नी भी बच्चे बैठे हों तभी छेड़खानी करते हैं, इसलिए बच्चे बिगड़ें नहीं तो और क्या होगा? बच्चों में कैसे संस्कार पड़ते हैं? मर्यादा तो रखनी चाहिए न? इन अंगारों का कैसा ऑ लगता है? छोटा बच्चा अंगारो का ऑ रखता है न? माँ-बाप के मन फ्रेक्चर हो गए हैं, मन विह्वल हो गए हैं। वाणी चाहे जैसी बोलते हैं। सामनेवाले को दुःखदायी हो जाए वैसी वाणी बोलते हैं, इसीलिए बच्चे बिगड़ जाते हैं। हम ऐसा बोलें

कि पति को दुःख हो और पति ऐसा बोले कि हमें दुःख हो। यह तो सब पज़ल खड़ा हो गया है। हिन्दुस्तान में ऐसा नहीं होता। परन्तु यह कलियुग का निमित्त है, इसलिए ऐसा ही होता है। उसमें भी यह एक गज़ब का विज्ञान निकला है, तो जिसे मिलेगा उसका काम निकल जाएगा।

इसलिए सद्भावना की ओर मोड़ो

प्रश्नकर्ता : बच्चे टेढ़े चलें, तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : बच्चे टेढ़े रास्ते जाएँ, तब भी हमें उसे देखते रहना है और जानते रहना है। और मन में भाव तय करना है और प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए कि इस पर कृपा करो।

हमें तो जो हुआ वही करेक्ट कहना चाहिए। जो भुगते उसीकी भूल है। हुआ वही करेक्ट कहकर चलो तो हल आएगा। भगवान ने कहा, 'तू सुधर तो तेरी हाज़िरी से सब सुधरेगा।'

छोटे बेटे-बेटियों को समझाना चाहिए कि सुबह नहा-धोकर सूर्यपूजा करें और रोज़ संक्षेप में बोलें कि मुझे तथा जगत् को सद्बुद्धि दो, जगत् का कल्याण करो। इतना ही बोलो तो वह संस्कार मिले कहलाएँगे, और माँ-बाप का कर्मबंधन छूटा। यह तो सब अनिवार्य है। माँ-बाप ने पाँच हज़ार का उधार लेकर बेटे को पढ़ाया हो, फिर भी किसी दिन बेटा उद्धताई करे तो बोलकर बताना नहीं चाहिए कि हमने तुझे पढ़ाया। वह तो हम ड्यूटी बाउन्ड थे, फ़र्ज़ था। फ़र्ज़ था, वह किया। हमें अपना फ़र्ज़ निभाना है।

५. समझ से सोहे गृहसंसार

मतभेद में समाधान किस प्रकार?

काल विचित्र आ रहा है। आँधियों पर आँधियाँ आनेवाली हैं! इसलिए सावधान रहना। ये जैसे पवन की आँधियाँ आती हैं न वैसे कुदरत की आँधी आ रही है। मनुष्यों के सिर पर भारी मुश्किलें हैं। शकरकंद भट्ठी में भुनता है, वैसे लोग भुन रहे हैं। किसके आधार पर जी रहे हैं, उसकी खुद को भी समझ नहीं है। अपने आपमें से श्रद्धा भी चली गई है! अब क्या हो? घर में वाइफ के साथ मतभेद हो जाए तो उसका समाधान करना आता नहीं है, बच्चों के साथ मतभेद खड़ा हो जाए तो उसका समाधान करना नहीं आता है और उलझन में रहता है।

प्रश्नकर्ता : पति तो ऐसा ही कहता है न कि वाइफ समाधान करे, मैं नहीं करूँगा।

दादाश्री : हं... यानी कि लिमिट पूरी हो गई। वाइफ समाधान करे और हम समाधान न करें तो अपनी लिमिट हो गई पूरी। खरा पुरुष हो न तो वह ऐसा बोले कि वाइफ खुश हो जाए और ऐसे करके गाड़ी आगे बढ़ाए। और आप तो पंद्रह-पंद्रह दिनों तक, महीनों तक गाड़ी खड़ी रखते हो, वह नहीं चलता। जब तक सामनेवाले का मन का समाधान नहीं होगा तब तक आपको मुश्किल है। इसीलिए समाधान करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले का समाधान हो गया, किस तरह कहा जाएगा? सामनेवाले का समाधान हो जाए, पर उसमें उसका अहित होता हो तो?

दादाश्री : वह आपको देखना नहीं है। सामनेवाले का अहित हो,

वह तो सामनेवाले को देखना है। आपको सामनेवाले का हिताहित देखना है, पर आप हित देखनेवाले में, आपमें शक्ति क्या है? आप अपना ही हित नहीं देख सकते, फिर दूसरे का हित क्या देखते हो? सब अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार हित देखते हैं, उतना हित देखना चाहिए। पर सामनेवाले के हित की खातिर टकराव खड़ा हो, ऐसा नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले का समाधान करने का हम प्रयत्न करें, पर उसमें परिणाम अलग ही आनेवाला है, ऐसा हमें पता हो तो उसका क्या करना चाहिए?

दादाश्री : परिणाम कुछ भी आए, हमें तो 'सामनेवाले का समाधान करना है' इतना निश्चित रखना है। 'समभाव से निकाल' करने का निश्चित करो, फिर निकाल हो या न हो वह पहले से देखना नहीं है। और निकाल होगा। आज नहीं तो दूसरे दिन होगा, तीसरे दिन होगा, गाढ़ा हो तो दो वर्ष में, तीन वर्ष में या चार वर्ष में होगा। वाइफ के ऋणानुबंध बहुत गाढ़ होते हैं, बच्चों के गाढ़ होते हैं, माँ-बाप के गाढ़ होते हैं, वहाँ ज़रा ज़्यादा समय लगता है। ये सब अपने साथ के साथ ही होते हैं, वहाँ निकाल धीरे-धीरे होता है। पर हमने निश्चित किया है कि जब हो तब 'हमें समभाव से निकाल करना है', इसलिए एक दिन उसका निकाल होकर रहेगा, उसका अंत आएगा। जहाँ गाढ़ ऋणानुबंध हों, वहाँ बहुत जागृति रखनी पड़ती है, इतना छोटा-सा साँप हो पर सावधान, और सावधान ही रहना पड़ता है। और यदि बेखबर रहें, अजाग्रत रहें तो समाधान होता नहीं। सामनेवाला व्यक्ति बोल जाए और हम भी बोल जाएँ, बोल गए उसमें हर्ज नहीं है परन्तु बोल जाने के पीछे हमें 'समभावे निकाल' करना है ऐसा निश्चय रहा हुआ है इसलिए द्वेष रहता नहीं है। बोला जाना वह पुद्‌गल का है और द्वेष रहना, उसके पीछे खुद का आधार रहा हुआ है। इसलिए हमें तो 'समभावे निकाल' करना है, ऐसे निश्चित करके काम करते जाओ, हिसाब चुकता हो ही जाएँगे। और आज माँगनेवाले को नहीं दिया जा सका तो कल दिया जाएगा, होली पर दिया जाएगा, नहीं तो दिवाली पर दिया जाएगा। पर माँगनेवाला ले ही जाएगा।

इस जगत् को चुकता करने के बाद अरथी में जाते हैं। इस भव के तो चुकता कर डालता है ही चाहे जिस रास्ते, फिर नये बाँधे वे अलग। अब हम नये बाँधते नहीं है और पुराने इस भव में चुकता हो ही जानेवाले हैं। सारा हिसाब चुकता हो गया इसलिए भाई चले अरथी लेकर! जहाँ किसी भी खाते में बाकी रहा हो, वहाँ थोड़े दिन अधिक रहना पड़ेगा। इस भव का इस देह के आधार पर सब चुकता ही हो जाता है। फिर यहाँ जितनी गाँठें डाली हों, वे साथ में ले जाता है और फिर वापिस नया हिसाब शुरू होता है।

...इसलिए टकराव टालो

इसलिए जहाँ हो वहाँ से टकराव को टालो। यह टकराव करके इस लोक का तो बिगाड़ते हैं परन्तु परलोक भी बिगाड़ते हैं! जो इस लोक का बिगाड़ता है, वह परलोक का बिगाड़े बिना रहता ही नहीं! यह लोक सुधरे, उसका परलोक सुधरता है। इस भव में हमें किसी भी प्रकार की अड़चन नहीं आई तो समझना कि परभव में भी अड़चन है ही नहीं और यहाँ अड़चन खड़ी की तो वे सब वहाँ पर ही आनेवाली हैं।

प्रश्नकर्ता : टकराव में टकराव करें तो क्या होता है?

दादाश्री : सिर फूट जाता है! एक व्यक्ति मुझे संसार पार करने का रास्ता पूछ रहा था। उसे मैंने कहा कि टकराव टालना। मुझे पूछा कि टकराव टालना मतलब क्या? तब मैंने कहा कि हम सीधे चल रहे हों और बीच में खंभा आए तो हमें घूमकर जाना चाहिए या खंभे के साथ टकराना चाहिए? तब उसने कहा, 'ना! टकराएँगे तो सिर फूट जाएगा।'

यह पत्थर ऐसे बीच में पड़ा हुआ हो तो हमें क्या करना चाहिए?घ घूमकर जाना चाहिए। यह भैंस का भाई रास्ते में बीच में आए तो क्या करोगे? भैंस के भाई को पहचानते हो न आप? वह आता हो तो घूमकर जाना पड़ता है, नहीं तो सिर मारे तो तोड़ डाले सब। वैसे ही मनुष्य भी कुछ ऐसे आ रहे हों तो घूमकर जाना पड़ता है। वैसा ही टकराव का है। कोई मनुष्य डाँटने आए, शब्द बमगोले जैसे आते हों तब हमें समझ जाना

है कि टकराव टालना है। अपने मन पर असर बिलकुल हो नहीं फिर भी कुछ असर अचानक हो गया, तब हम समझें कि सामनेवाले के मन का असर अपने ऊपर पड़ा, इसीलिए हमें खिसक जाना चाहिए। वे सब टकराव हैं। वह जैसे-जैसे समझते जाओगे, वैसे-वैसे टकराव को टालते जाओगे, टकराव टाले उससे मोक्ष होता है। यह जगत् टकराव ही है, स्पंदन स्वरूप है।

एक व्यक्ति को सन् इक्यावन में यह एक शब्द दिया था। 'टकराव टाल' कहा था और ऐसे उसको समझाया था। मैं शास्त्र पढ़ रहा था, तब उसने मुझे आकर कहा कि दादा, मुझे कुछ दीजिए। वह मेरे वहाँ नौकरी करता था, तब मैंने उससे कहा, 'तुझे क्या दें? तू सारी दुनिया के साथ लड़कर आता है, मारपीट करके आता है।' रेल्वे में भी लड़ाई-झगड़ा करता है, यों तो पैसों का पानी करता है और रेल्वे में जो नियमानुसार भरना है, वह नहीं भरता और ऊपर से झगड़ा करता है, यह सब मैं जानता था। इसलिए मैंने उसे कहा कि तू टकराव टाल। दूसरा कुछ तुझे सीखने की ज़रूरत नहीं है। वह आज तक अभी भी पालन कर रहा है। अभी आप उसके साथ टकराव करने के नये-नये तरीके ढूँढ निकालो, तरह-तरह की गालियाँ दो, फिर भी वह ऐसे खिसक जाएगा।

इसलिए टकराव टालो, टकराव से यह जगत् खड़ा हुआ है। उसे भगवान ने बैर से खड़ा हुआ है, ऐसा कहा है। हरएक मनुष्य, अरे जीव मात्र बैर रखता है। ज़्यादा कुछ हुआ कि बैर रखे बगैर रहता नहीं है। वह फिर साँप हो, बिच्छू हो, बैल हो या भैंसा हो, कोई भी हो, परन्तु बैर रखता है। क्योंकि सबमें आत्मा है। आत्मशक्ति सभी में एक-सी है। क्योंकि यह पुद्गल की कमज़ोरी के कारण सहन करना पड़ता है। परन्तु सहन करने के साथ ही वह बैर रखे बगैर रहता नहीं है और अगले जन्म में वह उनका बैर वसूलता है वापिस!

सहन? नहीं, सोल्युशन लाओ

प्रश्नकर्ता : दादा, टकराव टालना आपने जो कहा है, मतलब सहन करना ऐसा अर्थ होता है न?

दादाश्री : टकराव टालने का मतलब सहन करना नहीं है। सहन करोगे तो कितना करोगे? सहना करना और स्प्रिंग दबाना, वह दोनों एक जैसा है। स्प्रिंग दबाई हुई कितने दिन रहेगी? इसलिए सहन करना तो सीखना ही मत, सोल्युशन लाना सीखो।

अज्ञान दशा में तो सहन ही करना होता है। फिर एक दिन स्प्रिंग उछले वैसे सब गिरा दे, पर वह तो कुदरत का नियम ही ऐसा है।

ऐसा जगत् का नियम ही नहीं कि किसी के कारण हमें सहन करना पड़े। जो कुछ सहन करना पड़ता है दूसरों के हिसाब से, वह अपना ही हिसाब होता है। परन्तु हमें पता नहीं चलता कि यह कौन-से खाते का, कहाँ का माल है? इसीलिए हम ऐसा समझते हैं कि इसने नया माल उधार देना शुरू किया। नया कोई देता ही नहीं, दिया हुआ ही वापिस आता है। अपने ज्ञान में सहन नहीं करना होता है। ज्ञान से जाँच लेना चाहिए कि सामनेवाला 'शुद्धात्मा' है। यह जो आया है वह मेरे ही कर्म के उदय से आया है, सामनेवाला तो निमित्त है। फिर हमें यह ज्ञान इटसेल्फ ही पज़ल सॉल्व कर देगा।

प्रश्नकर्ता : उसका अर्थ ऐसा हुआ कि मन में समाधान करना चाहिए कि यह माल था वह वापिस आया ऐसा न?

दादाश्री : वह खुद शुद्धात्मा है और उसकी प्रकृति है। प्रकृति यह फल देती है। हम शुद्धात्मा हैं, वह भी शुद्धात्मा हैं। अब दोनों को 'वायर' कहाँ लागू पड़ता है? वह प्रकृति और यह प्रकृति, दोनों आमने-सामने सब हिसाब चुका रहे हैं। उसमें इस प्रकृति के कर्म का उदय है इसलिए वह कुछ देता है। इसीलिए हमें कहना कि यह अपने ही कर्म का उदय है और सामनेवाला निमित्त है, वह दे गया इसलिए अपना हिसाब चोखा हो गया। यह सोल्युशन हो, वहाँ फिर सहन करने का रहता ही नहीं न?

सहन करने से क्या होगा? ऐसा स्पष्ट नहीं समझाओगे तो एक दिन वह स्प्रिंग कूदेगी। कूदी हुई स्प्रिंग आपने देखी है? मेरी स्प्रिंग बहुत कूदती थी। कई दिनों तक मैं बहुत सहन कर लेता था और फिर एक दिन स्प्रिंग

उछले तो सभी उड़ाकर रख दूँ। यह सब अज्ञान दशा का, मुझे उसका खयाल है। वह मेरे लक्ष्य में है। इसलिए तो कह देता हूँ न कि सहन करना सीखना मत। वह अज्ञानदशा में सहन करने का होता है। अपने यहाँ तो विश्लेषण कर देना है कि इसका परिणाम क्या, उसका परिणाम क्या, खाते में नियम अनुसार का देख लेना चाहिए, कोई वस्तु खाते की बाहर की होती नहीं है।

हिसाब चुके या कॉज़ेज़ पड़े?

प्रश्नकर्ता : नया लेन-देन न हो वह किस तरह होगा?

दादाश्री : नया लेन-देन किसे कहते हैं? कॉज़ेज़ को नया लेन-देन कहते हैं, यह तो इफेक्ट ही है सिर्फ! यहाँ जो-जो होता है वह सब इफेक्ट ही है और कॉज़ेज़ अदर्शनीय है। इन्द्रियों से कॉज़ेज़ दिखते नहीं है, जो दिखते हैं वे सब इफेक्ट है। इसलिए हमें समझना चाहिए कि हिसाब चुकते हो गया। नया जो होता है, वह तो अंदर हो रहा है, वह अभी नहीं दिखेगा, वह तो जब परिणाम आएगा तब। अभी वह तो हिसाब में लिखा नहीं गया है, नोंधबही में से अभी तो बहीखाते में आएगा।

प्रश्नकर्ता : पिछलेवाले पक्की बही का अभी आता है?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : यह टकराव होता है, वह 'व्यवस्थित' के आधार पर ही होता होगा न?

दादाश्री : हाँ, टकराव है वह 'व्यवस्थित' के आधार पर है, परन्तु ऐसा कब कहलाएगा? टकराव हो जाने के बाद। 'हमें टकराव नहीं करना है', ऐसा अपना निश्चय हो। सामने खंभा दिखे, तब फिर हम समझ जाएँ कि खंभा आया है, घूमकर जाना पड़ेगा, टकराना तो नहीं है। पर इसके बावजूद भी टकरा जाएँ तब हमें कहना चाहिए कि व्यवस्थित है। पहले से ही 'व्यवस्थित है' मानकर चलें तब तो 'व्यवस्थित' का दुरुपयोग हुआ कहलाएगा।

'न्याय स्वरूप', वहाँ उपाय तप

प्रश्नकर्ता : टकराव टालने की, 'समभावे निकाल' करने की हमारी वृत्ति होती है, फिर भी सामनेवाला व्यक्ति हमें परेशान करे, अपमान करे, तो क्या करना चाहिए हमें?

दादाश्री : कुछ नहीं। वह अपना हिसाब है, तो हमें उसका 'समभावे निकाल' करना है ऐसा निश्चित रखना चाहिए। हमें अपने नियम में ही रहना चाहिए, और हमें अपने आप अपना पज़ल सॉल्व करते रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सामनेवाला व्यक्ति अपना अपमान करे और हमें अपमान लगे, उसका कारण अपना अहंकार है?

दादाश्री : सच में तो सामनेवाला अपमान करता है, तब हमारा अहंकार पिघला देता है, और वह भी वो ड्रामेटिक अहंकार। जितना एक्सेस अहंकार होता है वह पिघलता है, उसमें क्या बिगड़ जानेवाला है? ये कर्म छूटने नहीं देते हैं। हमें तो छोटा बच्चा सामने हो तब भी कहना चाहिए, अब छुटकारा कर।

आपके साथ किसी ने अन्याय किया और आपको ऐसा हो कि मेरे साथ यह अन्याय क्यों किया, तो आपको कर्म बँधेगा। क्योंकि आपकी भूल को लेकर सामनेवाले को अन्याय करना पड़ता है। अब यहाँ कहाँ मति पहुँचे? जगत् तो कलह करके रख देता है! भगवान की भाषा में कोई न्याय भी करता नहीं है, और अन्याय भी करता नहीं है। करेक्ट करता है। अब इन लोगों की मति कहाँ से पहुँचे? घर में मतभेद कम हों, तोड़फोड़ कम हो, आसपासवालों का प्रेम बढ़े तो समझें कि बात समझ में आई। नहीं तो बात समझ में आई नहीं।

ज्ञान कहता है कि तू न्याय खोजेगा तो तू मूर्ख है! इसलिए उसका उपाय है, तप!

किसी ने आपके साथ अन्याय किया हो तो वह भगवान की भाषा में करेक्ट हैं, जिसे संसार की भाषा में गलत किया ऐसा कहेंगे।

यह जगत् न्यायस्वरूप है, गप्प नहीं है। एक मच्छर भी ऐसे ही आपको छुए ऐसा नहीं है। मच्छर ने छुआ इसलिए आपका कोई कारण है। बाकी यों ही एक स्पंदन भी आपको छुए ऐसा नहीं है। आप संपूर्ण स्वतंत्र हो। किसी की दख़ल आपमें नहीं है।

प्रश्नकर्ता : टकराव में मौन हितकारी है या नहीं?

दादाश्री : मौन तो बहुत हितकारी कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : परन्तु दादा, बाहर मौन होता है, परन्तु अंदर तो बहुत घमासान चल रहा होता है, उसका क्या हो?

दादाश्री : वह काम का नहीं है। मौन तो सबसे पहले मन का चाहिए।

उत्तम तो, एडजस्ट एवरीव्हेर

प्रश्नकर्ता : जीवन में स्वभाव नहीं मिलते इसलिए टकराव होता है न?

दादाश्री : टकराव होता है उसका ही नाम संसार है!

प्रश्नकर्ता : टकराव होने का कारण क्या है?

दादाश्री : अज्ञानता।

प्रश्नकर्ता : सिर्फ सेठ के साथ ही टकराव होता है ऐसा नहीं है, सबके साथ होता है, उसका क्या?

दादाश्री : हाँ, सबके साथ होता है। अरे! इस दीवार के साथ भी होता है।

प्रश्नकर्ता : उसका रास्ता क्या होगा?

दादाश्री : हम बताते हैं, फिर दीवार के साथ भी टकराव नहीं होगा। इस दीवार के साथ टकराता है उसमें किसका दोष? जिसे लगा उसका

दोष। उसमें दीवार को क्या? चिकनी मिट्टी आए और आप फिसल जाएँ उसमें भूल आपकी है। चिकनी मिट्टी तो निमित्त है। हमें निमित्त को समझकर अंदर उँगलिया गड़ा देनी पड़ती हैं। चिकनी मिट्टी तो होती ही है, और फिसला देना, वह तो उसका स्वभाव ही है।

प्रश्नकर्ता : पर कलह खड़ा होने का कारण क्या है? स्वभाव नहीं मिलता, इसलिए?

दादाश्री : अज्ञानता है इसलिए। संसार उसका नाम कि कोई किसी का किसी से स्वभाव मिलता ही नहीं। यह 'ज्ञान' मिले उसका एक ही रास्ता है, 'एडजस्ट एवरीव्हेर'। कोई तुझे मारे फिर भी तुझे उसके साथ एडजस्ट हो जाना है।

प्रश्नकर्ता : वाइफ के साथ कई बार टकराव हो जाता है। मुझे ऊब भी होती है।

दादाश्री : ऊब हो उतना ही नहीं, पर कुछ तो जाकर समुद्र में डूब मरते हैं, ब्राँडी पीकर आते हैं।

सबसे बड़ा दु:ख किसका है? डिसएडजस्टमेन्ट का, वहाँ एडजस्ट एवरीव्हेर करें, तो क्या हर्ज है?!

प्रश्नकर्ता : उसमें तो पुरुषार्थ चाहिए।

दादाश्री : कुछ भी पुरुषार्थ नहीं, मेरी आज्ञा पालनी है कि 'दादा' ने कहा है कि एडजस्ट एवरीव्हेर। तो एडजस्ट होता रहेगा। बीवी कहे कि 'आप चोर हो।' तो कहना कि 'यु आर करेक्ट।' और थोड़ी देर बाद वह कहे कि 'नहीं, आपने चोरी नहीं की।' तब भी, 'यु आर करेक्ट' कहें।

ऐसा है, ब्रह्मा का एक दिन, उतनी अपनी पूरी ज़िन्दगी है! ब्रह्मा के एक दिन का जीना, और यह क्या धाँधली? शायद यदि हमें ब्रह्मा के सौ वर्ष जीने के होते तब तो हम समझें कि ठीक है, एडजस्ट क्यों हो? 'दावा कर' कहें। पर यह तो जल्दी पूरा करना हो उसका क्या करना पड़ेगा?

एडजस्ट हो जाएँ या दावा दायर कर, कहें? पर यह तो एक दिन ही है, यह तो जल्दी पूरा करना है। जो काम जल्दी पूरा करना हो उसे क्या करना पड़ता है? एडजस्ट होकर छोटा कर देना चाहिए, नहीं तो खिंचता ही जाता है या नहीं खिंचता?

बीवी के साथ लड़ें तो रात को नींद आएगी क्या? और सुबह नाश्ता भी अच्छा नहीं मिलेगा।

हमने इस संसार की बहुत सूक्ष्म खोज की है। अंतिम प्रकार की खोज करके हम ये सब बातें कर रहे हैं। व्यवहार में किस तरह रहना चाहिए, वह भी देते हैं और मोक्ष में किस तरह जा सकते हैं, वह भी देते हैं। आपकी अड़चनें किस तरह से कम हों, वही हमारा हेतु है।

घर में चलन छोड़ना तो पड़ेगा न?

घर में हमें अपना चलन नहीं रखना चाहिए, जो व्यक्ति चलन रखता है उसे भटकना पड़ता है। हमने भी हीराबा से कह दिया था कि हम खोटा सिक्का हैं। हमें भटकने का पुसाता नहीं है न! नहीं चलनेवाला सिक्का हो उसका क्या करें? उसे भगवान के पास बैठा रहना होता है। घर में आपका चलन चलाने जाओ तो टकराव होता है न? हमें तो अब 'समभावे निकाल' करना है। घर में पत्नी के साथ 'फ्रेन्ड' की तरह रहना चाहिए। वे आपकी 'फ्रेन्ड' और आप उनके 'फ्रेन्ड'। और यहाँ कोई नोंध करता नहीं कि चलन तेरा था या उनका था। म्युनिसिपालिटी में नोंध होती नहीं और भगवान के वहाँ भी नोंध होती नहीं है। हमें नाश्ते के साथ काम है या चलन के साथ काम है? इसलिए कौन-से रास्ते नाश्ता अच्छा मिलेगा वह ढूँढ निकालो। यदि म्युनिसिपालिटीवाले नोंध रख रहे होते कि किसका चलन घर में है, तो मैं भी एडजस्ट नहीं होता। यह तो कोई बाप भी नोंध करता नहीं है।

हमारे पैर दुःखते हों और बीवी पैर दबा रही हो, उस समय कोई आए और यह देखकर कहे कि ओहोहो! आपका तो घर में चलन बहुत अच्छा है। तब हम कहें कि, 'ना, चलन उनका ही चलता है।' और यदि

आप कहो कि हाँ, हमारा ही चलन है, तो वह पैर दबाने का छोड़ देगी। उससे बेहतर तो हम कहें कि ना, उनका ही चलन है।

प्रश्नकर्ता : उसे मक्खन लगाया नहीं कहा जाएगा?

दादाश्री : ना, वह स्ट्रेट वे कहलाता है, और दूसरे सब टेढ़े-मेढ़े रास्ते कहलाते हैं। इस दूषमकाल में सुखी होने का, यह मैं कहता हूँ वह, अलग रास्ता है। मैं इस काल के लिए कह रहा हूँ। हम अपना नाश्ता किसलिए बिगाड़ें? सुबह में नाश्ता बिगड़े, दोपहर में नाश्ता बिगड़े, सारा दिन बिगड़े।

रिएक्शनरी प्रयत्न नहीं ही किए जाएँ

प्रश्नकर्ता : दोपहर को वापिस सुबह का टकराव भूल भी जाते हैं और शाम को वापिस नया हो जाता है।

दादाश्री : वह हम जानते हैं, टकराव किस शक्ति से होता है, वह टेढ़ा बोलती है उसमें कौन-सी शक्ति काम कर रही है। बोलकर वापिस एडजस्ट हो जाते हैं। वह सब ज्ञान से समझ में आए ऐसा है, फिर भी एडजस्ट होना चाहिए जगत् में। क्योंकि हरएक वस्तु एन्डवाली होती है। और शायद वह लम्बे समय तक चले, फिर भी आप उसे हेल्प नहीं करते, अधिक नुकसान करते हो। अपने आपको नुकसान करते हो और सामनेवाले का भी नुकसान होता है! उसे कौन सुधार सकेगा? जो सुधरा हुआ हो वही सुधार सकेगा। खुद का ही ठिकाना नहीं हो वह सामनेवाले को किस तरह सुधार सकेगा?

प्रश्नकर्ता : हम सुधरे हुए हों तो सुधार सकेंगे न?

दादाश्री : हाँ, सुधार सकोगे।

प्रश्नकर्ता : सुधरे हुए की परिभाषा क्या है?

दादाश्री : सामनेवाले मनुष्य को आप डाँट रहे हों तब भी उसे उसमें प्रेम दिखे। आप उलाहना दे, तब भी उसे आपमें प्रेम ही दिखे की

अहोहो! मेरे फादर का मुझ पर कितना प्रेम है! उलाहना दो, परन्तु प्रेम से दो तो सुधरेंगे। ये कॉलेज में यदि प्रोफेसर उलाहना देने जाएँ तो प्रोफेसरों को सब मारेंगे।

सामनेवाला सुधरे, उसके लिए हमारे प्रयत्न रहने चाहिए। पर यदि प्रयत्न रिएक्शनरी हों, वैसे प्रयत्नो में नहीं पड़ना चाहिए। हम उसे झिड़कें और उसे खराब लगे वह प्रयत्न नहीं कहलाता। प्रयत्न अंदर करने चाहिए, सूक्ष्म प्रकार से! स्थूल तरह से यदि हमें नहीं करना आता हो तो सूक्ष्म प्रकार से प्रयत्न करने चाहिए। अधिक उलाहना नहीं देना हो तो थोड़े में ही कह देना चाहिए कि हमें यह शोभा नहीं देता है। बस इतना ही कहकर बंद रखना चाहिए। कहना तो पड़ता है पर कहने का तरीका होता है।

...नहीं तो प्रार्थना का एडजस्टमेन्ट

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले को समझाने मैंने अपना पुरुषार्थ किया, फिर वह समझे या नहीं समझे वह उसका पुरुषार्थ?

दादाश्री : इतनी ही जिम्मेदारी हमारी है कि हम उसे समझा सकते हैं। फिर वह नहीं समझे तो उसका उपाय नहीं है। फिर हमें इतना कहना है कि दादा भगवान! इनको सद्‌बुद्धि देना। इतना कहना पड़ेगा। कुछ उसे ऊपर नहीं लटका सकते, गप्प नहीं है। यह 'दादा' का एडजस्टमेन्ट का विज्ञान है, आश्चर्यकारी एडजस्टमेन्ट है यह। और जहाँ एडजस्ट नहीं हो पाए, वहाँ उसका स्वाद तो आता ही रहेगा न आपको? यह डिसएडजस्टमेन्ट यही मूर्खता है। क्योंकि वह जाने कि अपना स्वामित्व मैं छोड़ूँगा नहीं, और मेरा ही चलन रहना चाहिए। तो सारी ज़िन्दगी भूखा मरेगा और एक दिन 'पोइज़न' पड़ेगा थाली में। सहज चलता है, उसे चलने दो न! यह तो कलियुग है! वातावरण ही कैसा है? इसलिए बीवी कहे कि आप नालायक हो, तो कहना 'बहुत अच्छा।'

प्रश्नकर्ता : हमें बीवी 'नालायक' कहे, वह तो उकसाया हो ऐसा लगता है।

दादाश्री : तो फिर हमें क्या उपाय करना चाहिए? तू दो बार नालायक है, ऐसा उसे कहना है? और उससे कुछ हमारा नालायकपन मिट गया? हम पर मुहर लगी, मतलब हम दो बार मुहर लगाएँ? फिर नाश्ता बिगड़े, सारा दिन बिगड़े।

प्रश्नकर्ता : एडजस्टमेन्ट की बात है, उसके पीछे भाव क्या है फिर कहाँ पहुँचना है?

दादाश्री : भाव शांति का है, शांति का हेतु है। अशांति पैदा नहीं करने का कीमिया है।

'ज्ञानी' के पास से एडजस्टमेन्ट सीखें

एक भाई थे। वे रात को दो बजे न जाने क्या-क्या करके घर आते होंगे, उसका वर्णन करने जैसा नहीं है। आप समझ जाओ। तब फिर घर में सबने निश्चय किया कि इनको डाँटें या घर में नहीं घुसने दें? क्या उपाय करें? वे उसका अनुभव कर आए। बड़े भाई कहने गए तो उसने बड़े भाई से कहा कि, 'आपको मारे बगैर छोड़ूँगा नहीं।' फिर घरवाले सभी मुझे पूछने आए कि, 'इसका क्या करें? यह तो ऐसा बोलता है।' तब मैंने घरवालों को कह दिया कि किसी को उसे एक अक्षर भी कहना नहीं है। आप बोलोगे तो वह ज़्यादा उद्दंड हो जाएगा, और घर में घुसने नहीं दोगे तो वह विद्रोह करेगा। उसे जब आना हो, तब आए और जब जाना हो, तब जाए। हमें राइट भी नहीं बोलना है और रोंग भी नहीं बोलना है, राग भी नहीं रखना है और द्वेष भी नहीं रखना है, समता रखनी है, करुणा रखनी है। तब तीन-चार वर्षों बाद वो भाई अच्छे हो गए। आज वो भाई धंधे में बहुत मदद करता है। जगत् निकम्मा नहीं है, परन्तु काम लेना आना चाहिए। सभी भगवान हैं, और हरएक अलग-अलग काम लेकर बैठे हैं, इसलिए नापसंद जैसा रखना मत।

आश्रित को कुचलना, घोर अन्याय

प्रश्नकर्ता : मेरी पत्नी के साथ मेरा बिलकुल बनता नहीं है। चाहे

जितनी निर्दोष बात करूँ, मेरा सच हो फिर भी वह उल्टा समझती है। बाहर का जीवन संघर्ष चलता है, पर यह व्यक्ति संघर्ष क्या होगा?

दादाश्री : ऐसा है, मनुष्य खुद के हाथ के नीचेवाले मनुष्यों को इतना अधिक कुचलता है, इतना अधिक कुचलता है कि कुछ बाकी ही नहीं रखता। खुद के हाथ के नीचे कोई मनुष्य आया हो, फिर वह स्त्री के रूप में हो या पुरुष के रूप में हो, खुद की सत्ता में आया उसे कुचलने में कुछ बाकी ही नहीं रखते।

घर के लोगों के साथ कलह कभी भी नहीं करनी चाहिए। उसी कमरे में पड़े रहना है वहाँ कलह किस काम की? किसी को परेशान करके खुद सुखी हो जाएँ, ऐसा कभी भी नहीं होता, और हमें तो सुख देकर सुख लेना है। हम घर में सुख दें तो ही सुख मिलेगा और चाय-पानी भी ठीक से बनाकर देंगे, नहीं तो चाय-पानी भी बिगाड़कर देंगे। कमज़ोर पति पत्नी पर सूरमा। जो अपने संरक्षण में हों, उनका भक्षण किस तरह किया जाए? जो खुद के हाथ के नीचे आया हो उसका रक्षण करना, वही सबसे बड़ा ध्येय होना चाहिए। उससे गुनाह हुआ हो तो भी उसका रक्षण करना चाहिए। ये पाकिस्तानी सैनिक अभी सब यहाँ कैदी हैं, फिर भी उन्हें कैसा रक्षण देते हैं! तब ये तो घर के ही है न! ये तो बाहरवालों के सामने म्याऊँ हो जाते हैं, वहाँ झगड़ा नहीं करते और घर पर ही सब करते हैं। खुद की सत्ता के नीचे हो, उसे कुचलते रहते हैं और ऊपरी को साहब-साहब करते हैं। अभी यह पुलिसवाला डाँटे तो साहब-साहब कहेगा और घर पर वाइफ सच्ची बात कहती हो, तब उसे सहन नहीं होता और उसे डाँटता है, 'मेरे चाय के कप में चींटी कहाँ से आई?' ऐसा करके घरवालों को डराता है। उसके बदले तो शांति से चींटी निकाल ले न! घरवालों को डराता है और पुलिसवाले के सामने काँपता है! अब यह घोर अन्याय कहलाता है। हमें यह शोभा नहीं देता। स्त्री तो खुद की साझेदार कहलाती है। साझेदार के साथ क्लेश? यह तो क्लेश होता हो वहाँ कोई रास्ता निकालना पड़ता है, समझाना पड़ता है। घर में रहना है तो क्लेश किसलिए?

साइन्स समझने जैसा

प्रश्नकर्ता : हमें क्लेश नहीं करना हो, परन्तु सामनेवाला आकर झगड़े तो क्या करें? उसमें एक जाग्रत हो परन्तु सामनेवाला क्लेश करे तो वहाँ तो क्लेश होगा ही न?

दादाश्री : इस दीवार के साथ लड़े, तो कितना समय लड़ सकेगा? इस दीवार के साथ एक दिन सिर टकरा जाए तो हमें उसके साथ क्या करना चाहिए? सिर टकराया इसलिए हमारा दीवार के साथ में झगड़ा हो गया, तब फिर हमें दीवार को मारना चाहिए? उसी तरह ये खूब क्लेश करवाता हो, तो वे सब दिवारें हैं! उसमें सामनेवाले का क्या देखना? हमें अपने आप समझ जाना चाहिए कि यह दीवार जैसी है, ऐसा समझना चाहिए। फिर कोई मुश्किल नहीं।

प्रश्नकर्ता : हम मौन रहें तो सामनेवाले पर उल्टा असर होता है कि इनका ही दोष है, और वे अधिक क्लेश करते हैं।

दादाश्री : यह तो हमने मान लिया है कि मैं मौन रहा इसलिए ऐसा हुआ। रात को मनुष्य उठा और बाथरूम में जाते समय अंधेरे में दीवार के साथ टकरा गया, तो वहाँ हम मौन रहे इसलिए वह टकराई?

मौन रहो या बोलो, उसे स्पर्श नहीं करता है, कोई लेना-देना नहीं है। हमारे मौन रहने से सामनेवाले पर असर होता है, ऐसा कुछ होता नहीं, या अपने बोलने से सामनेवाले पर असर होता है ऐसा भी कुछ होता नहीं है। ओन्ली साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स, मात्र वैज्ञानिक सांयोगिक प्रमाण हैं। किसी की इतनी-सी भी सत्ता नहीं है। इतनी-सी सत्ता बगैर का जगत् है, उसमें कोई क्या करनेवाला है? इस दीवार के पास यदि सत्ता होती तो इन्हें भी सत्ता होती! इस दीवार से हमें झगड़ने की सत्ता है? उसी तरह सामनेवाले के साथ चीखने-चिल्लाने का क्या अर्थ? उसके हाथ में सत्ता ही नहीं है वहाँ! इसीलिए आप दीवार जैसे बन जाओ न! आप पत्नी को झिड़कते रहते हो, तो उसके अंदर भगवान बैठे हैं वे नोंध करते हैं कि यह मुझे झिड़काता है। और आपको वह झिड़काए तब आप

दीवार जैसे हो जाओ तो आपके अंदर बैठे भगवान आपको हेल्प करेंगे।

जो भुगते उसकी ही भूल

प्रश्नकर्ता : कुछ ऐसे होते हैं कि हम चाहे जितना अच्छा व्यवहार करें फिर भी वे समझते नहीं है।

दादाश्री : वे न समझते हों तो उसमें अपनी ही भूल है कि वह समझदार क्यों नहीं मिला हमें? उसका संयोग हमें ही क्यों मिला? जिस-जिस समय हमें कुछ भी भुगतना पड़ता है, वह भुगतना अपनी ही भूल का परिणाम है।

प्रश्नकर्ता : तो हमें ऐसा समझना चाहिए कि मेरे कर्म ही ऐसे हैं?

दादाश्री : बेशक। अपनी भूल के बिना हमें भुगतना होता नहीं है। इस जगत् में ऐसा कोई नहीं कि जो हमें थोड़ा भी, किंचित् मात्र दु:ख दे और यदि कोई दु:ख देनेवाला है तो वह अपनी ही भूल है। तत्त्व का दोष नहीं है, वह तो निमित्त है। इसलिए भुगते उसकी भूल।

कोई स्त्री और पुरुष दोनों खूब झगड़ रहे हों और फिर हम उन दोनों के सो जाने के बाद चुपचाप देखने जाएँ तो वह स्त्री तो गहरी नींद सो रही हो और पुरुष ऐसे इधर-उधर करवटें बदल रहा हो तो हमें समझना चाहिए कि इस पुरुष की भूल है सारी, यह स्त्री भुगत नहीं रही है। जिसकी भूल हो वही भुगतता है। और उस घड़ी यदि पुरुष सो रहा हो और स्त्री जाग रही हो तो समझना कि स्त्री की भूल है। 'भुगते उसकी भूल।'

यह विज्ञान तो बहुत बड़ा साइन्स है। मैं जो कहता हूँ, वह बहुत सूक्ष्म साइन्स है। जगत् सारा निमित्त को ही काटने दौड़ता है।

मियाँ-बीवी

बहुत बड़ा, विशाल जगत् है, परन्तु यह जगत् खुद के रूम के अंदर है इतना ही मान लिया है और वहाँ भी यदि जगत् मान रहा होता तो अच्छा था। पर वहाँ भी वाइफ के साथ लट्ठबाज़ी करता है! अरे! यह नहीं है

तेरा पाकिस्तान!

पत्नी और पति दोनों पड़ोसी के साथ लड़ रहे हों, तब दोनों एकमत और एकजुट होते हैं। पड़ोसी को कहते हैं कि आप ऐसे और आप वैसे। हम समझें कि यह मियाँ-बीवी की टोली अभेद टोली है, नमस्कार करने जैसी है। फिर घर में जाएँ तो बहन से ज़रा चाय में चीनी कम पड़ी हो, तब फिर वह कहेगा कि मैं तुझे रोज़ कहता हूँ कि चाय में चीनी ज़रा ज़्यादा डाल। पर तेरा दिमाग़ ठिकाने नहीं रहता। यह दिमाग़ के ठिकानेवाला घनचक्कर! तेरे ही दिमाग़ का ठिकाना नहीं है न! अरे, किस तरह का है तू? रोज़ जिसके साथ सौदेबाज़ी करनी होती है, वहाँ कलह करनी होती है?

आपका किसी के साथ मतभेद होता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, पड़ता है बहुत बार।

दादाश्री : वाइफ के साथ मतभेद हो जाता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, बहुत बार पड़ता है।

दादाश्री : वाइफ के साथ भी मतभेद होता है? वहाँ भी एकता न रहे तो फिर और कहाँ रखनी है? एकता यानी क्या कि कभी भी मतभेद न पड़े। इस एक व्यक्ति के साथ निश्चित करना है कि आपमें और मुझमें मतभेद नहीं पड़े। इतनी एकता करनी चाहिए। ऐसी एकता की है आपने?

प्रश्नकर्ता : ऐसा कभी सोचा ही नहीं। यह पहली बार सोच रहा हूँ।

दादाश्री : हाँ, वह सोचना तो पड़ेगा न? भगवान कितना सोच-सोचकर मोक्ष में गए! मतभेद पसंद है?

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : मतभेद हों तब झगड़े होते हैं, चिंता होती है। इस मतभेद में ऐसा होता है तो मनभेद में क्या होगा? मनभेद हो तब डायवोर्स लेते हैं और तनभेद हो, तब अरथी निकलती है।

झगड़ा करो, पर बगीचे में

क्लेश आपको करना हो तो बाहर जाकर कर आना चाहिए। घर में यदि झगड़ा करना हो, तब उस दिन बगीचे में जाकर खूब लड़कर घर आना चाहिए। परन्तु घर में 'अपने रूम में लड़ना नहीं है', ऐसा नियम बनाना। किसी दिन हमें लड़ने का शौक हो जाए तो बीवी से हम कहें कि चलो, आज बगीचे में खूब नाश्ता-पानी करके, खूब झगड़ा वहाँ पर करें। लोग रोकने आए वैसे झगड़ा करना चाहिए। पर घर में झगड़ा नहीं होना चाहिए। जहाँ क्लेश होता है वहाँ भगवान नहीं रहते। भगवान चले जाते हैं। भगवान ने क्या कहा है? भक्त के वहाँ क्लेश नहीं होता। परोक्ष भक्ति करनेवाले को भक्त कहा है और प्रत्यक्ष भक्ति करनेवाले को भगवान ने 'ज्ञानी' कहा है, वहाँ तो क्लेश हो ही कहाँ से? पर समाधि होती है!

इसलिए किसी दिन लड़ने की भावना हो, तब हमें पतिराज से कहना चाहिए कि 'चलो हम बगीचे में जाएँ।' बच्चों को किसी को सौंप देना। फिर पतिराज को पहले से ही कह देना कि मैं आपको पब्लिक में दो धौल मारूँ तो आप हँसना। लोग भले ही देखें, हमारी हँसी-मज़ाक।' लोग आबरू नोंधनेवाले, वे जानें कि कभी इनकी आबरू नहीं गई तो आज गई। आबरू तो किसी की होती होगी? यह तो ढँक-ढँककर आबरू रखते हैं बेचारे!

...यह तो कैसा मोह?

आबरू तो उसे कहते हैं कि नंगा फिरे तब भी सुंदर ही दिखे! यह तो कपड़े पहनते हैं, तब भी सुंदर नहीं दिखते। जाकेट, कोट, नेकटाई पहनते हैं, तब भी बैल जैसा लगता है! क्या ही मान बैठे हैं अपने आप को! दूसरे किसी को पूछता भी नहीं है। पत्नी को भी पूछता नहीं कि यह नेकटाई पहनने के बाद मैं कैसा लगता हूँ! आईने में देखकर खुद ही खुद का न्याय करता है कि बहुत अच्छा है, बहुत अच्छा है। ऐसे-ऐसे करके बाल सँवारता जाता है। और स्त्रियाँ भी बिंदी लगाकर आईने में खुद के

खुद ही नखरे करती है। यह किस तरह की रीति कहलाए? कैसी लाइफ? भगवान जैसा भगवान होकर यह क्या धाँधली मचाई है? खुद भगवान स्वरूप है।

कान में लौंग डालते हैं, वे खुद को दिखते हैं क्या? ये तो लोग हीरा देखें, इसलिए पहनते हैं। ऐसी जँजाल में फँसे हैं, तब भी हीरा दिखाने फिरते हैं! अरे, जँजाल में फँसे हुए मनुष्य को शौक होता होगा? झटपट उकेल लाओ न! पति कहे तो पति को अच्छा दिखाने के लिए पहनो। सेठ दो हज़ार के हीरे के लौंग लाए हों और पैंतीस हज़ार का बिल लाए तो सेठानी खुश हो जाती है। लौंग खुद को तो दिखते नहीं है। सेठानी से मैंने पूछा कि रात को सो जाते हो तब कान के लौंग नींद में भी दिखते हैं या नहीं? यह तो माना हुआ सुख है, रोंग मान्यताएँ हैं, इसलिए अंतरशांति होती नहीं है। भारतीय नारी किसे कहते हैं? घर में दो हज़ार की साड़ी आकर पड़ी हुई हो, तो पहनती है। यह तो पति-पत्नी बाज़ार में घूमने गए हों और दुकान में हज़ार की साड़ी रखी हुई हो तो साड़ी स्त्री को खींचती है और घर आती है, तब भी मुँह चढ़ा हुआ होता है और कलह करती है। उसे भारतीय नारी कैसे कहा जाए?

...ऐसा करके भी क्लेश टाला

हिन्दू तो मूल से ही क्लेशी स्वभाव के हैं। इसलिए कहते हैं न कि हिन्दू बिताते हैं जीवन क्लेश में! पर मुसलमान तो ऐसे पक्के कि बाहर झगड़कर आएँ, पर घर में बीवी के साथ झगड़ा नहीं करते। अब तो कई मुस्लिम लोग भी हिन्दूओं के साथ रहकर बिगड़ गए हैं। पर हिन्दू से भी ज़्यादा इस बारें में मुझे तो वे लोग समझदार लगे। अरे कुछ मुस्लिम तो बीबी को झूला भी झूलाते हैं। हमारा कॉन्ट्रेक्टर का व्यवसाय, उसमें हमें मुसलमान के घर भी जाने का होता था, हम उसकी चाय भी पीते थे! हमें किसी के साथ जुदाई नहीं होती। एक दिन वहाँ गए हुए थे, तब मियाँभाई बीबी को झूला डालने लगा। तब मैंने उससे पूछा कि आप ऐसा करते हो तो वह आपके ऊपर चढ़ बैठती नहीं है? तब वह कहने लगा

कि वह क्या चढ़ बैठनेवाली थी? उसके पास हथियार नहीं, कुछ नहीं। मैंने कहा कि हमारे हिन्दूओं को तो डर लगता है कि बीवी चढ़ बैठेगी तो क्या होगा? इसीलिए ऐसे झूला नहीं डालते। तब मियाँभाई बोलते हैं कि यह झूला डालने का कारण आप जानते हैं? मेरे तो ये दो ही कमरे हैं। मेरे पास कोई बंगला नहीं, ये तो दो ही कमरे हैं और उसमें बीवी के साथ लड़ाई हो तो मैं कहाँ सोऊँगा? मेरी सारी रात बिगड़ेगी। इसलिए मैं बाहर सबके साथ लड़ आता हूँ पर बीवी के साथ क्लियर रखता हूँ। बीवी मियाँ से कहेगी कि सुबह गोश्त लाने को कह रहे थे, तो क्यों नहीं लाए? तब मियाँभाई नक़द जवाब देता है कि कल लाऊँगा। दूसरे दिन सुबह कहता है, 'आज तो किधर से भी ले आऊँगा।' और शाम को खाली हाथ वापिस आता है, तब बीवी खूब अकुलाती है पर मियाँभाई खूब पक्के, तो ऐसा बोलते हैं, 'यार मेरी हालत मैं जानता हूँ!' वह ऐसे बीवी को खुश कर देता है, झगड़ा नहीं करता। और हमारे लोग तो क्या कहते हैं, 'तू मुझ पर दबाव डालती है? जा, नहीं लानेवाला।' अरे, ऐसा नहीं बोलते। उल्टे तेरा वजन टूटता है। ऐसा तू बोलता है, इसलिए तू ही दबा हुआ है। अरे, वह तुझे किस तरह दबाए? वह बोले, तब शांत रहना, पर कमज़ोर बहुत चिड़चिड़े होते हैं। इसीलिए वह चिढ़े, तब हमें चुप रहकर उसकी रिकार्ड सुननी चाहिए।

जिस घर में झगड़ा नहीं होता, वह घर उत्तम है। अरे झगड़ा हो पर वापिस उसे मना ले, तब भी उत्तम कहलाए! मियाँभाई को एक दिन खाने में टेस्ट नहीं आए तो मियाँ चिढ़ते हैं कि तू ऐसी है, वैसी है। और सामने यदि पत्नी चिढ़े तो खुद चुप हो जाता है और समझ जाता है कि इससे विस्फोट होगा। इसीलिए हम अपने में और वह उसमें। और हिन्दू तो विस्फोट करके ही रहते हैं।

बनिये की पगड़ी अलग, दक्षिणी की अलग और गुजराती की अलग, सुवर्णकार की अलग, ब्राह्मण की अलग, हरएक की अलग। चूल्हे-चूल्हे का धरम अलग। सभी के व्यू पोइन्ट अलग ही हैं, मेल ही नहीं खाते। पर झगड़ा न करें तो अच्छा।

मतभेद से पहले ही सावधानी

अपने में कलुषित भाव रहा ही न हो, उसके कारण सामनेवाले को भी कलुषित भाव नहीं होगा। हम नहीं चिढें तब वे भी ठंडे हो जाते हैं। दीवार जैसे हो जाना चाहिए, तब फिर सुनाई नहीं देगा। हमें पचास साल हो गए पर कभी भी मतभेद ही नहीं हुआ। हीराबा के हाथ से घी ढुल रहा हो, तब भी मैं देखता ही रहता हूँ। हमें तो उस समय ज्ञान हाज़िर रहता है कि वे घी ढोलें ही नहीं। मैं कहूँ कि ढोलो तब भी नहीं ढोलें। जान-बूझकर कोई घी ढोलता होगा? ना। फिर भी घी ढुलता है, वह देखने जैसा है, इसलिए अपने देखो! हमें मतभेद होने से पहले ज्ञान ऑन द मोमेन्ट हाज़िर रहता है।

'मेरी हालत मैं ही जानता हूँ बोले, इसलिए बीवी खुश हो जाती है और हमारे लोग तो हालत या कुछ भी कहते नहीं हैं। अरे तेरी हालत कह तो सही कि अच्छी नहीं है। इसलिए खुश रहना।'

सबकी हाज़िरी में, सूर्यनारायण की साक्षी में, पुरोहित की साक्षी में शादी की थी, तब पुरोहित ने सौदा किया कि 'समय वर्ते सावधान' तो तुझे सावधान रहना भी नहीं आया? समय के अनुसार सावधान रहना चाहिए। पुरोहित बोलते है 'समय वर्ते सावधान' वह पुरोहित समझे, शादी करनेवाला क्या समझे? सावधान का अर्थ क्या है? तब कहे, 'बीवी उग्र हो गई हो, वहाँ तू ठंडा हो जाना, सावधान हो जाना।' अब दोनों जने झगड़ें तब पड़ोसी देखने आएँगे या नहीं आएँगे? फिर तमाशा होगा या नहीं होगा? और फिर वापिस इकट्ठे नहीं होना हो तो लड़ो। अरे, बँटवारा ही कर डालो। तब कहें, 'ना, कहाँ जाएँगे?' यदि वापिस एक होना है तो फिर किसलिए लड़ते हो? हमें ऐसे सावधान नहीं होना चाहिए? स्त्री तो समझो, जाति ऐसी है कि नहीं बदलेगी, इसीलिए हमें बदलना पड़ेगा। वह सहज जाति है, वह बदले ऐसी नहीं है।

पत्नी चिढ़े और कहे, 'मैं आपकी थाली लेकर नहीं आनेवाली, आप खुद आओ। अब आपकी तबियत अच्छी हो गई है और चलने लगे हो।

ऐसे तो लोगों के साथ बातें करते हो, घूमते-फिरते हो, बीड़ियाँ पीते हो और ऊपर से टाइम हो तब थाली माँगते हो। मैं नहीं आनेवाली!' तब हम धीरे से कहें, 'आप नीचे थाली में निकालो मैं आ रहा हूँ।' वह कहती है, 'नहीं आनेवाली।' उससे पहले ही हम कहें कि मैं आ रहा हूँ, मेरी भूल हो गई लो। ऐसा करें तो कुछ रात अच्छी बीते। नहीं तो रात बिगड़े। वे टिटकारी मारते यहाँ सो गए हो और यह पत्नी यहाँ टिटकारी मार रही होती है। दोनों को नींद आती नहीं है। सुबह वापिस चाय-पानी होता है, तब चाय का प्याला पटककर रखकर, टिटकारी करती है या नहीं करती? वह तो यह पत्नी भी तुरन्त समझ जाती है कि टिटकारी की। यह कलह का जीवन है। सारे वर्ल्ड में ये हिन्दू बिताते हैं जीवन क्लेश में।

क्लेश बगैर का घर, मंदिर जैसा

जहाँ क्लेश हो, वहाँ भगवान का वास नहीं रहता है। इसलिए हम भगवान से कहें 'साहब, आप मंदिर में रहना, मेरे घर आइएगा नहीं!' हम मंदिर और अधिक बनाएँगे, परन्तु घर आइएगा नहीं!' जहाँ क्लेश न हो, वहाँ भगवान का वास निश्चित है। उसकी मैं आपको गारन्टी देता हूँ और क्लेश तो बुद्धि और समझ से खतम किया जा सके ऐसा है। मतभेद टले उतनी जागृति तो प्राकृतिक गुण से भी आ सकती है, उतनी बुद्धि भी आ सके ऐसा है। जान लिया, उसका नाम कि किसी के साथ मतभेद न पड़े। मति पहुँचती नहीं, इसलिए मतभेद होते हैं। मति फुल पहुँचे, तो मतभेद नहीं हों। मतभेद, वे टकराव हैं। वीकनेस हैं।

कोई झँझट हो गई हो तो आप थोड़ी देर चित्त को स्थिर करो और विचार करो तो आपको सूझ पड़ेगी। क्लेश हुआ इसलिए भगवान तो चले जाएँगे या नहीं चले जाएँगे?

प्रश्नकर्ता : चले जाएँगे।

दादाश्री : भगवान कुछ व्यक्तियों के यहाँ से जाते ही नहीं, परन्तु क्लेश होता हो, तब कहते हैं, 'चलो यहाँ से, हमें यहाँ अच्छा नहीं लगेगा।' इस कलह में मुझे नहीं पसंद आएगा, इसलिए देरासर और मंदिरों में जाते

हैं। इन मंदिरों में भी वापिस क्लेश करते हैं। मुकट, ज़ेवर ले जाते हैं तब भगवान कहते हैं कि यहाँ से भी चलो अब। तो भगवान भी तंग आ गए हैं।

अंग्रेजों के समय में कहते थे न कि,

'देव गया डुंगरे, पीर गया मक्के।'

(देवी-देवता गए पहाड़ पर और पीर चले गए मक्का।)

अपने घर में क्लेश रहित जीवन जीना चाहिए। इतनी तो हम में कुशलता होनी चाहिए। दूसरा कुछ नहीं आए तो उसे समझाना चाहिए कि क्लेश होगा तो अपने घर में से भगवान चले जाएँगे, इसलिए तू निश्चय कर कि हमारे यहाँ क्लेश नहीं करना है। और हमें निश्चित करना है कि क्लेश नहीं करना है। निश्चित करने के बाद क्लेश हो जाए तो समझना कि यह हमारी सत्ता के बाहर हुआ है। इसीलिए हमें, वह क्लेश करता हो तब भी ओढ़कर सो जाना चाहिए। वह भी थोड़ी देर बाद सो जाएगा, और हम भी सामने जवाब देने लगें तो?

उल्टी कमाई, क्लेश कराए

मुंबई में एक ऊँचे संस्कारी कुटुंब की बहन को मैंने पूछा कि घर में क्लेश तो नहीं होता न? तब उस बहन ने कहा, 'रोज़ सुबह क्लेश के नाश्ते ही होते हैं!' मैंने कहा, 'तब आपके नाश्ते के पैसे बचे, नहीं?' बहन ने कहा, 'नहीं, वह भी वापिस ब्रेड निकालनी, और ब्रेड पर मक्खन चुपड़ते जाना।' मतलब फिर क्लेश भी चलता है और नाश्ता भी चलता है! अरे, किस तरह के जीव हो?

प्रश्नकर्ता : कुछ लोगों के घर में लक्ष्मी ही उस प्रकार की होगी इसलिए क्लेश होता होगा?

दादाश्री : यह लक्ष्मी के कारण ही ऐसा होता है। यदि लक्ष्मी निर्मल हो, तो सब अच्छा रहता है, मन अच्छा रहता है। यह लक्ष्मी अनिष्टवाली

घर में घुसी है, उससे क्लेश होता है। हमने बचपन में ही निश्चित कर लिया था कि हो सके तब तक खोटी लक्ष्मी घुसने ही नहीं देनी है। फिर भी संजोगाधीन घुस जाए तो उसे धंधे में ही रहने देना है, घर में नहीं घुसने देना है, इसलिए आज छासठ वर्ष हुए पर खोटी लक्ष्मी घुसने नहीं दी है, और घर में कभी भी क्लेश खड़ा हुआ नहीं है। घर में निश्चित किया हुआ था कि इतने पैसे से घर चलाना है। व्यापार लाखों रुपया कमाता है, परन्तु यह पटेल सर्विस करने जाएँ तो क्या तन्ख्वाह मिलेगी? बहुत हुआ तो छ सौ-सात सौ रुपये मिलेंगे। व्यापार, वह तो पुण्य का खेल है। मुझे नौकरी में मिलते उतने ही पैसे घर में खर्च कर सकते हैं, दूसरे तो व्यापार में ही रहने देने चाहिए। इन्कम टैक्सवाले की चिट्ठी आए तो हमें कहना चाहिए कि, 'वह जो रक़म थी वह भर दो।' कब कौन-सा 'अटैक' हो उसका कोई ठिकाना नहीं और यदि वे पैसे खर्च कर दिए तो वहाँ इन्कम टैक्सवालों का 'अटैक' आया तो हमारे यहाँ वो वाला 'अटैक' आएगा! सभी जगह अटैक घुस गए हैं न! यह जीवन कैसे कहलाए? आपको क्या लगता है? भूल लगती है या नहीं लगती? वह हमें भूल मिटानी है।

प्रयोग तो करके देखो

क्लेश न हो ऐसा निश्चित करो न! तीन दिन के लिए तो निश्चित करके देखो न! प्रयोग करने में क्या परेशानी है? तीन दिन के उपवास करते हैं न, तबियत के लिए? वैसे ही यह भी निश्चित तो करके देखो। हम घर में सब लोग इकट्ठे होकर निश्चित करें कि 'दादा बात करते थे, वह बात मुझे पसंद आई है, तो हम आज से क्लेश मिटाएँ।' फिर देखो।

धर्म किया (!) फिर भी क्लेश?

जहाँ क्लेश नहीं वहाँ यथार्थ जैन, यथार्थ वैष्णव, यथार्थ शैव धर्म हैं। जहाँ धर्म की यथार्थता है, वहाँ क्लेश नहीं होता। ये घर-घर क्लेश होते हैं तो वहाँ धर्म कहाँ गया?

संसार चलाने के लिए जो धर्म चाहिए कि क्या करने से क्लेश नहीं हो, इतना ही जो आ जाए, तब भी धर्म प्राप्त किया माना जाएगा।

क्लेश रहित जीवन जीना वही धर्म है। हिन्दुस्तान में यहाँ संसार में ही खुद का घर स्वर्ग बनेगा तो मोक्ष की बात करनी चाहिए, नहीं तो मोक्ष की बात करनी नहीं, स्वर्ग नहीं तो स्वर्ग के नज़दीक का तो होना ही चाहिए न? क्लेश रहित होना चाहिए, इसलिए शास्त्रकारों ने कहा है कि, 'जहाँ किंचित् मात्र क्लेश है वहाँ धर्म नहीं है।' जेल की अवस्था हो वहाँ डिप्रेशन नहीं, और महल की अवस्था हो वहाँ एलिवेशन नहीं, ऐसा होना चाहिए। क्लेश रहित जीवन हुआ इसलिए मोक्ष के नज़दीक आया, वह इस भव में सुखी होता ही है। मोक्ष हरएक को चाहिए। क्योंकि बंधन किसी को पसंद नहीं है। परन्तु क्लेश रहित हुआ, तब समझना कि अब नज़दीक में अपना स्टेशन है मोक्ष का।

...तब भी हम सुल्टा करें

एक बनिये से मैंने पूछा, 'आपके घर में झगड़े होते हैं?' तब उसने कहा, 'बहुत होते हैं।' मैंने पूछा, 'उसका तू क्या उपाय करता है?' बनिये ने कहा, 'पहले तो मैं दरवाज़े बंद कर आता हूँ।' मैंने पूछा, 'पहले दरवाज़े बंद करने का क्या हेतु है?' बनिये ने कहा, 'लोग घुस जाए तो उल्टा झगड़ा बढ़ाते हैं। घर में झगड़े फिर अपने आप ठंडा पड़ जाता है।' इसकी बुद्धि सच्ची है, मुझे यह पसंद आया। इतनी भी अक्कलवाली बात हो तो उसे हमें एक्सेप्ट करना चाहिए। कोई भोला मनुष्य तो उल्टे दरवाज़ा बंद हो तो खोल आए और लोगों से कहे, 'आओ, देखो हमारे यहाँ!' अरे, यह तो तायफ़ा किया!

ये लट्ठबाजी करते हैं उसमें किसी की जिम्मेदारी नहीं, अपनी खुद की ही जोखिमदारी है। इसे तो खुद ही अलग करना पड़ेगा। यदि तू खरा समझदार पुरुष होगा तो लोग उल्टा डालते रहेंगे और तू सुल्टा करता रहेगा तो तेरा हल आएगा। लोगों का स्वभाव ही उल्टा डालना वह है, तू समकिती है तो लोग उल्टा डालें तो हम सीधा कर डालें, हम तो उल्टा डालें ही नहीं। बाकी, जगत् तो सारी रात नल खुल्ला रखे और मटका उल्टा रखे, ऐसा है! खुद का ही सर्वस्व बिगाड़ रहे हैं। वे समझते हैं कि मैं लोगों का बिगाड़ रहा हूँ। लोगों का तो कोई बिगाड़ सके ऐसा है ही नहीं, कोई

ऐसा जन्मा ही नहीं।

हिन्दुस्तान में प्रकृति नापी नहीं जा सकती, यहाँ तो भगवान भी भुलावे में आ जाएँ। फ़ॉरेन में तो एक दिन उसकी वाइफ के साथ सच्चा रहा तो सारी ज़िन्दगी सच्चा ही रहता है! और यहाँ तो सारा दिन प्रकृति को देखते रहें, फिर भी प्रकृति नापी नहीं जा सकती। यह तो कर्म के उदय घाटा करवाते हैं, नहीं तो ये लोग घाटा उठाएँगे? अरे, मरें फिर भी घाटा नहीं होने दें, आत्मा को एक तरफ थोड़ी देर बैठाकर फिर मरें।

'पलटकर' मतभेद टाला

दादाश्री : भोजन के समय टेबल पर मतभेद होता है?

प्रश्नकर्ता : वह तो होता है न?

दादाश्री : क्यों, शादी करते समय ऐसा करार किया था?

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : उस समय तो करार यह किया था कि 'समय वर्ते सावधान।' घर में वाइफ के साथ 'तुम्हारा और मेरा' ऐसी वाणी नहीं होनी चाहिए। वाणी विभक्त नहीं होनी चाहिए, वाणी अविभक्त होनी चाहिए। हम अविभक्त कुटुंब के हैं न?

हमें हीराबा के साथ कभी भी मतभेद पड़ा नहीं, कभी भी वाणी में 'मेरा-तेरा' हुआ नहीं। पर एक बार हमारे बीच मतभेद पड़ गया था। उनके भाई के वहाँ पहेली बेटी की शादी थी। उन्होंने मुझसे पूछा कि, 'उन्हें क्या देना है?' तब मैंने उसे कहा कि, 'आपको ठीक लगे वह, पर घर में ये तैयार चाँदी के बरतन पड़े हुए हैं, वे दे दीजिए! नया बनवाना मत।' तब उन्होंने कहा कि, 'आपके ननिहाल में तो मामा की बेटी की शादी हो तो बड़े-बड़े थाल बनाकर देते हैं!' वे मेरे और आपके शब्द बोले तब से ही मैं समझ गया कि आज आबरू गई अपनी। हम एक के एक वहाँ मेरा-तेरा होता होगा? मैं तुरन्त ही समझ गया और तुरन्त ही पलट गया,

मुझे जो कहना था उस पर से पूरा ही मैं पलट गया, मैंने उनसे कहा, मैं ऐसा नहीं कहना चाहता हूँ। आप चाँदी के बरतन देना और ऊपर से पाँच सौ एक रुपये देना, उन्हें काम लगेंगे।' 'हं... इतने सारे रुपये तो कभी दिए जाते होंगे? आप तो जब देखो तब भोले के भोले ही रहते हो, जिस किसी को देते ही रहते हो।' मैंने कहा, 'वास्तव में मुझे तो कुछ आता ही नहीं।

देखो, यह मेरा मतभेद पड़ रहा था, पर किस तरह से सँभाल लिया पलटकर! अंत में मतभेद नहीं पड़ने दिया। पिछले तीस-पैंतीस वर्षों से हम में नाम मात्र का भी मतभेद नहीं हुआ है। बा भी देवी जैसे हैं। मतभेद किसी जगह पर हमने पड़ने ही नहीं दिए। मतभेद पड़ने से पहले ही हम समझ जाते हैं कि यहाँ से पलट डालो, और आप तो दाएँ और बाएँ, दोनों तरफ ही बदलना जानते हो कि ऐसे पेच चढ़ेंगे या ऐसे पेच चढ़ेंगे। हमें तो सत्रह लाख तरह के पेच घुमाने आते हैं। परन्तु गाड़ी रास्ते पर ला देते हैं, मतभेद होने नहीं देते। अपने सत्संग में बीसेक हज़ार लोग और चारेक हज़ार महात्मा हैं, पर हमारा किसी के साथ एक भी मतभेद नहीं है। जुदाई मानी ही नहीं मैंने किसी के साथ!

जहाँ मतभेद है वहाँ अंशज्ञान है और जहाँ मतभेद ही नहीं, वहाँ विज्ञान है। जहाँ विज्ञान है, वहाँ सर्वांशज्ञान है। सेन्टर में बैठें, तभी मतभेद नहीं रहते। तभी मोक्ष होता है। पर डिग्री ऊपर बैठो और 'हमारा-तुम्हारा' रहे तो उसका मोक्ष नहीं होता। निष्पक्षपाती का मोक्ष होता है।

समकिती की निशानी क्या? तब कहे, घर में सब लोग उल्टा कर डालें फिर भी खुद सीधा कर डाले। सभी बातों में सीधा करना वह समकिती की निशानी है। इतना ही पहचानना है कि यह मशीनरी कैसी है, उसका 'फ्यूज़' उड़ जाए तो किस तरह से 'फ्यूज़' ठीक करना है। सामनेवाले की प्रकृति के साथ एडजस्ट होते आना चाहिए। हमें तो सामनेवाले का 'फ्यूज़' उड़ जाए, तब भी हमारा एडजस्टमेन्ट होता है। पर सामनेवाले का एडजस्टमेन्ट टूटे तो क्या हो? 'फ्यूज़' गया। इसलिए फिर तो वह दीवार से टकराता है, दरवाज़ों से टकराता है, पर वायर टूटता नहीं

है। इसीलिए कोई फ्यूज़ डाल दे तो वापिस रास्ते पर आए, नहीं तो तब तक वह उलझता रहता है।

संसार है इसीलिए घाव तो पड़नेवाले ही हैं न? और पत्नी भी कहेगी कि अब घाव भरेंगे नहीं। परन्तु संसार में पड़े हैं, इसीलिए वापिस घाव भर जाते हैं। मूर्च्छितपना है न? मोह के कारण मूर्च्छा है। मोह के कारण घाव भर जाते हैं। यदि घाव नहीं भरते, तब तो वैराग्य ही आ जाता न?! मोह किसका नाम कहलाता है? सभी, अनुभव बहुत हुए हों परन्तु भूल जाता है। डायवोर्स लेते समय निश्चित करता है कि अब किसी स्त्री से साथ शादी नहीं करनी, फिर भी वापिस साहस करता है।

...यह तो कैसा फँसाव?

शादी नहीं करोगे तो जगत् का बैलेन्स किस तरह रहेगा? शादी कर न। भले ही शादी करे! 'दादा' को उसमें हर्ज नहीं है, परन्तु हर्ज नासमझी का है। हम क्या कहना चाहते हैं कि सब करो, परन्तु बात को समझो कि हक़ीक़त क्या है।

भरत राजा ने तेरह सौ रानियों के साथ पूरी ज़िन्दगी निकाली और उसी भव में मोक्ष प्राप्त किया! तेरह सौ रानियों के साथ!!! इसलिए बात को समझना है। समझकर संसार में रहो, साधु होने की ज़रूरत नहीं है। यदि यह नहीं समझ में आया तो साधु होकर एक कोने में पड़े रहो। साधु तो जिसे स्त्री के साथ संसार में रास नहीं आता हो वह बनता है। और स्त्री से दूर रहा जा सकता है या नहीं ऐसी शक्ति साधने के लिए एक कसरत है।

संसार तो टेस्ट एक्ज़ामिनेशन है। वहाँ टेस्टेड होना है। लोहा भी टेस्टेड हुए बगैर चलता नहीं है तो मोक्ष में अनटेस्टेड चलता होगा?

इसलिए मूर्च्छित होने जैसा यह जगत् नहीं है। मूर्च्छा के कारण जगत् ऐसा दिखता है। और मार खा-खाकर मर जाते है! भरत राजा के तेरह सौ रानियाँ थीं, तब उनकी क्या दशा होगी? यहाँ घर में एक रानी हो तब भी

फजीता करवाती रहती है, तब तेरह सौ रानियों में कब पार आए? अरे, एक रानी जितनी हो तो महामुश्किल हो जाता है! जीती ही नहीं जाती। क्योंकि मतभेद पड़े कि वापिस गड़बड़ हो जाती है! भरत राजा को तो तेरह सौ रानियों के साथ निभाना होता था। रनिवास से गुज़रें, तो पचास रानियों के मुँह चढ़े हुए होते। अरे, कितनी तो राजा का काम तमाम कर देने के लिए घूमती थीं! मन में सोचती कि फलानी रानियाँ उनकी खुद की हैं और ये परायी। इसलिए रास्ता कुछ करें। कुछ करें, वह राजा को मारने के लिए, परन्तु वह रानियों को प्रभावहीन करने के लिए। राजा के ऊपर द्वेष नहीं, परन्तु उन दूसरी रानियों पर द्वेष है। परन्तु उसमें राजा तो गया और तू भी तो विधवा होगी न? तब कहे कि 'मैं विधवा होऊँगी पर उसे भी विधवा कर दूँ तब सही!'

यह हमें तो सारा तादृश्य दिखा करता है। ये भरत राजा की रानी का तादृश्य हमें दिखा करता है कि उन दिनों कैसे मुँह चढ़ा हुआ होगा! राजा कैसा फँसा हुआ होगा? राजा के मन में कैसी चिंताएँ होगी, वह सभी दिखता है! एक रानी का यदि तेरह सौ राजाओं के साथ विवाह हुआ हो तो राजाओं का मुँह नहीं चढ़ता। पुरुष को मुँह चढ़ाना आता ही नहीं।

आक्षेप, कितने दुःखदायी!

सब ही तैयार है, परन्तु भोगना आता नहीं है। भोगने का तरीका आता नहीं है। मुँबई के सेठ बड़े टेबल पर खाना खाने बैठते हैं, पर खाना खाने के बाद, आपने ऐसा किया, आपने वैसा किया, मेरा दिल तू जलाती रहती है बिना काम के। अरे बगैर काम के तो कोई जलाता होगा? न्यायपूर्वक जलाता है। बिना न्याय के तो कोई जलाता ही नहीं। ये लकड़ी को लोग जलाते हैं, पर लकड़ी की अलमारी को कोई जलाता है? जो जलाने का हो उसे ही जलाते हैं। ऐसे आक्षेप देते हैं। यह तो भान ही नहीं है। मनुष्यपन बेभान हो गया है, नहीं तो घर में तो आक्षेप दिए जाते होंगे? पहले के समय में घर के व्यक्ति एक-दूसरे पर आक्षेप लगाते नहीं थे। अरे, लगाना हो तब भी नहीं लगाते थे। मन में ऐसा समझते थे कि आक्षेप लगाऊँगा

तो सामनेवाले को दु:ख होगा, और कलियुग में तो चपेट में लेने को घूमते हैं। घर में मतभेद क्यों होना चाहिए?

खड़कने में, जोखिमदारी खुद की ही

प्रश्नकर्ता : मतभेद होने का कारण क्या है?

दादाश्री : भयंकर अज्ञानता! अरे संसार में जीना नहीं आता, बेटे का बाप होना नहीं आता, पत्नी का पति होना नहीं आता। जीवन जीने की कला ही आती नहीं। यह तो सुख होने पर भी सुख भोग नहीं सकते है।

प्रश्नकर्ता : परन्तु बरतन तो घर में खड़केंगे न?

दादाश्री : बरतन रोज़-रोज़ खड़काना किसे रास आएगा? यह तो समझता नहीं, इसीलिए रास आता है। जागृत हो, उसे तो एक मतभेद पड़े तो सारी रात नींद ही नहीं आए! इन बरतनों को (मनुष्यों को) स्पंदन हैं, इसलिए रात को सोते-सोते भी स्पंदन किया करता है, ये तो ऐसे हैं, टेढ़े हैं, उल्टे हैं, नालायक हैं, निकाल देने जैसे हैं! और उन बरतनों को कोई स्पंदन है? हमारे लोग समझे बिना हाँ में हाँ मिलाते हैं कि दो बरतन साथ में हो तो खड़केंगे! घनचक्कर, हम क्या बरतन हैं? यानी हमें खड़कना चाहिए? इन 'दादा' को किसी ने कभी भी खड़कते हुए देखा नहीं होगा! सपना भी नहीं आया होगा ऐसा!! खड़कना किसलिए? यह खड़कना तो अपनी खुद की जोखिमदारी पर है। खड़कना क्या किसी और की जोखिमदारी पर है? चाय जल्दी आई नहीं हो तो हम टेबल को तीन बार ठोकें तो जोखिमदारी किसकी? इसके बदले तो हम बुद्धू बनकर बैठे रहें। चाय मिली तो ठीक, नहीं तो देखूँगा ऑफिस में। क्या बुरा है? चाय का भी कोई काल तो होगा न? यह जगत् नियम के बाहर तो नहीं होगा न? इसलिए हमने कहा है कि 'व्यवस्थित'। उसका टाइम होगा तब चाय मिलेगी, आपको ठोकना नहीं पड़ेगा। आप स्पंदन खड़े नहीं करोगे तो वह आकर खड़ी रहेगी, और स्पंदन खड़े करोगे तब भी आएगी। परन्तु स्पंदन के, वापिस वाइफ के खाते में हिसाब जमा होगा कि आप उस दिन टेबल ठोक रहे थे न!

प्रकृति पहचानकर सावधानी रखना

पुरुष घटनाओं को भूल जाते हैं और स्त्रियों की नोंध सारी ज़िन्दगी रहती है, पुरुष भोले होते हैं, बड़े मन के होते हैं, भद्रिक होते हैं, वे भूल जाते हैं बेचारे। स्त्रियाँ तो बोल भी जाती है फिर कि उस दिन आप ऐसा बोले थे, वह मेरे कलेजे में घाव लगा हुआ है। अरे बीस वर्ष हुए फिर भी नोंध ताज़ी? बेटा बीस वर्ष का हो गया, शादी के लायक हो गया, फिर भी अभी तक वह बात रखी हुई है? सभी चीज़ें सड़ जाएँ, पर इनकी चीज़ नहीं सड़ी। स्त्री को हम लोगोंने दिया हो तो वह असल जगह पर रख छोड़ती है, कलेजे के अंदर, इसीलिए देना-करना नहीं। नहीं देने जैसी चीज़ है ये। सावधान रहने जैसा है।

इसलिए शास्त्रों में भी लिखा है कि, *'रमा रमाड़वी सहेली छे, विफरी महामुश्केल छे'* (रमा को खेल खिलाना आसान है, बिफरे तब महामुश्किल है।') बिफरे तो वह क्या कल्पना नहीं करेगी, वह कहा नहीं जा सकता। इसलिए स्त्री को बार-बार नीचा नहीं दिखाना चाहिए। सब्ज़ी ठंडी क्यों हो गई? दाल में बघार ठीक से नहीं किया, ऐसी किच-किच किसलिए करता है? बारह महीने में एकाध दिन एकाध शब्द हो तो ठीक है, यह तो रोज़! *'भाभो भारमां तो वहु लाजमां'* (ससुर गरिमा में तो बहू शर्म में), हमें गरिमा में रहना चाहिए। दाल अच्छी नहीं बनी हो, सब्ज़ी ठंडी हो गई हो, तब वह नियम के अधीन होता है। और बहुत हो जाए तब धीमे रहकर बात करनी हो तो करें किसी समय, कि यह सब्ज़ी रोज़ गरम होती है, तब बहुत अच्छी लगती है। ऐसी बात करें तो वह उस टकोर को समझ जाती है।

डीलिंग नहीं आए, तो दोष किसका?

अट्ठारह सौ रुपये की घोड़ी ले, फिर भाई ऊपर बैठ जाए। भाई को बैठना नहीं आए और उसे छेड़ने जाए, तब घोड़ी ने कभी भी वैसी छेड़खानी देखी नहीं हो इसलिए खड़ी हो जाती है। तब मूर्ख गिर जाता है। ऊपर से वह लोगों को कहता क्या है कि घोड़ी ने मुझे गिरा दिया।

और यह घोड़ी उसका न्याय किसे कहने जाए? घोड़ी पर बैठना तुझे नहीं आता, उसमें तेरी भूल है या घोड़ी की? और घोड़ी भी बैठने के साथ ही समझ ही जाती है कि यह तो जंगली जानवर बैठा, इसे बैठना आता नहीं है! वैसे ही ये हिन्दुस्तानी स्त्रियाँ, यानी आर्य नारियाँ, उनके साथ काम लेना नहीं आए तो फिर वे गिरा ही देंगी न? एक बार पति यदि स्त्री के आमने-सामने हो जाए तो उसका प्रभाव ही नहीं रहता। अपना घर अच्छी तरह चलता हो, बच्चे पढ़ रहे हों अच्छी तरह, कोई झंझट नहीं हो, और हमें उसमें उल्टा दिखा और बिना काम के आमने-सामने हो जाएँ, इसलिए फिर अपनी अक्कल का कीमिया स्त्री समझ जाती है कि इसमें बरकत नहीं है।

यदि हमारा प्रभाव नहीं हो तो घोड़ी को सहलाएँ तब भी उसका प्रेम हमें मिलेगा। पहले प्रभाव पड़ना चाहिए। वाइफ की कुछ भूलें हम सहन करे तो उस पर प्रभाव पड़ता है। यह तो बिना भूल के भूल निकालें तो क्या हो? कुछ पुरुष स्त्री के संबंध में शोर मचाते हैं, वे सब गलत शोर होता है। कुछ साहब ऐसे होते हैं कि ऑफिस में कर्मचारी के साथ दख़ल करते रहते हैं। सब कर्मचारी भी समझते हैं कि साहब में बरकत नहीं है, पर करें क्या? पुण्य ने उसे बॉस की तरह बैठाया है वहाँ। घर पर तो बीवी के साथ पंद्रह-पंद्रह दिन से केस पेन्डिंग पड़ा होता है। साहब से पूछें, 'क्यों?' तो कहें कि उसमें अक्कल नहीं है। और वह अक्कल का बोरा! बेचें तो चार आने भी नहीं आएँ। साहब की वाइफ से पूछें तो वे कहेंगी कि जाने दो न उनकी बात। कोई बरकत ही नहीं है उनमें।

स्त्रियाँ, मानभंग हो उसे सारी ज़िन्दगी भूलती नहीं हैं। ठेठ अरथी में जाने तक वह रीस साबूत होती है। वह रीस यदि भुलाई जाती हो तो जगत् सारा कब का ही पूरा हो गया होता। नहीं भुलाया जाए ऐसा है इसलिए सावधान रहना। सारा सावधानी से काम करने जैसा है।

स्त्रीचरित्र कहलाता है न? वह समझ में आ सके ऐसा नहीं है। फिर स्त्रियाँ देवियाँ भी हैं! इसलिए ऐसा है कि उन्हें देवियों की तरह देखोगे तो आप देवता बनोगे। बाकी आप तो मुर्गे जैसे रहोगे, हाथी और मुर्गे जैसे!

हाथीभाई आए और मुर्गाभाई आए! यह तो लोगों को राम होना नहीं है और घर में सीताजी को खोजते हैं। पगले, राम तो तुझे नौकरी पर भी नहीं रखें। इसमें इनका भी दोष नहीं है। आपको स्त्रियों के साथ डीलिंग करना नहीं आता है। आपको व्यापारियों को ग्राहकों के साथ डीलिंग करना नहीं आएगा तो वह आपके पास नहीं आएँगे। इसलिए अपने लोग नहीं कहते कि सेल्समेन अच्छा रखो? अच्छा, दर्शनीय, होशियार सेल्समेन हो तो लोग थोड़ा भाव भी ज़्यादा दे देते हैं। उसी प्रकार हमें स्त्री के साथ डीलिंग करते आना चाहिए।

स्त्री को तो एक आँख से देवी की तरह देखो और दूसरी आँख से उसका स्त्री चरित्र देखो। एक आँख में प्रेम और दूसरी आँख में कड़काई रखो तभी बेलेन्स रह पाएगा। अकेली देवी की तरह देखोगे और आरती उतारोगे तो वह उलटी पटरी पर चढ़ जाएगी, इसलिए बेलेन्स में रखना।

'व्यवहार' को 'इस' तरह से समझने जैसा है

पुरुष को स्त्री की बात में हाथ नहीं डालना चाहिए और स्त्री को पुरुष की बात में हाथ नहीं डालना चाहिए। हरएक को अपने-अपने डिपार्टमेन्ट में ही रहना चाहिए।।

प्रश्नकर्ता : स्त्री का डिपार्टमेन्ट कौन-सा? किस-किसमें पुरुषों को हाथ नहीं डालना चाहिए?

दादाश्री : ऐसा है, खाने का क्या करना, घर कैसे चलाना, वह सब स्त्री का डिपार्टमेन्ट है। गेहूँ कहाँ से लाती है, कहाँ से नहीं लाती वह हमें जानने की क्या ज़रूरत है? वह यदि हमें कहती हों कि गेहूँ लाने में मुझे अड़चन पड़ रही है तो वह बात अलग है। परन्तु हमें वह कहती न हों, राशन बताती नहीं हों, तो हमें उस डिपार्टमेन्ट में हाथ डालने की ज़रूरत ही क्या है? आज दूधपाक बनाना, आज जलेबी बनाना, वह भी हमें कहने की ज़रूरत क्या है? टाइम आएगा तब वह रखेगी। उनका डिपार्टमेन्ट वह उनका स्वतंत्र है। कभी बहुत इच्छा हुई हो तो कहना कि, 'आज लड्डू बनाना।' कहने के लिए मना नहीं करता परन्तु दूसरी टेढ़ी-मेढ़ी, बेकार का

शोर मचाएँ कि कढ़ी खारी हो गई, खारी हो गई, तो सब बिना समझ का है।

यह रेलवेलाइन चलती है, उसमें कितनी सारी कार्यवाही होती है! कितनी जगहों से नोंध आती हैं, खबरें आती हैं, उनका पूरा डिपार्टमेन्ट ही अलग। अब उसमें भी खामी तो आती ही है न? वैसे ही वाइफ के डिपार्टमेन्ट में कभी खामी भी आ जाती है। अब हम यदि उनकी खामी निकालने जाएँ तो फिर वे हमारी खामी निकालेंगी, आप ऐसा नहीं करते, आप वैसा नहीं करते। ऐसा खत आया और वैसा किया आपने। यानी कि वह बैर वसूलती है। मैं आपकी कमी निकालूँ तो आप भी मेरी कमी निकालने के लिए बेताब होते हैं! इसलिए खरा मनुष्य तो घर की बातों में हाथ ही न डाले। वह पुरुष कहलाता है। नहीं तो स्त्री जैसा होता है। कुछ मनुष्य तो घर में जाकर मिर्ची के डिब्बे में देखते हैं कि दो महीने हुए मिर्ची लाए थे, वह इतनी ही देर में पूरी हो गई? अरे, मिर्ची देखता है तो कब पार आएगा? वह जिसका डिपार्टमेन्ट हो उसे चिंता नहीं होती? क्योंकि वस्तु तो खर्च होती रहती है और खरीदी भी जाती है। पर यह तो बिना काम के ज़्यादा अक्लमंद बनने जाता है! फिर पत्नी भी समझती है कि इनकी चवन्नी गिर गई है। माल कैसा है, वह स्त्री समझ जाती है। घोड़ी समझ जाती है कि ऊपर बैठनेवाला कैसा है, वैसे ही स्त्री सब समझ जाती है। इसके बदले तो *'भाभो भारमां तो वहु लाजमां'* पुरुष गरिमा में नहीं रहे तो बहू किस तरह लाज में रहे? नियम और मर्यादा से ही व्यवहार शोभा देगा। मर्यादा पार मत करना और निर्मल रहना।

प्रश्नकर्ता : स्त्री को पुरुष की किस बात में हाथ नहीं डालना चाहिए?

दादाश्री : पुरुष की किसी भी बात में दख़ल नहीं डालना चाहिए। दुकान में कितना माल लाए? कितना गया? आज देर से क्यों आए? उसे फिर कहना पड़ता है कि आज नौ बजे की गाड़ी चूक गया। तब पत्नी कहेगी कि ऐसे कैसे घूमते हो कि गाड़ी चूक जाते हो? इसलिए फिर पति चिढ़ जाता है। उसके मन में होता है कि ऐसे भगवान भी पूछनेवाले होते

तो उन्हें मारता। पर यहाँ क्या करे अब? यानी बिना काम के दख़ल करते हैं। बासमती के चावल अच्छे पकाते हैं और फिर अंदर कंकड़ डालकर खाते हैं! उसमें क्या स्वाद आए? स्त्री-पुरुष को एक-दूसरे को हेल्प करनी चाहिए। पति को चिंता-वरीज़ रहती हों, तो उसे किस प्रकार वह न हो, ऐसा स्त्री को बोलना चाहिए। वैसे ही पति को भी पत्नी मुश्किल में न पड़े ऐसा देखना चाहिए। पति को भी समझना चाहिए कि स्त्री को बच्चे घर पर कितना परेशान करते होंगे! घर में टूट-फूट हो तो पुरुष को चिल्लाना नहीं चाहिए। पर फिर भी लोग चिल्लाते हैं कि पिछली बार सबसे अच्छे एक दर्जन कप-रकाबी लेकर आया था, आपने वे सब क्यों फोड़ डाले? सब खतम कर दिया। इससे पत्नी के मन में लगता है कि मैंने तोड़ डाले? मुझे क्या वे खा जाने थे? टूट गए तो टूट गए, उसमें मैं क्या करूँ? मी काय करूँ?' कहेगी। अब वहाँ भी लड़ाई-झगड़ा। जहाँ कुछ लेना नहीं और देना नहीं। जहाँ लड़ने का कोई कारण ही नहीं, वहाँ भी लड़ना?

हमारे और हीराबा के बीच कोई मतभेद ही नहीं पड़ता था। हमें उनके काम में हाथ ही नहीं डालना कभी भी। उनके हाथ से पैसे गिर गए हों, हमने देखे हों, फिर भी हम ऐसा नहीं कहते कि आपके पैसे गिर गए। उन्होंने देखा या नहीं देखा? घर की किसी बात में हम हस्तक्षेप नहीं करते थे। वे भी हमारी किसी बात में दख़ल नहीं करती थीं। हम कितने बजे उठते हैं, कितने बजे नहाते हैं, कब आते हैं, कब जाते हैं, ऐसी हमारी किसी बात में कभी भी वे हमें नहीं पूछती थी। और किसी दिन हमें कहें कि आज जल्दी नहा लेना। तो हम तुरन्त धोती मँगवाकर नहा लेते थे। अरे, अपने आप ही तौलिया लेकर नहा लेते थे। क्योंकि हम समझते थे कि ये 'लाल झँडी' दिखाते हैं, इसलिए कोई डर होगा। पानी नहीं आनेवाला हो या ऐसा कुछ हो तब ही वे हमें जल्दी नहा लेने का कहेंगी, इसीलिए हम समझ जाते। इसलिए थोड़ा-थोड़ा व्यवहार में आप भी समझ लो न, कि किसी के काम में हाथ डालने जैसा नहीं है।

फोज़दार पकड़कर हमें ले जाए फिर वह जैसा कहे वैसा हम नहीं करेंगे? जहाँ बिठाए वहाँ हम नहीं बैठेंगे? हम समझें कि यहाँ है तब तक

इस झँझट में हैं, ऐसे संसार भी फोज़दारी ही है। इसलिए उसमें भी सरल हो जाना चाहिए।

घर पर भोजन की थाली आती है या नहीं आती?

प्रश्नकर्ता : आती है।

दादाश्री : भोजन चाहिए तो मिलता है, पलंग चाहिए तो बिछा देते हैं, फिर क्या? और खटिया न बिछाकर दे तो वह भी हम बिछा लें और हल लाएँ। शांति से बात समझानी पड़ती है। आपके संसार के हिताहित की बात क्या गीता में लिखी होती है? वह तो खुद ही समझनी पड़ेगी न?

हसबैन्ड मतलब वाइफ की भी वाइफ (पति यानी पत्नी की पत्नी) यह तो लोग पति ही बन बैठे हैं! अरे, वाइफ क्या पति बन बैठनेवाली है? हसबैन्ड यानी वाइफ की वाइफ। अपने घर में ज़ोर से आवाज़ नहीं होनी चाहिए। यह क्या लाउड स्पीकर है? यह तो यहाँ चिल्लाता है तो गली के नुक्कड़ तक सुनाई देता है। घर में गेस्ट की तरह रहो। हम भी घर में गेस्ट की तरह रहते हैं। कुदरत के गेस्ट की तरह यदि आपको सुख न आए तो ससुराल में क्या सुख आनेवाला है?

'मार' का फिर बदला लेती है

प्रश्नकर्ता : दादा, मेरा मिजाज़ हट जाता है, तब मेरा हाथ कितनी बार पत्नी पर उठ जाता है।

दादाश्री : स्त्री को कभी भी मारना नहीं चाहिए। जब तक शरीर मज़बूत होगा आपका तब तक चुप रहेगी, फिर वह आप पर चढ़ बैठेगी। स्त्री को और मन को मारना वह तो संसार में भटकने के दो साधन है। इन दोनों को मारना नहीं चाहिए। उनके पास से तो समझाकर काम लेना पड़ता है।

हमारा एक मित्र था। उसे मैं जब देखूँ तब पत्नी को एक तमाचा

लगा देता था, उसकी ज़रा-सी भूल दिखे तो मार देता था। फिर मैं उसे अकेले में समझाता कि ये तमाचा तूने उसे मारा पर उसकी वह नोंध रखेगी। तू नोंध नहीं रखता पर वह तो नोंध रखेगी ही। अरे, यह तेरे छोटे-छोटे बच्चे, तू तमाचा मारता है तब तुझे टुकुर-टुकुर देखते रहते हैं, वे भी नोंध रखेंगे। और वे वापिस, माँ और बच्चे इकट्ठे मिलकर इसका बदला लेंगे। वे कब बदला लेंगे? तेरा शरीर ढीला पड़ेगा तब। इसलिए स्त्री को मारने जैसा नहीं है। मारने से तो उल्टे हमें ही नुकसानदायक, अंतरायरूप हो जाते हैं।

आश्रित किस कहा जाता है? खूंटे से बंधी गाय होती है, उसे मारें तो वह कहाँ जाए? घर के लोग खूंटे से बाँधे हुए जैसे हैं, उन्हें मारें तो हम टुच्चे कहलाएँगे। उन्हें छोड़ दे और फिर मार, तो वह तुझे मारेंगे या फिर भाग जाएँगे। बाँधे हुए को मारना, वह शूरवीर का मार्ग कैसे कहलाए? वह तो निर्बल का काम कहलाए।

घर के मनुष्य को तो तनिक भी दु:ख दिया ही नहीं जाना चाहिए। जिसमें समझ न हो वे घरवालों को दु:ख देते हैं।

फरियाद नहीं, निकाल लाना है

प्रश्नकर्ता : दादा, मेरी फरियाद कौन सुने?

दादाश्री : तू फरियाद करेगा तो तू फरियादी हो जाएगा। मैं तो जो फरियाद करने आए, उसे ही गुनहगार मानता हूँ। तुझे फरियाद करने का समय ही क्यों आया? फरियाद करनेवाला ज़्यादातर गुनहगार ही होता है। खुद गुनहगार होता है तो फरियाद करने आता है। तू फरियाद करेगा तो तू फरियादी बन जाएगा और सामनेवाला आरोपी बन जाएगा। इसलिए उसकी दृष्टि में आरोपी तू ठहरेगा। इसीलिए किसी के विरुद्ध फरियाद नहीं करनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : तो मुझे क्या करना चाहिए?

दादाश्री : 'वे' उल्टे दिखें तो कहना कि वे तो सबसे अच्छे मनुष्य

है, तू ही गलत है। ऐसे, गुणा हो गया हो तो भाग कर देना चाहिए और भाग हो गया हो तो गुणा कर देना चाहिए। यह गुणा-भाग किसलिए सिखाते हैं? संसार में निबेड़ा लाने के लिए।

वह भाग करता हो तो हम गुणा करें, ताकि रकम उड़ जाए। सामनेवाले मनुष्य के लिए विचार करना कि उसने मुझे ऐसा कहा, वैसा कहा वही गुनाह है। यह रास्ते में जाते समय दीवार से टकराएँ तो उसे क्यों डाँटते नहीं है? पेड़ को जड़ क्यों कहा जाता है? जिसे चोट लगती है वे सब हरे पेड़ ही हैं! गाय का पैर अपने ऊपर पड़े तो हम क्या कुछ कहते हैं? ऐसा ही सब लोगों का है। ज्ञानी पुरुष सबको किस तरह माफ कर देते हैं? वे समझते हैं कि ये बेचारा समझता नहीं है, पेड़ जैसा है। और समझदार को तो कहना ही नहीं पड़ता, वह तो अंदर तुरन्त प्रतिक्रमण कर डालता है।

सामनेवाले का दोष ही नहीं देखें, नहीं तो उससे तो संसार बिगड़ जाता है। खुद के ही दोष देखते रहने चाहिए। अपने ही कर्म के उदय का फल है यह! इसलिए कुछ कहने का ही नहीं रहा न?

सब अन्योन्य दोष देते हैं कि आप ऐसे हो, आप वैसे हो। और साथ में बैठकर टेबल पर भोजन करते हैं। ऐसे अंदर बैर बंधता है, इस बैर से दुनिया खड़ी रही है। इसीलिए तो हमने कहा है कि 'समभावे निकाल' करना। उससे बैर बंद होते हैं।

सुख लेने में फँसाव बढ़ा

संसारी मिठाई में क्या है? कोई ऐसी मिठाई है कि जो घड़ीभर भी टिके? अधिक खाई हो तो अजीर्ण होता है, कम खाई हो तो अंदर लालच रहता है। अधिक खाए तो अंदर तरफड़ाहट होती है। सुख ऐसा होना चाहिए कि तरफड़ाहट न हो। देखो न, इन दादा को है न ऐसा सनातन सुख!

सुख मिले उसके लिए लोग शादी करते हैं, तब उल्टा अधिक

फँसाव लगता है। मुझे कोई हेल्पर मिले, संसार अच्छा चले, ऐसा कोई पार्टनर मिले इसलिए शादी करते हैं न?

संसार ऐसे आकर्षक लगता है परन्तु अंदर घुसने के बाद उलझन होती है, फिर निकला नहीं जाता। लक्कड़ का लड्डू जो खाए वह भी पछताए, जो न खाए वह भी पछताए।

शादी करके पछताते हैं, मगर पछताने से ज्ञान होता है। अनुभवज्ञान होना चाहिए न? यों ही किताब पढ़ें तो क्या अनुभवज्ञान होता है? किताब पढ़कर क्या वैराग आता है? वैराग तो पछतावा हो तब होता है।

इस तरह शादी निश्चित होती है

एक लड़की को शादी ही नहीं करनी थी, उसके घरवाले मेरे पास उसे लेकर आए। तब मैंने उसे समझाया, शादी किए बिना चले ऐसा नहीं है, और शादी करके पछताए बिना चले ऐसा नहीं है। इसलिए यह सब रोना-धोना रहने दे और मैं कहता हूँ उसके अनुसार तू शादी कर ले। जैसा वर मिले वैसा, परन्तु वर तो मिला न। किसी भी प्रकार का दुल्हा चाहिए, ताकि लोगों का उँगली उठाना टल जाए न! और किस आधार पर दुल्हा मिलता है वह मैंने उसे समझाया। वह लड़की समझ गई, और मेरे कहे अनुसार शादी कर ली। परन्तु फिर पति ज़रा देखने में अच्छा नहीं लगा। परन्तु उसने कहा कि मुझे दादाजी ने कहा है इसलिए शादी करनी ही है। उस लड़की को शादी करने से पहले ज्ञान दिया, और फिर तो उसने मेरे एक भी शब्द का उल्लंघन नहीं किया और वह लड़की एकदम सुखी हो गई।

लड़के लड़की को पसंद करने से पहले बहुत मीनमेख निकालते है। बहुत ऊँची है, बहुत नीची है, बहुत मोटी है, बहुत पतली है, ज़रा काली है। घनचक्कर, यह क्या भैंस है? लड़कों को समझाओ कि शादी करने का तरीका क्या होता है! तुझे जाकर लड़की को देख आना और आँख से आकर्षण हो वहाँ अपनी शादी निश्चित है और आकर्षण न हो तो हमें बंद रखना है।

'जगत्' बैर वसूलता ही है

यह तो 'ऐसे फिर, वैसे फिर' करता है! एक लड़का ऐसे बोल रहा था उसे मैंने तो बहुत डाँटा। मैंने कहा, 'तेरी मदर भी बहू बनी थी। तू किस तरह का मनुष्य है?' स्त्रियों का इतना अधिक घोर अपमान! आज लड़कियाँ बढ़ गई हैं, इसलिए स्त्रियों का अपमान होता है। पहले तो इन बेवकूफों का घोर अपमान होता था। उसका ये बदला लेते हैं। पहले तो पाँच सौ बेवकूफ-राजा लाइन में खड़े रहते थे और एक राजकुमारी वरमाला पहनाने निकलती थी, और वे बेवकूफ गरदन आगे रखकर खड़े रहते थे! राजकुमारी आगे खिसक जाती कि उसे काटो तो खून भी न निकले! कितना घोर अपमान! अरे, रखो यह शादी करने का! उससे तो शादी नहीं करी हो वह अच्छा!

और आजकल तो लड़कियाँ भी कहने लगी हैं कि ज़रा ऐसे फिरों तो? आप ज़रा कैसे दिखते हो? देखो, हमने इस तरह देखने का सिस्टम निकाला तो यह हाल हो गया है अपना? इससे तो सिस्टम ही नहीं बनाते तो क्या बुरा था? यह हमने लफड़ा डाला तो हमें वह लफड़ा बढ़ा।

इस काल में ही, पिछले पाँचेक हज़ार वर्षों से पुरुष कन्या लेने जाता हैं। उससे पहले तो बाप स्वयंवर रचाते थे और उसमें वे सौ बेवकूफ आए हुए होते थे! उसमें से कन्या एक बेवकूफ को पास करती थी! इस तरह पास होकर शादी करनी हो, उससे तो शादी नहीं करना अच्छा। ये सभी बेवकूफ लाइन में खड़े रहते थे, उसमें से कन्या वरमाला लेकर निकलती थी। सब के मन में लाखों आशाएँ होतीं, वे गरदन आगे रखा करते! इस तरह अपनी पसंद की पत्नी लाएँ, उससे तो जन्म ही न लेना अच्छा! इसीसे आज वे बेवकूफ स्त्रियों का भयंकर अपमान करके बैर वसूल रहे हैं! स्त्री को देखने जाता है तब कहता है, 'ऐसे फिर, वैसे फिर।'

'कॉमनसेन्स' से 'सोल्युशन' आता है

मैं सबको ऐसा नहीं कहता कि आप सब मोक्ष में चलो। मैं तो ऐसा कहता हूँ कि जीवन जीने की कला सीखो। कॉमनसेन्स तो थोड़ा-

बहुत तो सीखो लोगों के पास से! तब सेठलोग मुझे कहते हैं कि हममें कॉमनसेन्स तो है। तब मैंने कहा, 'कॉमनसेन्स होता तो ऐसा होता ही नहीं। तू तो मूर्ख है।' सेठ ने पूछा, 'कॉमनसेन्स मतलब क्या?' मैंने कहा, 'कॉमनसेन्स यानी एवरीव्हेर एप्लिकेबल-थ्योरिटिकली एज़ वेल एज़ प्रेक्टिकली।' चाहे जैसा ताला हो, जंग लगा हुआ हो या चाहे जैसा हो पर चाबी डालें कि तुरन्त खुल जाए उसका नाम कॉमनसेन्स। आपके तो ताले खुलते नहीं हैं, झगड़े करते हो और ताले तोड़ते हो! अरे, ऊपर बड़ा हथौड़ा मारते हो!

मतभेद आपमें पड़ता है? मतभेद मतलब क्या? ताला खोलना नहीं आया, वैसा कॉमनसेन्स कहाँ से लाए? मेरा कहने का यह है कि पूरी तीन सौ साठ डिग्री का कॉमनसेन्स नहीं होता परन्तु चालीस डिग्री, पचास डिग्री का तो आता है न? वैसा ध्यान में रखा हो तो? एक शुभ विचारणा पर चढ़ा हो तो उसे वह विचारणा याद आती है और वह जागृत हो जाता है। शुभ विचारणा के बीज पड़े, फिर वह विचारणा शुरू हो जाती है। पर यह तो सेठ सारे दिन लक्ष्मी के और लक्ष्मी के विचारों में ही घूमता रहता है! इसलिए मुझे सेठ से कहना पड़ता है, 'सेठ आप लक्ष्मी के पीछे पड़े हो? घर पूरा तहस-नहस हो गया है। बेटियाँ मोटर लेकर इधर जाती हैं, बेटे उधर जाते हैं और सेठानी इस तरफ जाती है। 'सेठ, आप तो हर तरह से लुट गए हैं!' तब सेठ ने पूछा, 'मुझे करना क्या?' मैंने कहा, 'बात को समझो न। किस तरह जीवन जीना यह समझो। सिर्फ पैसों की ही पीछे मत पड़ो। शरीर का ध्यान रखते रहो, नहीं तो हार्ट फेल होगा।' शरीर का ध्यान, पैसों का ध्यान, बेटियों के संस्कार का ध्यान, सब कोने बुहारने हैं। एक कोना आप बुहारते रहते हो, अब बंगले में एक ही कोना बुहारते रहें और दूसरे सब तरफ कचरा पड़ा हो तो कैसा लगे? सभी कोने बुहारने हैं। इस तरह तो जीवन कैसे जीया जाए?

कॉमनसेन्सवाला घर में मतभेद होने ही नहीं देता। वह कॉमनसेन्स कहाँ से लाए? वह तो 'ज्ञानी पुरुष' के पास बैठे, 'ज्ञानी पुरुष' के चरणों का सेवन करे तब कॉमनसेन्स उत्पन्न होगा। कॉमनसेन्सवाला घर में या

बाहर कहीं भी झगड़ा ही होने नहीं देता। इस मुंबई में मतभेद बिना के घर कितने? मतभेद होता है, वहाँ कॉमनसेन्स कैसे कहलाएगा?

घर में 'वाइफ' कहे कि अभी दिन है तो हम 'ना, अभी रात है' कहकर झगड़ने लगें तो उसका कब पार आएगा? हम उसे कहें कि हम तुझसे बिनती करते हैं कि रात है, ज़रा बाहर जाँच कर न।' तब भी वह कहे कि 'ना, दिन ही है।' तब हम कहें, 'यू आर करेक्ट। मुझसे भूल हो गई।' तो हमारी प्रगति शुरु हो, नहीं तो इसका पार आए ऐसा नहीं है। यह तो 'बाइपासर' (राहगीर) हैं सभी। 'वाइफ' भी 'बाइपासर' है।

रिलेटिव, अंत में दगा समझ में आता है

ये सभी 'रिलेटिव' सगाइयाँ हैं। इसमें कोई 'रियल' सगाई है ही नहीं। अरे, यह देह ही रिलेटिव है न! यह देह ही दगा है, तो उस दगे के सगे कितने होंगे? इस देह को हम रोज़ नहलाते-धुलाते हैं, फिर भी पेट में दु:खे तो ऐसे कहें कि रोज़ तेरा इतना ध्यान रखता हूँ, तो आज ज़रा शांत रह न? तब वह घड़ीभर भी शांत नहीं रहता। वह तो आबरू ले लेता है। अरे, इन बत्तीस दाँतों में से एक दु:खता हो न तब भी वह चीखें मरवाएँ। सारा घर भर जाए उतने तो सारी ज़िन्दगी में दातुन किए होंगे, रोज़ दातुन घिसते रहे होंगे, फिर भी मुँह साफ नहीं होता। वह तो था वैसे का वैसा ही वापिस। यानी यह तो दग़ा है। इसलिए मनुष्य जन्म और हिन्दुस्तान में जन्म हो, ऊँची जाति में जन्म हो, और यदि मोक्ष का काम नहीं निकाल लिया तो तू भटक मरा। जा तेरा सबकुछ ही बेकार गया!

कुछ समझना तो पड़ेगा न?

भले मोक्ष की ज़रूरत सबको नहीं हो, पर कॉमनसेन्स की ज़रूरत तो सबको है न? यह तो कॉमनसेन्स नहीं होने से घर का खा-पीकर टकराव होते हैं। सब क्या कालाबाज़ार करते हैं? फिर भी घर के तीन लोगों में शाम तक तैंतीस मतभेद पड़ते हैं। इसमें क्या सुख मिला? फिर ढीठ बनकर जीता है। ऐसा स्वमान बिना का जीवन किस काम का? उसमें भी मैजिस्ट्रेट साहब कोर्ट में सात वर्ष की सजा ठोककर आए होते हैं,

पर घर में पंद्रह-पंद्रह दिन से केस पेन्डिंग पड़ा होता है। पत्नी के साथ अबोला होता है! तब अपने मैजिस्ट्रेट साहब से पूछें कि 'क्यों साहब?' तब साहब कहते हैं कि पत्नी बहुत खराब है, बिलकुल जंगली है। अब पत्नी से पूछें, 'क्यों, साहब तो बहुत अच्छे आदमी हैं न?' तब पत्नी कहेगी, 'जाने दो न नाम, रोटन (सड़ा हुआ) आदमी है।' अब ऐसा सुने तब से ही नहीं समझ जाएँ कि यह सारा पोलम्पोल है जगत्? इसमें करेक्टनेस जैसा कुछ भी नहीं है।

वाईफ यदि सब्ज़ी महँगे दाम की लाई हो तो सब्ज़ी देखकर मूर्ख चिल्लाता है, 'इतने महंगे भाव की सब्ज़ी तो ली जाती होगी? तब पत्नी कहेगी, 'यह आपने मुझ पर अटैक किया।' ऐसा कहकर पत्नी डबल अटैक करती है। अब उसका पार कैसे आए? वाइफ यदि महँगे भाव की सब्ज़ी ले आई हो तो हम कहें, 'बहुत अच्छा किया, मेरे धन्यभाग!', बाकी मेरे जैसे लोभी से इतना महँगा नहीं लाया जाता।'

हम एक व्यक्ति के वहाँ ठहरे थे। तब उनकी पत्नी दूर से पटककर चाय रख गई। मैं समझ गया कि इन दोनों के बीच कोई झँझट हुई है। मैंने उन बहनजी को बुलाकर पूछा, 'पटका क्यों?' तो वे कहती है कि ना, ऐसा कुछ नहीं है। मैंने उसे कहा, 'तेरे पेट में क्या बात है यह मैं समझ गया हूँ। मेरे पास छुपाती है? तूने पटककर दिया तो तेरा पति भी मन में समझ गया कि क्या हक़ीक़त है। सिर्फ यह कपट छोड़ दे चुपचाप, यदि सुखी होना हो तो।'

पुरुष तो भोले होते हैं और ये स्त्रियाँ तो चालीस वर्ष पहले भी यदि पाँच-पच्चीस गालियाँ दी हों, तो वे कहकर बताती हैं कि आप उस दिन ऐसा कह रहे थे। इसीलिए सँभालकर स्त्री के साथ काम निकाल लेने जैसा है। स्त्री तो अपने पास काम निकलवा लेगी। पर हमें नहीं आता।

स्त्री साड़ी लाने को कहे डेढ़ सौ रुपये की, तो हम पच्चीस अधिक दें। तब छह महीनों तक तो चलेगा! समझना पड़ेगा। लाइफ मतलब तो कला है! यह तो जीवन जीने की कला नहीं हो और पत्नी लाने जाता

है! बिना सर्टिफिकेट के पति होने गया, पति होने की योग्यता का सर्टिफिकेट होना चाहिए, तभी बाप होने का अधिकार है। यह तो बिना अधिकार के बाप बन गए और वापिस दादा भी बनते हैं! इसका कब पार आएगा? कुछ समझना चाहिए।

रिलेटिव में तो जोड़ना

यह तो 'रिलेटिव' सगाईयाँ हैं। यदि 'रियल' सगाई हो न, तब तो हमारा ज़िद पर अड़ जाना काम का कि तू सुधरे नहीं तब तक मैं अपनी ज़िद पर अड़ा रहूँगा। पर यह तो रिलेटिव! रिलेटिव मतलब एक घंटा यदि पत्नी के साथ जमकर लड़ाई हो जाए तो दोनों को डायवोर्स का विचार आ जाता है, फिर उस विचारबीज का पेड़ बनता है। हमें यदि वाइफ की ज़रूरत हो तो वह फाड़ती रहे तो हमें सिलते जाना है। तभी यह रिलेटिव संबंध टिकेगा, नहीं तो टूट जाएगा। बाप के साथ भी रिलेटिव संबंध है। लोग तो रियल सगाई मानकर बाप के साथ ज़िद पर अड़ जाते हैं। वह सुधरे नहीं, तब तक ज़िद पर अड़ना? घनचक्कर, ऐसे करते-करते सुधरते हुए तो बूढ़ा मर जाएगा। उससे तो उसकी सेवा कर और बेचारा बैर बाँधकर जाए उससे अच्छा तो उसे शांति से मरने दे न! उसके सींग उसे भारी। किसी के बीस-बीस फुट लंबे सींग होते हैं। उसमें हमें क्या भार? जिसके हों उसे भार।

हमें अपना फ़र्ज़ निभाना है इसीलिए ज़िद पर मत अड़ना, तुरंत बात का हल ला दो। उसके बावजूद भी सामनेवाला व्यक्ति बहुत लड़े तो कहें कि मैं तो पहले से ही बेवकूफ हूँ, मुझे तो ऐसा आता ही नहीं है। ऐसा कह दिया इससे वह आपको छोड़ देगा। चाहे जिस रास्ते छूट जाओ और मन में ऐसा मत मान बैठना कि सब चढ़ बैठेंगे तो क्या करूँगा? वे क्या चढ़ बैठेंगे? चढ़ बैठने की किसी के पास शक्ति ही नहीं है। ये सब कर्म के उदय से लट्टू नाच रहे हैं। इसलिए जैसे-तैसे करके आज का शुक्रवार क्लेश बिना का निकाल डालो, कल की बात कल देख लेंगे। दूसरे दिन कोई पटाखा फूटने का हुआ तो चाहे जिस तरह से उसे ढँक देना, फिर देख लेंगे। ऐसे दिन बिताने चाहिए।

वह सुधरा हुआ कब तक टिके?

हर एक बात में हम सामनेवाले के साथ एडजस्ट हो जाएँ तो कितना आसान हो जाए। हमें साथ में क्या ले जाना है? कोई कहेगा कि भाई उसे सीधा करो। अरे, उसे सीधा करने जाएगा तो तू टेढ़ा हो जाएगा। इसलिए वाइफ को सीधा करने जाना मत, जैसी हो उसे करेक्ट कहें। हमें उसके साथ कायम का साथ हो तो अलग बात है। यह तो एक जन्म के बाद जाने कहाँ बिखर पड़ेंगे। दोनों के मरणकाल अलग, दोनों के कर्म अलग। कुछ भी लेना भी नहीं और देना भी नहीं! यहाँ से तो किसके यहाँ जाएगी उसकी क्या खबर? हम सीधी करें तो अगले जन्म में जाएगी किसी और के भाग्य में!

प्रश्नकर्ता : उसके साथ कर्म बंधे हों तो दूसरे जन्म में मिलेंगे तो सही न?

दादाश्री : मिलेंगे, पर दूसरी तरह से मिलेंगे। किसी की औरत बनकर हमारे यहाँ बात करने आए। कर्म के नियम हैं न! यह तो ठौर नहीं और ठिकाना भी नहीं। कोई ही पुण्यशाली मनुष्य ऐसे होते हैं कि जो कुछ भव साथ में रहें। देखो न, नेमिनाथ भगवान, राजुल के साथ नौ भव से साथ ही साथ थे न! ऐसा हो तो बात अलग है। यह तो दूसरे भव का ही ठिकाना नहीं है। अरे, इस भव में ही चले जाते हैं न! उसे डायवोर्स कहते हैं न? इसी भव में दो पति करती है, तीन पति करती है!

एडजस्ट हो जाएँ, तब भी सुधरे

इसलिए आपको उन्हें सीधा करना नहीं है। वे आपको सीधा करे नहीं। जैसा मिला वैसा सोने का। प्रकृति किसी की, कभी भी सीधी होती नहीं है। कुत्ते की दुम टेढ़ी की टेढ़ी ही रहती है, इसलिए हम सँभलकर चलें। जैसी हो वैसी भले ही हो, 'एडजस्ट एवरीव्हेर'।

धमकाने की जगह पर आपने नहीं धमकाया, उससे वाइफ अधिक सीधी रहती है। जो गुस्सा नहीं करता उसका ताप बहुत सख्त होता है।

ये हम किसी को कभी भी डाँटते नहीं हैं, फिर भी हमारा ताप बहुत लगता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर वह सीधी हो जाएगी?

दादाश्री : सीधा होने का मार्ग ही पहले से यह है। वह कलियुग के लोगों को पुसाता नहीं हैं, पर उसके बगैर छुटकारा भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मगर वह मुश्किल बहुत है।

दादाश्री : ना, ना वह मुश्किल नहीं है, वही आसान है। गाय के सींग गाय को भारी।

प्रश्नकर्ता : हमें भी वह मारती है न?

दादाश्री : किसी दिन हमें लग जाता है। सींग मारने आए तो हम ऐसे खिसक जाते हैं, वैसे यहाँ पर भी खिसक जाना है! यह तो मुश्किल कहाँ आती है? मेरी शादी की हुई और मेरी वाइफ। अरे, नहीं है वाइफ और ये हसबैन्ड ही नहीं तो फिर वाइफ होती होगी? यह तो अनाड़ी के खेल हैं! आर्यप्रजा कहाँ रही है आजकल?

सुधारने के बदले सुधरने की ज़रूरत

प्रश्नकर्ता : 'खुद की भूल है' ऐसा स्वीकारकर पत्नी को सुधार नहीं सकते?

दादाश्री : सुधारने के लिए खुद ही सुधरने की ज़रूरत है। किसी को सुधारा ही नहीं जा सकता है। जो सुधारने के प्रयत्नवाले हैं, वे सब अहंकारी है। खुद सुधरा मतलब सामनेवाला सुधर ही जाएगा। मैंने ऐसे भी देखे हैं कि जो बाहर सब सुधारने निकले होते हैं और घर में उनकी वाइफ के सामने आबरू नहीं होती। मदर के सामने आबरू नहीं होती। ये किस तरह के मनुष्य हैं? पहले तू सुधर। मैं सुधारूँ, मैं सुधारूँ वह गलत इगोइज़म है। अरे! तेरा ही तो ठिकाना नहीं, फिर तू क्या सुधारनेवाला है? पहले खुद समझदार होने की ज़रूरत है। 'महावीर' महावीर होने का ही

प्रयत्न करते थे और उसका इतना प्रभाव पड़ा है! पच्चीस सौ साल होने पर भी उनका प्रभाव जाता नहीं है। हम किसी को सुधारते नहीं हैं।

किसे सुधारने का अधिकार?

आपको सुधारने का अधिकार कितना है? जिसमें चैतन्य है, उसे सुधारने का आपको क्या अधिकार है? यह कपड़ा मैला हो गया हो तो उसे हमें साफ करने का अधिकार है। क्योंकि वहाँ सामने से किसी भी तरह का रिएक्शन नहीं है। और जिसमें चैतन्य है, वह तो रिएक्शनवाला है, उसे आप क्या सुधारोगे? यह प्रकृति खुद की ही सुधरती नहीं है, वहाँ दूसरे की क्या सुधारनी? खुद ही लट्टू है। ये सब टोप्स हैं। क्योंकि वे प्रकृति के अधीन है। पुरुष हुआ नहीं। पुरुष होने के बाद ही पुरुषार्थ उत्पन्न होता है। यह तो पुरुषार्थ देखा ही नहीं है।

व्यवहार निभाना, एडजस्ट होकर

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में रहना है तो एडजस्ट एकपक्षीय तो नहीं होना चाहिए न?

दादाश्री : व्यवहार तो उसका नाम कहलाता है कि 'एडजस्ट' हो जाएँ यानी कि पड़ोसी भी कहें कि, 'सब घर में झगड़े हैं, परन्तु इस घर में झगड़ा नहीं है।' उसका व्यवहार सबसे अच्छा माना जाता है। जिसके साथ रास नहीं आए, वहीं पर शक्ति विकसित करनी है, रास आए वहाँ तो शक्ति है ही। नहीं रास आए वह तो कमज़ोरी है। मुझे सबके साथ कैसे रास आ जाता है? जितने एडजस्टमेन्ट्स लेंगे उतनी शक्तियाँ बढ़ेंगी और अशक्तियाँ टूटती जाएँगी। सच्ची समझ तो दूसरी सभी समझ को ताले लगेंगे तब ही होगी।

'ज्ञानी' तो सामनेवाला टेढ़ा हो तब भी उसके साथ 'एडजस्ट' हो जाते हैं। 'ज्ञानी पुरुष' को देखकर चले तो सभी तरह के 'एडजस्टमेन्ट्स' करने आ जाएँ। उसके पीछे साइन्स क्या कहता है कि वीतराग हो जाओ, राग-द्वेष मत करो। यह तो अंदर कुछ आसक्ति रह जाती है, इसलिए मार

पड़ती है। इस व्यवहार में एकपक्षीय, निःस्पृह हो गए हों तो टेढ़े कहलाएँगे। हमें ज़रूरत हो, तब सामनेवाला टेढ़ा हो फिर भी उसे मना लेना पड़ता है। ये स्टेशन पर मज़दूर चाहिए तो वह आनाकानी कर रहा हो, तब भी उसे चार आने कम-ज़्यादा करके भी मना लेना पड़ता है, और न मनाएँ तो वह बैग अपने सिर पर ही डालेगा न?

'डोन्ट सी लॉज़, प्लीज़ सेटल' (कानून मत देखना, कृपया समाधान करो), सामनेवाले को 'सेटलमेन्ट' लेने के लिए कहना, 'आप ऐसा करो, वैसा करो', ऐसा कहने के लिए टाइम ही कहाँ होता है? सामनेवाले की सौ भूलें हों, तब भी हमें तो खुद की ही भूल कहकर आगे निकल जाना है। इस काल में लॉ (कानून) तो देखा जाता होगा? यह तो अंतिम स्तर पर आ गया है। जहाँ देखो वहाँ दौड़ादौड़ और भागम्भाग। लोग उलझ गए हैं। घर जाए तो वाइफ चिल्लाती है, बच्चे चिल्लाते हैं, नौकरी पर जाए तो सेठ चिल्लाता है, गाड़ी में जाए तो भीड़ में धक्के खाता है, कहीं भी चैन नहीं है। चैन तो चाहिए न? कोई लडने लगे तो हमें उसके ऊपर दया रखनी चाहिए कि अहोहो! इसे कितनी अधिक बेचैनी होगी कि वह लड़ पड़ता है! बेचैन हो जाते हैं, वे सब कमज़ोर हैं।

प्रश्नकर्ता : बहुत बार ऐसा होता है कि एक समय में दो लोगों के साथ एक ही बात पर 'एडजस्टमेन्ट' लेना होता है, तो उसी समय सब ओर किस तरह ले सकते हैं?

दादाश्री : दोनों के साथ लिया जा सकता है। अरे, सात लोगों के साथ भी लेना हो, तब भी लिया जा सकता है। एक पूछे, 'मेरा क्या किया?' तब कहें, 'हाँ भाई, तेरे कहे अनुसार करूँगा। दूसरे को भी ऐसा कहेंगे, 'आप कहोगे वैसा करूँगा।' 'व्यवस्थित' के बाहर होनेवाला नहीं है, इसलिए चाहे जैसे झगड़ा खड़ा मत करना।'

यह तो सही-गलत कहने से भूत परेशान करते हैं। हमें तो दोनों को एक जैसा कर देना है। इसे अच्छा कहा इसलिए दूसरा गलत हो गया, इसलिए फिर वह परेशान करता है। पर दोनों का मिक्सचर कर डालें इससे

फिर असर नहीं रहेगा। एडजस्ट ऐवरीव्हेर की हमने खोज की है। सही कह रहा हो उसके साथ और गलत कह रहा हो उसके साथ एडजस्ट हो। हमें कोई कहे, 'आपमें अक्कल नहीं है, तो हम उसके साथ तुरन्त एडजस्ट हो जाएँ और उसे कहें कि यह तो पहले से ही नहीं थी, अभी कहाँ तू खोजने आया है? तुझे तो आज उसका पता चला, पर मैं तो बचपन से ही जानता हूँ।' ऐसा कहें इसलिए झँझट मिट गई न? फिर वह हमारे पास अक्कल ढूंढने ही नहीं आएगा। ऐसा नहीं करें तो 'अपने घर' कब पहुँच पाएँगे?

हम यह सरल और सीधा रास्ता बता देते हैं और ये टकराव क्या रोज़-रोज़ होते हैं? वह तो जब अपने कर्म का उदय हो तब होता है, उतना ही हमें एडजस्ट करना है। घर में लीला (पत्नी) के साथ झगड़ा हुआ हो तो झगड़ा होने के बाद लीला को होटल में ले जाकर, खाना खिलाकर खुश करें, अब ताँता नहीं रहना चाहिए।

एडजस्टमेन्ट को हम न्याय कहते हैं। आग्रह-दुराग्रह, वह कोई न्याय नहीं कहलाता। किसी भी प्रकार का आग्रह न्याय नहीं है। हम किसी का आग्रह नहीं पकड़ते। जिस पानी से मूँग गलें उससे गला लें, अंत में गटर के पानी से भी गला लें!!

ये डाकू मिल जाएँ उसके साथ डिसएडजस्ट हों तो वे मारेंगे। उसके बदले हम निश्चित करें कि उसके साथ एडजस्ट होकर काम लेना है। फिर उसे पूछे कि भाई तेरी क्या इच्छा है? देख भाई हम तो यात्रा करने निकले हैं। उसे एडजस्ट हो जाते हैं।

यह बाँद्रा की खाड़ी बदबू मारे तो उसे क्या लड़ने जाते हैं? वैसे ही ये मनुष्य बदबू मारते हैं, उन्हें कुछ कहने जाना चाहिए? बदबू मारनेवाले सभी खाड़ियाँ कहलाते हैं और सुगंधी आए वे बाग़ कहलाते हैं। जो-जो बदबू मारते हैं, वे सब कहते हैं कि आप हमारे साथ वीतराग रहो।

यह एडजस्ट एवरीव्हेर नहीं होगा तो पागल हो जाओगे सब। सामनेवाले को छेड़ते रहोगे, उससे ही वे पागल होते हैं। इस कुत्ते को एक

बार छेड़ें, दूसरी बार, तीसरी बार छेड़ें तब तक वह हमारी आबरू रखता है, पर फिर बहुत छेड़छाड़ करें तो वह भी काट लेता है। वह भी समझ जाता है कि यह रोज़ छेड़ता है, यह नालायक है, बेशर्म है। यह समझने जैसा है। झँझट कुछ भी करनी नहीं है, एडजस्ट एवरीव्हेर।

नहीं तो व्यवहार की गुत्थियाँ रोकती हैं

पहले यह व्यवहार सीखना है। व्यवहार की समझ के बिना तो लोग तरह-तरह की मार खाते हैं।

प्रश्नकर्ता : अध्यात्म में तो आपकी बात के बारे में कुछ कहने का ही नहीं है। परन्तु व्यवहार में भी आपकी बात टॉप की बात है।

दादाश्री : ऐसा है न, कि व्यवहार में टोप का समझे बिना कोई मोक्ष में गया नहीं है, चाहे जितना बारह लाख का आत्मज्ञान हो पर व्यवहार समझे बिना कोई मोक्ष में गया नहीं। क्योंकि व्यवहार छुड़वानेवाला है न? वह न छोड़े तो आप क्या करोगे? आप शुद्धात्मा हो ही, परन्तु व्यवहार छोड़े तब न? आप व्यवहार को उलझाते रहते हो। झट-पट निबेड़ा लाओ न!

इन भैया से कहा हो कि 'जा, दुकान से आइस्क्रीम ले आ।' पर वह आधे रास्ते से ही वापिस आ जाए। हम कहें, 'क्यों?' तो वह कहे, 'रास्ते में गधा मिल गया इसलिए, अपशुकन हो गया।' अब इसे ऐसा उल्टा ज्ञान हुआ है, वह हमें निकाल बाहर करना चाहिए न? उसे समझाना चाहिए कि भाई, गधे में भगवान रहे हुए हैं, इसलिए अपशुकन कुछ होता नहीं है। तू गधे का तिरस्कार करेगा तो उसमें रहे हुए भगवान को पहुँचता है, उससे तुझे भयंकर दोष लगता है। वापिस ऐसा नहीं होना चाहिए। इस तरह से यह उल्टा ज्ञान हुआ है। इसके आधार पर एडजस्ट नहीं हो सकते हैं।

काउन्टरपुली-एडजस्टमेन्ट की रीति

हमें पहले अपना मत नहीं रखना चाहिए। सामनेवाले से पूछना चाहिए कि इस बारे में आपका क्या कहना है? सामनेवाला अपना पकड़कर

रखे तो हम हमारा छोड़ दें। हमें तो इतना ही देखना है कि किस रास्ते सामनेवाले को दुःख न हो। अपना अभिप्राय सामनेवाले पर थोपना नहीं है। सामनेवाले का अभिप्राय हमें लेना है। हम तो सबके अभिप्राय लेकर 'ज्ञानी' हुए हैं। मैं मेरा अभिप्राय किसी पर थोपने जाऊँ तो मैं ही कच्चा पड़ जाऊँ। अपने अभिप्राय से किसी को दुःख नहीं होना चाहिए। तेरे रिवोल्युशन अठारह सौ हों और सामनेवाले के छह सौ हों, और तू तेरा अभिप्राय उस पर थोपने जाए तो सामनेवाले का इंजन टूट जाएगा। उसके सभी गियर बदलने पड़ेंगे।

प्रश्नकर्ता : रिवॉल्युशन मतलब क्या?

दादाश्री : यह विचारों की जो स्पीड है वह हर एक की अलग होती है। कुछ हुआ हो तब वह एक मिनट में तो कितना ही दिखा देता है, उसके सभी पर्याय एट-ए-टाइम दिखा देता है। ये बड़े-बड़े प्रेसिडेन्टों को मिनट के बारह सौ-बारह सौ रिवॉल्युशन्स घूमते हैं। तब हमारे पाँच हज़ार होते हैं। महावीर के लाख रिवॉल्युशन्स घूमते थे।

यह मतभेद पड़ने का कारण क्या है? आपकी वाइफ के सौ रिवॉल्युशन्स हो और आपके पाँच सौ रिवॉल्युशन्स हों और आपको बीच में काउन्टरपुली डालना आता नहीं है इसलिए चिनगारियाँ उड़ती हैं, झगड़े होते हैं। अरे! कितनी बार तो इंजन भी टूट जाता है। रिवॉल्युशन समझे आप? ये मज़दूर से आप बात करो तो आपकी बात उसे पहुँचेगी नहीं। उसके रिवॉल्युशन पचास होते हैं और आपके पाँच सौ होते हैं, किसी के हज़ार होते हैं, किसी के बारह सौ होते हैं। जैसा जिसका डेवलपमेन्ट हो उस अनुसार रिवॉल्युशन्स होते हैं। बीच में काउन्टरपुली डालो तब ही उसे आपकी बात पहुँचेगी। काउन्टरपुली मतलब आपको बीच में पट्टा डालकर अपने रिवॉल्युशन्स कम कर देने पड़ेंगे। मैं हरएक व्यक्ति के साथ काउन्टरपुली डाल देता हूँ। सिर्फ अहंकार निकाल देने से काम हो ऐसा नहीं है, काउन्टरपुली भी हरएक के साथ डालनी पड़ती है। इसलिए तो हमारा किसी के साथ मतभेद ही नहीं होता न! हम समझते हैं कि इस व्यक्ति के इतने ही रिवॉल्युशन्स हैं। इसलिए उस अनुसार मैं काउन्टरपुली

लगा देता हूँ। हमें तो छोटे बच्चों के साथ भी बहुत रास आता है। क्योंकि हम उनके साथ चालीस रिवॉल्युशन्स कर देते हैं इसलिए उसे मेरी बात पहुँचती है, नहीं तो वह मशीन टूट जाए।

प्रश्नकर्ता : कोई भी, सामनेवाले के लेवल पर आए तब ही बात होती है?

दादाश्री : हाँ, उसके रिवॉल्युशन्स पर आए तब ही बात होती है। यह आपके साथ बातचीत करते हुए हमारे रिवॉल्युशन्स कहीं के कहीं जाकर आते हैं! पूरे वर्ल्ड में घूम आते हैं। काउन्टरपुली आपको डालना नहीं आता, उसमें कम रिवॉल्युशनवाले इंजन का क्या दोष? वह तो आपका दोष कि आपको 'काउन्टरपुली' डालना नहीं आता है।

उल्टा कहने से कलह हुई...

प्रश्नकर्ता : पति का भय, भविष्य का भय, एडजस्टमेन्ट लेने नहीं देता है। वहाँ पर 'हम उसे सुधारनेवाले कौन?' वह याद रहता नहीं, और सामनेवाले को चेतावनी के रूप में बोल दिया जाता है।

दादाश्री : वह तो 'व्यवस्थित' का उपयोग करे, 'व्यवस्थित' फिट हो जाए तो कोई परेशानी हो ऐसा नहीं है। फिर कुछ पूछने जैसा ही नहीं रहे। पति आए तब थाली और पाटा रखकर कहें कि चलिए भोजन के लिए। उनकी प्रकृति बदलनेवाली नहीं है। जो प्रकृति हम देखकर, पसंद करके, शादी करके लाए, वह प्रकृति अंत तक देखनी है। तब क्या पहले दिन नहीं जानते थे कि यह प्रकृति ऐसी ही है? उसी दिन अलग हो जाना था न? मुँह क्यों लगाया अधिक?

इस किच-किच से संसार में कोई फायदा होता नहीं है, नुकसान ही होता है। किच-किच यानी कलह, इसलिए भगवान ने उसे कषाय कहा है।

आप दोनों के बीच में प्रोब्लेम बढ़ें वैसे अलग होता जाता है। प्रोब्लेम सोल्व हो जाएँ फिर अलग नहीं रहता। जुदाई से दु:ख है। और सभी को प्रोब्लेम खड़े होनेवाले हैं। आपको अकेले को होते हैं ऐसा नहीं है। जितनों

ने शादी की है उन्हें प्रोब्लेम खड़े हुए बगैर रहते नहीं।

कर्म के उदय से झगड़े चलते रहते हैं, मगर जीभ से उल्टा बोलना बंद करो। बात पेट की पेट में ही रखो, घर में या बाहर बोलना बंद कर दो।

अहो! व्यवहार का मतलब ही...

प्रश्नकर्ता : प्रकृति न सुधरे, परन्तु व्यवहार तो सुधरना चाहिए न?

दादाश्री : व्यवहार तो लोगों को आता ही नहीं। व्यवहार किसी दिन आया होता न, अरे, आधे घंटे में भी आया होता तो भी बहुत हो गया! व्यवहार तो समझे ही नहीं हैं। व्यवहार मतलब क्या? *उपलक* (सतही, ऊपर ऊपर से, सुपरफ्लुअस)! व्यवहार का मतलब सत्य नहीं है। यह तो व्यवहार को सत्य ही मान लिया है। व्यवहार में सत्य मतलब रिलेटिव सत्य। यहाँ के नोट सच्चे हों या झूठे हों दोनों 'वहाँ' के स्टेशन पर काम लगते नहीं हैं। इसलिए छोड़ न इसे, और हम 'अपना' काम निकाल लें। व्यवहार मतलब दिया हुआ वापिस करना, वह। अभी कोई कहे कि, 'चंदूलाल में अक्कल नहीं है।' तो हम समझ जाएँ कि यह दिया हुआ वापिस आया! यह जो समझो तो वह व्यवहार कहलाए। आजकल व्यवहार किसी को है ही नहीं। जिसे व्यवहार, व्यवहार है उसका निश्चय, निश्चय है।

...और सम्यक् कहने से कलह शम जाता है

प्रश्नकर्ता : किसी ने जान-बूझकर यह वस्तु फेंक दी, तो वहाँ पर क्या एडजस्टमेन्ट लेना चाहिए?

दादाश्री : यह तो फेंक दिया, पर बच्चा फेंक दे तब भी हमें 'देखते' रहना है। बाप बच्चे को फेंक दे तो हमें देखते रहना है। तब क्या हमें पति को फेंक देना चाहिए? एक को तो अस्पताल जाना पड़ा अब वापिस दो अस्पताल खड़े करने? और फिर जब उसका चलेगा तब वह हमें पछाड़ देगा, फिर तीन अस्पताल खड़े हो गए।

प्रश्नकर्ता : तो फिर कुछ कहना ही नहीं चाहिए?

दादाश्री : कहो, पर सम्यक् कहना, यदि बोलना आए तो। नहीं तो कुत्ते की तरह भौंकते रहने का अर्थ क्या? इसलिए सम्यक् कहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सम्यक् मतलब किस तरह का?

दादाश्री : 'ओहोहो! आपने इस बच्चो को क्यों फेंका? क्या कारण है उसका?' तब वह कहे कि, 'जान-बूझकर मैं कोई थोड़े फेंकूँगा? वह तो मेरे हाथ में से छटक गया और गिर पड़ा।'

प्रश्नकर्ता : वह तो, उसने गलत बोला न?

दादाश्री : वे झूठ बोलें, वह हमें देखना नहीं है। झूठ बोलें या सच बोलें वह उसके अधीन है, वह अपने अधीन नहीं है। वह उसकी मरज़ी में आए ऐसा करें। उसे झूठ बोलना हो या हमें खतम करना हो, वह उसके ताबे में है। रात को अपनी मटकी में ज़हर डाल दे तो हम तो खतम ही हो जाए न! इसलिए जो हमारे ताबे में नहीं है वह हमें देखना नहीं है। सम्यक् कहना आए तो काम का है कि भाई इसमें क्या आपको फायदा हुआ? तो वह अपने आप कबूल करेगा। सम्यक् कहना नहीं और आप पाँच सेर का दोगे तो वह दस सेर का देगा!

प्रश्नकर्ता : कहना नहीं आए तो फिर क्या करना चाहिए? चुप बैठना चाहिए?

दादाश्री : मौन रहें और देखते रहें कि क्या होता है? सिनेमा में बच्चों को पटकते हैं, तब क्या करते हैं हम? कहने का अधिकार है सबका, पर कलह बढ़े नहीं उस तरह से कहने का अधिकार है। बाकी, जो कहने से कलह बढ़ता हो वह तो मूर्ख का काम है।

टकोर, अहंकारपूर्वक नहीं करते

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में कोई गलत करता हो उसे टकोर तो करनी

पड़ती है। उससे उसे दुःख होता है, तो किस तरह उसका निकाल करें?

दादाश्री : व्यवहार में टकोर करनी पड़ती है, परन्तु उसमें अहंकार सहित होता है, इसलिए उसका प्रतिक्रमण करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : टकोर नहीं करें तो वह सिर पर चढ़ता है?

दादाश्री : टोकना तो पड़ता है, पर कहना आना चाहिए। कहना नहीं आए, व्यवहार नहीं आए, तब अहंकार सहित टकोर होती है। इसलिए बाद में उसका प्रतिक्रमण करना चाहिए। आप सामनेवाले को टोको तब सामनेवाले को बुरा तो लगेगा, परन्तु उसका प्रतिक्रमण करते रहोगे तब फिर छह महीने, बारह महीने में वाणी ऐसी निकलेगी कि सामनेवाले को मीठी लगेगी। अभी तो टेस्टेड वाणी चाहिए, अन्टेस्टेड वाणी बोलने का अधिकार नहीं है। इस तरह से प्रतिक्रमण करोगे तो चाहे जैसा होगा, फिर भी सीधा हो जाएगा।

यह अबोला तो बोझा बढ़ाए

प्रश्नकर्ता : अबोला रखकर, बात को टालने से उसका निकाल हो सकता है?

दादाश्री : नहीं हो सकता। हमें तो सामनेवाला मिले तो कैसे हो? कैसे नहीं? ऐसे कहना चाहिए। सामनेवाला ज़रा शोर मचाए तो हमें ज़रा धीरे रहकर समभाव से निकाल करना चाहिए। उसका निकाल तो करना ही पड़ेगा न, जब-तब? बोलना बंद करोगे उससे क्या निकाल हो गया? उससे निकाल होता नहीं है, इसलिए तो अबोला खड़ा होता है। अबोला मतलब बोझा, जिसका निकाल नहीं हुआ उसका बोझा। हम तो तुरन्त उसे खड़ा रखकर कहें, 'खड़े रहो न, हमारी कोई भूल हो तो मुझे कहो।' मेरी बहुत भूलें होती हैं। आप तो बहुत होशियार, पढ़े-लिखे, इसलिए आपकी नहीं होतीं, पर मैं पढ़ा-लिखा कम हूँ इसलिए मेरी बहुत भूलें होती हैं। ऐसा कहें तब फिर वह खुश हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा करने से वह नरम नहीं पड़े तो क्या करें?

दादाश्री : नरम नहीं पड़ें तो हमें क्या करना है? हमें तो कहकर छूट जाना है, फिर क्या उपाय? कभी न कभी किसी दिन नरम पड़ेगा। डाँटकर नरम करो तो वह उससे कुछ नरम होगा नहीं। आज नरम दिखेगा, पर वह मन में नोंध रख छोड़ेगा और हम जब नरम होंगे उस दिन वह सब वापिस निकालेगा। यानी जगत् बैरवाला है। नियम ऐसा है कि बैर रखे, अंदर परमाणु संग्रह करके रखे, इसलिए हमें पूरा केस ही हल कर देना है।

प्रकृति के अनुसार एडजस्टमेन्ट...

प्रश्नकर्ता : हम सामनेवाले को अबोला तोड़ने का कहें कि मेरी भूल हो गई, अब माफ़ी माँगता हूँ। तब भी उसका दिमाग़ अधिक चढ़ें तो क्या करें?

दादाश्री : तब हम कहना बंद कर दें। उसे ऐसा कोई उल्टा ज्ञान हो गया होता है कि 'बहुत नमे नादान'। वहाँ फिर दूर रहना चाहिए। फिर जो हिसाब होए वह खरा। परन्तु जितने सरल हो न वहाँ तो हल ला देना चाहिए। हम, घर में कौन-कौन सरल हैं और कौन-कौन टेढ़े हैं, ऐसा नहीं समझते?

प्रश्नकर्ता : सामनेवाला सरल नहीं हो तो उसके साथ हमें व्यवहार तोड़ डालना चाहिए?

दादाश्री : नहीं तोड़ना चाहिए। व्यवहार तोड़ने से टूटता नहीं है। व्यवहार तोड़ने से टूटे ऐसा है भी नहीं। इसलिए हमें वहाँ मौन रहना चाहिए कि किसी दिन चिढ़ेगा तब फिर अपना हिसाब पूरा हो जाएगा। हम मौन रखें तब किसी दिन वह चिढ़े और खुद ही बोले कि आप बोलते नहीं, कितने दिनों से चुपचाप फिरते हो! ऐसे चिढ़े यानी हमारा काम हो जाएगा। तब क्या करें फिर? यह तो तरह-तरह का लोहा होता है, हमें सब पहचान में आते हैं। कुछ को बहुत गरम करें तो मुड़ जाता है। कुछ को भट्ठी में रखना पड़ता है फिर जल्दी से दो हथौड़े मारे कि सीधा हो गया। ये तो तरह-तरह के लोहे हैं! इसमें आत्मा वह आत्मा है, परमात्मा है और

लोहा वह लोहा है। ये सभी धातु हैं।

सरलता से भी सुलझ जाए

प्रश्नकर्ता : हमें घर में किसी वस्तु का ध्यान रहता नहीं हो, घरवाले हमें ध्यान रखो, ध्यान रखो कहते हों, फिर भी न रहे तो उस समय क्या करें?

दादाश्री : कुछ भी नहीं, घरवाले कहें, 'ध्यान रखो, ध्यान रखो।' तब हमें कहना कि हाँ, रखूँगा। हमें ध्यान रखने का निश्चित करना है। फिर भी ध्यान न रहा और कुत्ता घुस गया तब कहो कि मुझे ध्यान नहीं रहता। उसका हल तो लाना पड़ेगा न? हमें खुद भी किसी ने ध्यान रखने का सौंपा हो और हम ध्यान रखें, फिर भी नहीं रहा तो कह देते हैं कि भाई यह नहीं रह सका हमसे।

ऐसा है न हम बड़ी उम्र के हैं, ऐसा ध्यान न रहे तो काम हो। बालक जैसी अवस्था हो तो 'समभावे निकाल' अच्छा होता है। हम तो बालक जैसे हैं, इसलिए हम जैसा होता है वैसा कह देते हैं, ऐसे भी कह देते हैं और वैसे भी कह देते हैं, बहुत बड़प्पन क्या करना?

कसौटी आए वह पुण्यवान कहलाते हैं! इसलिए उकेल लाना, झक नहीं पकड़नी है। हमें अपने आप अपना दोष कह देना चाहिए। नहीं तो वे कहते हो तब हमें खुश होना चाहिए कि 'ओहोहो! आप मेरा दोष जान गए! बहुत अच्छा किया! आपकी बुद्धि हम जानते नहीं।

...सामनेवाले का समाधान कराओ न?

कोई भूल होगी, तो सामनेवाला कहता होगा न? इसलिए भूल खतम कर डालो न! इस जगत् में कोई जीव किसी को तकलीफ दे सकता नहीं है, ऐसा स्वतंत्र है, और तकलीफ देते हैं वह पूर्व की दख़ल की हुई थी इसलिए। उस भूल को मिटा दो फिर हिसाब रहेगा नहीं।

'लाल झंडी' कोई धरे तो समझ जाना कि इसमें अपनी कोई भूल है। यानी हम लोगों को उसे पूछना चाहिए कि भाई 'लाल झंडी' क्यों

दिखाते हो? तब वह कहे कि, 'आपने ऐसा क्यों किया था?' तब हम उससे माफ़ी माँग लें और कहें कि 'अब तू हरी झंडी दिखाएगा न?' तब वह हाँ कहेगा।

हमें कोई लाल झंडी दिखाता ही नहीं। हम तो सभी की हरी झंडी देखते हैं, उसके बाद आगे चलते हैं। कोई एक व्यक्ति भी लाल झंडी निकलते समय दिखाए तो उसे पूछते हैं कि भाई तू क्यों लाल झंडी दिखाता है? तब वह कहे कि आप तो उस तारीख को जानेवाले थे पर पहले क्यों जा रहे हो? तब हम उसे समझाते हैं कि, 'यह काम आ पड़ा इसीलिए जबरदस्ती जाना पड़ रहा है!' तब वह सामने से कहेगा कि तब तो आप जाओ, जाओ, कोई परेशानी नहीं है।

यह तो तेरी ही भूल के कारण लोग लाल झंडी दिखाते हैं। पर यदि तू उसका खुलासा करे तो जाने देंगे। पर यह तो कोई लाल झंडी दिखाए तब फिर मूर्ख शोर मचा देता है, 'जंगली, जंगली, बेअक्कल, लाल झंडी दिखाता है?' ऐसे डाँटता है। अरे, यह तो तूने नया खड़ा किया। कोई लाल झंडी दिखाता है अर्थात् 'देर इज़ समथिंग रोंग।' कोई ऐसे ही लाल झंडी दिखाता नहीं।

झगड़ा, रोज़ तो कैसे पुसाए?

दादाश्री : घर में झगड़े होते हैं?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : माइल्ड होते हैं या वास्तव में होते हैं?

प्रश्नकर्ता : वास्तव में भी होते हैं, परन्तु दूसरे दिन भूल जाते हैं।

दादाश्री : भूल नहीं जाओ तो करोगे क्या? भूल जाएँ तो भी वापिस झगड़ा होता है न? भूलें न हों तो वापिस झगड़ा कौन करे? बड़े-बड़े बंगलों में रहते हैं, पाँच जने रहते हैं, फिर भी झगड़ा करते हैं। कुदरत खाने-पीने का देती है, तब लोग झगड़ा करते हैं! ये लोग झगड़े, क्लेश, कलह करने में सूरमा हैं।

जहाँ लड़ाई-झगड़े हैं, वह अंडरडेवलप्ड प्रजा है। सार निकालना आता नहीं इसलिए लड़ाई-झगड़े होते हैं।

जितने मनुष्य हैं उतने धर्म अलग-अलग हैं। पर खुद के धर्म का मंदिर बनाए किस तरह? बाकी धर्म तो हरएक के अलग हैं। उपाश्रय में सामायिक करते हैं, वह भी हरएक की अलग-अलग होती हैं। अरे, कितने तो पीछे बैठे-बैठे कंकड़ मारा करते हैं, वह भी उनकी सामायिक करते हैं न? इसमें धर्म रहा नहीं, मर्म रहा नहीं। यदि धर्म भी रहा होता तो घर में झगड़े नहीं होते। होते तो वह महीने में एकाध बार होते। अमावस महीने में एक दिन ही आती है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : ये तो तीसों दिन अमावस। झगड़े में क्या मिलता होगा?

प्रश्नकर्ता : नुकसान मिलता है।

दादाश्री : घाटे का व्यापार तो कोई करे ही नहीं न! कोई कहता नहीं कि नुकसान का व्यापार करो! कुछ नफा कमाते तो होंगे न?

प्रश्नकर्ता : झगड़े में आनंद आता होगा!

दादाश्री : यह दूषमकाल है इसलिए शांति रहती नहीं है, वह जला हुआ दूसरे को जलाए तब उसे शांति होती है। कोई आनंद में हो, वह उसे अच्छा नहीं लगता, इसलिए पलीता दाग़कर वह जाए, तब उसे शांति होती है। ऐसा जगत् का स्वभाव है। बाकी, जानवर भी विवेकवाले होते हैं, वे झगड़ते नहीं हैं। कुत्ते भी हैं, वे खुद के मुहल्लेवाले हों उनके साथ अंदर-अंदर नहीं झगड़ते हैं। बाहर के मुहल्लेवाले आएँ तब सब साथ मिलकर उनके साथ लड़ते हैं। जब कि ये मूर्ख अंदर-अंदर लड़ते हैं। ये लोग विवेकशून्य हो गए हैं।

'झगड़ाप्रूफ' हो जाने जैसा है

प्रश्नकर्ता : हमें झगड़ा नहीं करना हो, हम कभी भी झगड़ा ही

नहीं करते हों फिर भी घर में सब सामने से रोज़ झगड़े करते रहें तो वहाँ क्या करना चाहिए?

दादाश्री : हमें झगड़ाप्रूफ हो जाना चाहिए। झगड़ाप्रूफ होंगे तभी इस संसार में रह पाएँगे। हम आपको झगड़ाप्रूफ बना देंगे। झगड़ा करनेवाला भी ऊब जाए ऐसा हमारा स्वरूप होना चाहिए। वर्ल्ड में कोई भी हमें डिप्रेस न कर सके ऐसा चाहिए। हमारे झगड़ाप्रूफ हो जाने के बाद झँझट ही नहीं न? लोगों को झगड़े करने हों, गालियाँ देनी हो तब भी हर्ज नहीं और फिर भी बेशर्म नहीं कहलाएँ, उल्टे जागृति बहुत बढ़ेगी।

बैरबीज में से झगड़ों का उद्भव

पहले जो झगड़े किए थे उनके बैर बँधते हैं और वे आज झगड़े के रूप में चुकाए जाते हैं। झगड़ा हो, उसी घड़ी बैर का बीज पड़ जाता है, वह अगले भव में उगेगा।

प्रश्नकर्ता : तो वह बीज किस तरह से दूर हो?

दादाश्री : धीरे-धीरे 'समभावे निकाल' करते रहो तो दूर होगा। बहुत भारी बीज पड़ा हो तो देर लगेगी, शांति रखनी पड़ेगी। अपना कुछ भी कोई ले लेता नहीं है। खाने का दो टाइम मिलता है, कपड़े मिलते हैं, फिर क्या चाहिए?

कमरे को ताला लगाकर जाए, पर हमें दो टाइम खाने का मिलता है या नहीं मिलता, उतना ही देखना है। हमें बंद करके जाए तब भी कुछ नहीं, हम सो जाएँ। पूर्वभव के बैर ऐसे बँधे हुए होते हैं कि हमें ताले में बंद करके जाएँ। बैर और फिर नासमझी से बँधा हुआ। समझवाला हो तो हम समझ जाएँ कि यह समझवाला है, तब भी हल आ जाए। अब नासमझीवाला हो वहाँ किस तरह हल आए। इसलिए वहाँ बात को छोड़ देनी चाहिए।

ज्ञान से, बैरबीज छूटे

अब बैर सब छोड़ देने हैं। इसीलिए कभी 'हमारे' पास से स्वरूपज्ञान

प्राप्त कर लेना ताकि सभी बैर छूट जाएँ। इसी भव में ही सब बैर छोड़ देने हैं, हम आपको रास्ता दिखाएँगे। संसार में लोग ऊबकर मौत किसलिए ढूँढते हैं? ये उपाधियाँ पसंद नहीं हैं, इसलिए। बात तो समझनी पड़ेगी न? कब तक मुश्किल में पड़े रहोगे? यह तो कीड़े-मकोडों जैसा जीवन हो गया है। निरी तरफड़ाहट, तरफड़ाहट और तरफड़ाहट। मनुष्य में आने के बाद फिर तरफड़ाट क्यों हो? जो ब्रह्मांड का मालिक कहलाए उसकी यह दशा! सारा जगत् तरफड़ाहट में है और तरफड़ाहट में न हो तो मूर्च्छा में होता है। इन दोनों के अलावा बाहर जगत् नहीं है। और तू ज्ञानघन आत्मा हो गया तो दख़ल गया।

जैसा अभिप्राय वैसा असर

प्रश्नकर्ता : ढोल बजता हो तो, चिढ़नेवाले को चिढ़ क्यों होती है?

दादाश्री : वह तो माना कि 'पसंद नहीं है' इसलिए। यह ढोल बज रहा हो तो हमें कहना कि 'अहोहो! ढोल बहुत अच्छा बज रहा है!' इसलिए फिर अंदर कुछ नहीं होगा। 'यह खराब है' ऐसा अभिप्राय दिया तो अंदर सारी मशीनरी बिगड़ जाती है। अपने को तो नाटकीय भाषा में कहना है कि 'बहुत अच्छा ढोल बजाया।' इससे अंदर छूता नहीं।

यह 'ज्ञान' मिला है इसलिए सब 'पेमेन्ट' किया जा सकता है। विकट संयोगों में तो ज्ञान बहुत हितकारी है, ज्ञान का 'टेस्टिंग' हो जाता है। ज्ञान की रोज़ 'प्रेक्टिस' करने जाएँ तो कुछ 'टेस्टिंग' नहीं होता। वह तो एकबार विकट संयोग आ जाए तो सब 'टेस्टेड' हो जाता है।

यह सद्विचारणा, कितनी अच्छी

हम तो इतना जानते हैं कि झगड़ने के बाद वाइफ के साथ व्यवहार ही नहीं रखना हो तो अलग बात है। परन्तु वापिस बोलना है तो फिर बीच की सारी ही भाषा गलत है। हमें तो यह लक्ष्य में ही होता है कि दो घंटे बाद वापिस बोलना है, इसलिए उसके साथ कच-कच नहीं करें। यह तो,

आपको अभिप्राय वापिस बदलना नहीं हो तो अलग बात है। अभिप्राय अपना बदले नहीं तो अपना किया हुआ खरा है। वापिस यदि वाइफ के साथ बैठनेवाले ही न हों तो झगड़े वह ठीक है। पर यह तो कल वापिस साथ में बैठकर भोजन करनेवाले हो, तो फिर कल नाटक किया उसका क्या? वह विचार करना पड़ेगा न? ये लोग तिल सेक-सेककर बोते हैं, इसलिए सारी मेहनत बेकार जाती है। झगड़े हो रहे हों तब लक्ष्य में होना चाहिए कि ये कर्म नाच नचा रहे हैं। फिर उस 'नाच' का ज्ञानपूर्वक हल लाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : दादा, यह तो झगड़ा करनेवाले दोनों व्यक्तियों को समझना चाहिए न?

दादाश्री : ना, यह तो 'सब-सबकी सँभालो।' हम लोग सुधरें तो सामनेलावा सुधरता है। यह तो विचारणा है, और एक घड़ी बाद में साथ बैठना है तो कलह किसलिए? शादी की है तो कलह किसलिए? आप बीते कल को भुला चुके हों और हमें तो सारी की सारी वस्तु 'ज्ञान' में हाज़िर होती हैं। जब कि यह तो सद्विचारणा है और 'ज्ञान' न हो उसे भी काम आए। यह अज्ञान से मानता है कि वह चढ़ बैठेगी। कोई हमें पूछें तो हम कहें कि तू भी लट्टू और वह भी लट्टू तो किस तरह चढ़ बैठेगी? वह कोई उसके बस में है? वह तो 'व्यवस्थित' के बस में है और वाइफ चढ़कर कहाँ ऊपर बैठनेवाली है? आप ज़रा झुक जाओ तो उस बिचारी के मन में भी अरमान पूरा होगा कि अब पति मेरे काबू में है। यानी संतोष हो उसे।

शंका, वह भी लड़ाई-झगड़े का कारण

घर में अधिकतर लड़ाई-झगड़े अभी शंका से खड़े हो जाते हैं। यह कैसा है कि शंका से स्पंदन उठते हैं और स्पंदनों के विस्फोट होते हैं। और यदि निःशंक हो जाए न तो विस्फोट अपने आप शांत हो जाए। पति-पत्नी दोनों शंकावाले हो जाएँ तो फिर विस्फोट किस तरह शांत हों? एक को तो निःशंक होना ही पड़ेगा। माँ-बाप के लड़ाई-झगड़ों से बच्चों के

संस्कार बिगड़ते हैं। बच्चों के संस्कार नहीं बिगड़े इसलिए दोनों को समझकर समाधान लाना चाहिए। यह शंका निकाले कौन? अपना 'ज्ञान' तो संपूर्ण निःशंक बनाए ऐसा है। आत्मा की अनंत शक्तियाँ हैं।

ऐसी वाणी को निबाह लें

यह तिपाई लगे तो हम उसे गुनहगार नहीं मानते, पर दूसरा कोई मारे तो उसे गुनहगार मानते हैं। कुत्ता हमें काटे नहीं और खाली भौंकता रहे तो हम उसे चला लेते हैं न! यदि मनुष्य हाथ नहीं उठाता हो और केवल भौंके तो निभा लेना नहीं चाहिए? भौंकना यानी टु स्पिक। बार्क यानी भौंकना। 'यह पत्नी बहुत भौंकती रहती है' ऐसा बोलते हैं न? ये वकील भी कोर्ट में भौंकते नहीं? वह जज दोनों को भौंकते हुए देखता रहता है। ये वकील निर्लेपता से भौंकते हैं न? कोर्ट में तो आमने-सामने 'आप ऐसे हो, आप वैसे हो, आप हमारे असील पर ऐसे झूठा आरोप लगाते हो' भौंकते हैं। हमें ऐसा लगता है कि ये दोनों बाहर निकलकर मारामारी करेंगे, परन्तु बाहर निकलने के बाद देखें तो दोनों साथ में बैठकर आराम से चाय पी रहे होते हैं!

प्रश्नकर्ता : वह ड्रामेटिक लड़ना कहलाए न?

दादाश्री : ना। वह तोतामस्ती कहलाती है। ड्रामेटिक तो 'ज्ञानी पुरुष' के अलावा किसी को आता नहीं है। तोते मस्ती करते हैं तो हम घबरा जाते हैं कि ये अभी मर जाएँगे, लेकिन नहीं मरते। वे तो यों ही चोंच मारा करते हैं। किसी को लगे नहीं ऐसे चोंच मारते हैं।

हम वाणी को रिकार्ड कहते हैं न? रिकार्ड बजा करती हो कि चंदू में अक्कल नहीं, चंदू में अक्कल नहीं। तब अपने को भी गाने लगना कि चंदू में अक्कल नहीं।

ममता के पेच खोलें किस तरह?

पूरे दिन काम करते-करते भी पति के प्रतिक्रमण करते रहना चाहिए। एक दिन में छह महीने का बैर धुल जाएगा और आधा दिन हो

तो मानो न तीन महीने तो कम हो जाएँगे। शादी से पहले पति के साथ ममता थी? ना। तो ममता कब से बंधी? शादी के समय मंडप में आमने-सामने बैठे, तब उसने निश्चित किया कि ये मेरे पति आए। ज़रा मोटे हैं, और काले हैं। इसके बाद उसने भी निश्चित किया कि ये मेरी पत्नी आई। तब से 'मेरा-मेरा' के जो पेच घुमाए, वे चक्कर घूमते ही रहते हैं। पंद्रह वर्षों की यह फिल्म है, उसे 'नहीं हैं मेरे, नहीं हैं मेरे' करेगा तब वे पेच खुलेंगे और ममता टूटेगी। यह तो शादी हुई तब से अभिप्राय खड़े हुए, प्रेजुडिस खड़ा हुआ कि 'ये ऐसे हैं, वेसे हैं।' उससे पहले कुछ था? अब तो हमें मन में निश्चित करना है कि, 'जो है, वो यही है।' और हम खुद पसंद करके लाए हैं। अब क्या पति बदला जा सकता है?

सभी जगह फँसाव! कहाँ जाएँ?

जिसका रास्ता नहीं उसे क्या कहा जाए? जिसका रास्ता नहीं हो उसके पीछे रोना-धोना नहीं करते। यह अनिवार्य जगत् है। घर में पत्नी का क्लेशवाला स्वभाव पसंद नहीं हो, बड़े भाई का स्वभाव पसंद नहीं हो, इस तरफ पिताजी का स्वभाव पसंद नहीं हो, ऐसे टोले में मनुष्य फँस जाए तब भी रहना पड़ता है। कहाँ जाए पर? इस फँसाव से चिढ़ मचती है, पर जाए कहा? चारों तरफ बाड़ है। समाज की बाड़ होती है। 'समाज मुझे क्या कहेगा?' सरकार की भी बाड़ें होती हैं। यदि परेशान होकर जलसमाधि लेने जुहू के किनारे जाए तो पुलिसवाले पकड़ें। 'अरे भाई, मुझे आत्महत्या करने दे न चैन से, मरने दे न चैन से।' तब वह कहे, 'ना, मरने भी नहीं दिया जा सकता। यहाँ तो आत्महत्या करने के प्रयास का गुनाह किया इसलिए तुझे जेल में डालते हैं।' मरने भी नहीं देते और जीने भी नहीं देते, इसका नाम संसार! इसलिए रहो न चैन से... और सिगरेट पीकर सो नहीं जाएँ? ऐसा यह अनिवार्यतावाला जगत्! मरने भी नहीं दे और जीने भी नहीं दे।

इसलिए जैसे-तैसे करके एडजस्ट होकर टाइम बिता देना चाहिए ताकि उधार चुक जाए। किसी का पच्चीस वर्ष का, किसी का पंद्रह वर्ष का, किसी का तीस वर्ष का, जबरदस्ती हमें उधार पूरा करना पड़ता है।

नहीं पसंद हो तब भी उसी के उसी कमरे में साथ में रहना पड़ता है। यहाँ बिस्तर मेमसाहब का और यहाँ बिस्तर भाईसाहब का। मुँह टेढ़े फिराकर सो जाएँ, तब भी विचार में तो मेमसाहब को भाईसाहब ही आते हैं न? छुटकारा ही नहीं है। यह जगत् ही ऐसा है। उसमें भी हमें वे अकेले पसंद नहीं हैं ऐसा नहीं है, उन्हें भी वापिस हम पसंद नहीं होते हैं! इसलिए इसमें मज़े लेने जैसा नहीं है।

इस संसार के झँझट में विचारशील को पुसाता नहीं है। जो विचारशील नहीं है, उसे तो यह झँझट है उसका भी पता नहीं चलता है। वह मोटा खाता कहलाता है। जैसे कि कान से बहरा मनुष्य हो उसके सामने उसकी चाहे जितनी गुप्त बातें करें, उससे क्या परेशानी है? ऐसा अंदर भी बहरा होता है सब इसलिए उसे यह जंजाल पुसाता है, बाकी जगत् में मज़े ढूँढने जाता है तो इसमें तो भाई कोई मज़ा होता होगा?

पोलम्पोल कब तक ढँकनी?

यह तो सारा बनावटी जगत् है! और घर में कलह करके, रोकर और वापिस मुँह धोकर बाहर निकलता है!! हम पूछें, 'कैसे हो चंदूभाई?' तब वह कहे, 'बहुत अच्छा है।' अरे, तेरी आँख में तो पानी है, मुँह धोकर आया है। पर आँख तो लाल दिखती है न? इसके बदले तो कह डाल न कि मेरे वहाँ यह दुःख है। ये तो सभी ऐसा समझते हैं कि दूसरे के वहाँ दुःख नहीं है। मेरे यहाँ ही दुःख है। ना, अरे सब ही रोए हैं। हरएक घर से रोकर मुँह धोकर बाहर निकले हैं। यह भी एक आश्चर्य है! मुँह धोकर किसलिए निकलते हो? धोए बगैर निकलो तो लोगों को पता चले कि इस संसार में कितना सुख है! मैं रोता हुआ बाहर निकलूँ, तू रोता हुआ बाहर निकले, सभी रोते हुए बाहर निकलें तब फिर पता चल जाए कि यह जगत् पोल ही है। छोटी उम्र में पिताजी मर गए तो शमशान में रोते-रोते गए! वापिस आकर नहाए, यानी कुछ भी नहीं!! नहाने का इन लोगों ने सिखलाया। नहला-धुलाकर चोखा कर देते हैं! ऐसा यह जगत् है! सभी मुँह धोकर बाहर निकले हुए हैं, सब पक्के ठग। उसके बदले तो खुला किया होता तो अच्छा।

हमारे 'महात्माओं' में से कुछ महात्मा खुला कर देते हैं कि 'दादा, आज तो पत्नी ने मुझे मारा।' इतनी अधिक सरलता किस कारण से आई? अपने ज्ञान के कारण आई। 'दादा' को तो सारी ही बात कही जा सकती हैं। ऐसी सरलता आई, वहीं से ही मोक्ष जाने की निशानी हुई। ऐसी सरलता होती नहीं है न? मोक्ष में जाने के लिए सरल ही होना है। यह बाहर तो पति छीट् छीट् किया करता है। पत्नी की मार खुद खा रहा हो, फिर भी बाहर कहता है कि, 'ना, ना, वह तो मेरी बेटी को मार रही थी!' अरे, मैंने खुद तुझे मार खाते हुए देखा था न? उसका क्या अर्थ? मीनिंगलेस। इससे तो सच सच कह दे न! आत्मा को कहाँ मारने का है? हम आत्मा हैं, मारेंगे तो देह को मारेंगे। अपने आत्मा का तो कोई अपमान ही नहीं कर सकता। क्योंकि 'हमें' वह देखे तो अपमान करे न? देखे बिना किस तरह अपमान करे? देह को तो यह भैंस नहीं मार जाती? वहाँ नहीं कहते कि इस भैंस ने मुझे मारा? इस भैंस से तो घर की पत्नी बड़ी नहीं है? उसमें क्या? किस की आबरू जानेवाली है? आबरू है ही कहाँ? इस जगत् में कितने जीव रहते हैं? कोई कपड़े पहनता है? आबरूवाले कपड़े पहनते ही नहीं। जिसकी आबरू नहीं है, वे कपड़े पहनकर आबरू ढँका करते हैं, जहाँ से फटे वहाँ सिलते रहते हैं। कोई देख जाएगा, कोई देख जाएगा! अरे, सिल-सिलकर कितने दिन तक आबरू रखेगा? सिली हुई आबरू रहती नहीं है। आबरू तो जहाँ नीति है, प्रमाणिकता है, दया है, लगाव है, ऑब्लाइजिंग नेचर है, वहाँ है।

... ऐसे फँसाव बढ़ता गया

यह रोटी और सब्ज़ी के लिए शादी करी। पति समझे कि मैं कमाकर लाऊँ, पर यह खाना कौन बनाकर देगा? पत्नी समझती है कि मैं रोटी बनाती तो हूँ पर कमाकर कौन देगा? ऐसा करके दोनों ने शादी की, और सहकारी मंडली बनाई। फिर बच्चे भी होंगे ही। एक लौकी का बीज बोया, फिर लौकी लगती रहती है कि नहीं लगती रहती? बेल के पत्ते-पत्ते पर लौकी लगती है। ऐसा ये मनुष्य भी लौकी की तरह उगते रहते हैं। लौकी की बेल ऐसा नहीं बोलती कि ये मेरी लौकियाँ हैं। ये मनुष्य अकेले ही

बोलते हैं कि ये मेरी लौकियाँ हैं। यह बुद्धि का दुरुपयोग किया, बुद्धि पर निर्भर रही इसलिए मनुष्य जाति निराश्रित कहलाई। दूसरे कोई जीव बुद्धि पर निर्भर नहीं हैं। इसलिए वे सब आश्रित कहलाते हैं। आश्रित को दुःख नहीं होता। इन्हें ही सारा दुःख होता है।

ये विकल्पी सुखों के लिए भटका करते हैं, पर पत्नी सामना करे तब उस सुख का पता चलता है कि यह संसार भोगने जैसा नहीं है। पर यह तो तुरन्त ही मूर्च्छित हो जाता है। मोह का इतना सारा मार खाता है, उसका भान भी रहता नहीं है।

बीवी रूठी हुई हो तब तक 'या अल्लाह परवरदिगार' करता है और बीवी बोलने आई तब फिर मियाँभाई तैयार! फिर अल्लाह और बाकी सब एक तरफ रह जाता है! कितनी उलझन! ऐसे कोई दुःख मिट जानेवाले हैं? घड़ीभर तू अल्लाह के पास जाए तो क्या दुःख मिट जाएगा? जितना समय वहाँ रहेगा उतना समय अंदर सुलगता बंद हो जाएगा ज़रा, पर फिर वापिस कायम की सिगड़ी सुलगा ही करेगी। निरंतर प्रकट अग्नि कहलाती है, घड़ीभर भी सुख नहीं होता! जब तक शुद्धात्मा स्वरूप प्राप्त नहीं होता, खुद की दृष्टि में 'मैं शुद्ध स्वरूप हूँ', ऐसा भान नहीं होता तब तक सिगड़ी सुलगा ही करेगी। शादी में भी बेटी का ब्याह करवा रहे हों तब भी अंदर सुलग रहा होता है! निरंतर संताप रहा करता है। संसार यानी क्या? जंजाल। यह देह लिपटा है, वह भी जंजाल है! जंजाल को तो भला शौक होता होगा? उसका शौक होता है, वह भी आश्चर्य है न! मछली पकड़ने का जाल अलग और यह जाल अलग! मछली के जाल में से काट-कूटकर निकला भी जा सकता है, पर इसमें से निकला ही नहीं जा सकता। ठेठ अरथी निकलती है तब निकला जाता है।

...उसे तो 'लटकती सलाम!'

इसमें सुख नहीं, वह समझना तो पड़ेगा न? भाई अपमान करें, मेमसाहब भी अपमान करें, बच्चे अपमान करें! यह तो सारा नाटकीय व्यवहार है, बाकी इनमें से कोई साथ में थोड़े ही आनेवाला हैं?

आप खुद शुद्धात्मा और ये सब व्यवहार उपलक है यानी कि सुपरफ्लुअस करने के हैं। खुद 'होम डिपार्टमेन्ट' में रहना है और 'फ़ॉरेन' में 'सुपरफ्लुअस' रहना है। 'सुपरफ्लुअस' यानी तन्मयाकार वृत्ति नहीं, ड्रामेटिक वह। खाली यह 'ड्रामा' ही खेलना है। 'ड्रामा' में नुकसान हुआ तब भी हँसना और नफा हुआ तब भी हँसना। 'ड्रामा' में दिखावा भी करना पड़ता है, नुकसान हुआ हो तो उसका दिखावा करना पड़ता है। मुँह पर बोलते भी हैं कि बहुत नुकसान हुआ, पर भीतर तन्मयाकार नहीं हों। हमें 'लटकती सलाम' रखनी है। कई लोग नहीं कहते कि भाई, मुझे तो इसके साथ 'लटकती सलाम' जैसा संबंध है। उसी तरह सारे जगत् के साथ रहना है। जिसे 'लटकती सलाम' पूरे जगत् के साथ आ गई, वह ज्ञानी हो गया। इस देह के साथ भी 'लटकती सलाम'! हम निरंतर सभी के साथ 'लटकती सलाम' रखते हैं, फिर भी सब कहते हैं कि, 'आप हम पर बहुत अच्छा भाव रखते हैं।' मैं व्यवहार सभी करता हूँ पर आत्मा में रहकर।

प्रश्नकर्ता : बहुत बार बड़ा लड़ाई-झगड़ा घर में हो जाता है। तब क्या करें?

दादाश्री : समझदार मनुष्य हो न तो लाख रुपये दें तब भी लड़ाई-झगड़ा नहीं करे, और यह तो बिना पैसे लड़ाई-झगड़ा करता है, तो वह अनाड़ी नहीं तो क्या है? भगवान महावीर को कर्म खपाने के लिए साठ मील चलकर अनार्य क्षेत्र में जाना पड़ा था, और आज के लोग पुण्यवान इसलिए घर बैठे अनार्य क्षेत्र है! कैसे धन्य भाग्य! यह तो अत्यंत लाभदायक है कर्म खपाने के लिए, यदि सीधा रहे तो।

एक घंटे का गुनाह, दंड ज़िन्दगी पूरी

एक घंटे नौकर को, बच्चे को या पत्नी को झिड़का हो-धमकाया हो, तो वह फिर पति बनकर या सास बनकर आपको सारी ज़िन्दगी कुचलते रहेंगे! न्याय तो चाहिए कि नहीं चाहिए? यह भुगतने का है। आप किसी को दु:ख दोगे तो दु:ख आपके लिए पूरी ज़िन्दगी का आएगा। एक ही घंटा दु:ख दो तो उसका फल पूरी ज़िन्दगी मिलेगा। फिर शोर मचाते

हो कि, 'पत्नी मुझे ऐसा क्यों करती है?' पत्नी को ऐसा होता है कि, 'पति के साथ मुझसे ऐसा क्यों होता है?' उसे भी दु:ख होता है, पर क्या हो? फिर मैंने उनसे पूछा कि 'पत्नी आपको ढूँढ लाई थी या आप पत्नी को ढूँढ लाए थे?' तब वह कहता है कि 'मैं ढूँढ लाया था।' तब उसका क्या दोष बेचारी का? ले आने के बाद उल्टा निकले, उसमें वह क्या करे? कहाँ जाए फिर? कुछ पत्नियाँ तो पति को मारती भी है। पतिव्रता स्त्री को तो ऐसा सुनने से भी पाप लगता है कि ऐसे पत्नी पति को मारती है।

प्रश्नकर्ता : जो पुरुष मार खाए तो वह स्त्री जैसा कहलाएगा न?

दादाश्री : ऐसा है, मार खाना कोई पुरुष की कमज़ोरी नहीं है। पर उसके यह ऋणानुबंध ऐसे होते हैं, पत्नी दु:ख देने के लिए ही आई होती है वह हिसाब चुकाती ही है।

पगला अहंकर, तो लड़ाई-झगड़ा करवाए

संसार में लड़ाई-झगड़े की बात ही नहीं करनी, वह तो रोग कहलाता है। लड़ना वह अहंकार है, खुला अहंकार है, वह पागल अहंकार कहलाता है। मन में ऐसा मानता है कि 'मेरे बिना चलेगा नहीं।' किसी को डाँटने में तो अपने को उल्टा बोझा लगता है, निरा सिर पक जाता है। लड़ने का किसी को शौक होता होगा?

घर में सामनेवाला पूछे, सलाह माँगे तो ही जवाब देना चाहिए। बिना पूछे सलाह देने बैठ जाए उसे भगवान ने अहंकार कहा है। पति पूछे कि 'ये प्याले कहाँ रखने हैं?' तो पत्नी जवाब देती है कि 'फलाँ जगह पर रख दो।' तो हम वहाँ रख दें। उसके बदले में कहें कि 'तुझे अक्कल नहीं, कहाँ रखने को तू कहती है?' उस पर पत्नी कहे कि 'अपनी अक्कल से रखो।' इसका कहाँ पार आए? यह संयोगों का टकराव है। इसलिए लट्टू खाते समय, उठते समय टकराया ही करते हैं। फिर लट्टू टकराते हैं, छिल जाते हैं और खून निकलता है। यह तो मानसिक खून निकलता है न! वो खून निकलता हो तब तो अच्छा,

पट्टी लगाए तो रुक जाता है। इस मानसिक घाव पर तो पट्टियाँ भी नहीं लगतीं कोई।

ऐसी वाणी बोलने जैसी नहीं है

घर में किसी से कुछ कहना, वह सबसे बड़ा अहंकार का रोग है। अपना-अपना हिसाब लेकर ही आए हैं सभी! हर एक की अपनी दाढ़ी उगती है, हमें किसी से कहना नहीं पड़ता कि दाढ़ी क्यों उगाता नहीं? वह तो उसे उगती ही है। सब सबकी आँखों से देखते हैं, सब सबके कानों से सुनते हैं। यह दख़ल करने की क्या ज़रूरत है? एक अक्षर भी बोलना मत। इसलिए हम यह 'व्यवस्थित' का ज्ञान देते हैं। अव्यवस्थित कभी भी होता ही नहीं है। अव्यवस्थित दिखता है वह भी 'व्यवस्थित' ही है। इसलिए बात ही समझनी है। कभी पतंग गोता खाए तब डोरी खींच लेनी है। डोरी अब अपने हाथ में है। जिसके हाथ में डोरी नहीं है उसकी पतंग गोता खाए, तो क्या करे? डोरी हाथ में है नहीं और शोर मचाता है कि मेरी पतंग ने गोता खाया।

घर में एक अक्षर भी बोलना बंद कर दो। 'ज्ञानी' के अलावा किसी से शब्द बोला नहीं जा सकता। क्योंकि 'ज्ञानी' की वाणी कैसी होती है? परेच्छानुसार होती है, दूसरों की इच्छा के आधार पर वे बोलते हैं। उन्हें किसलिए बोलना पड़ता है? उनकी वाणी तो दूसरों की इच्छा पूर्ण होने के लिए निकलती है। और दूसरे तो बोलें उससे पहले तो सबका अदंर से हिल जाता है, भयंकर पाप लगता है, ज़रा-सा भी बोलना नहीं चाहिए। ज़रा-सा भी बोले तो वह कच-कच कहलाता है। बोल तो किसे कहते हैं कि सुनते रहने का मन हो, डाँटें तब भी वह सुनना अच्छा लगे। ये तो ज़रा बोले, उससे पहले ही बच्चे कहते हैं कि 'चाचा अब कच-कच करनी रहने दो। बिना काम के दख़ल कर रहे हो।' डाँटा हुआ कब काम का? पूर्वग्रह नहीं हो तो। पूर्वग्रह मतलब मन में याद होता ही है कि कल इसने ऐसा किया था और ऐसे झगड़ा था, इसलिए यह ऐसा ही है। घर में झगड़े उसे भगवान ने मूर्ख कहा है। किसी को दु:ख दें, तो भी नर्क जाने की निशानी है।

संसार निभाने के संस्कार-कहाँ?

मनुष्य के अलावा दूसरा कोई पतिपना नहीं करता। अरे, आजकल तो डायवॉर्स लेते हैं न? वकील से कहते हैं कि, 'तुझे हज़ार, दो हज़ार रुपये दूँगा, मुझे डायवॉर्स दिलवा दे।' तब वकील कहेगा कि 'हाँ, दिलवाा दूँगा।' अरे! तू ले ले न डायवॉर्स, दूसरों को क्या दिलवाने निकला है?

पहले के समय की एक बुढ़िया की बात है। वे चाचाजी की तेरही कर रही थीं। 'तेरे चाचा को यह भाता था, वह भाता था।' ऐसा कर-करके चार पाई पर वस्तुएँ रखती जाती थी। तब मैंने कहा, 'चाची! आप तो चाचा के साथ रोज़ लड़ती थी। चाचा भी आपको बहुत बार मारते थे। तब यह क्या?' तब चाची ने कहा, 'लेकिन तेरे चाचा जैसे पति मुझे फिर नहीं मिलेंगे।' ये अपने हिन्दुस्तान के संस्कार!

पति कौन कहलाता है? संसार को निभाए उसे। पत्नी कौन कहलाती है? संसार को निभाए उसे। संसार को तोड़ डाले उसे पत्नी या पति कैसे कहा जाए? उसने तो अपने गुणधर्म ही खो दिए, ऐसा कहलाएगा न? वाइफ पर गुस्सा आए तो यह मटकी थोड़े ही फेंक दोगे? कुछ तो कप-रकाबी फेंक देते हैं और फिर नये ले आते हैं! अरे, नये लाने थे तो फोड़े किसलिए? क्रोध में अंध बन जाता है और हिताहित का भान भी खो देता है।

ये लोग तो पति बन बैठे हैं। पति तो ऐसा होना चाहिए कि पत्नी सारा दिन पति का मुँह देखती रहे।

प्रश्नकर्ता : शादी से पहले बहुत देखते हैं।

दादाश्री : वह तो जाल डालती है। मछली ऐसा समझती है कि यह बहुत अच्छे दयालु व्यक्ति है, इसलिए मेरा काम हो गया। पर एक बार खाकर तो देख, काँटा फँस जाएगा। यह तो फँसाववाला है सब।

इसमें प्रेम जैसा कहाँ रहा?

घरवालों के साथ नफा हुआ कब कहलाता है कि घरवालों को अपने

ऊपर प्रेम आए, अपने बिना अच्छा नहीं लगे और कब आएँगे, कब आएँगे? ऐसा रहा करे।

लोग शादी करते हैं पर प्रेम नहीं है। यह तो मात्र विषयासक्ति है। प्रेम हो तो चाहे जितना एक-दूसरे में विरोधाभास आए, फिर भी प्रेम नहीं जाता। जहाँ प्रेम नहीं होता, वह आसक्ति कहलाती है। आसक्ति मतलब संडास! प्रेम तो पहले इतना सारा था कि पति परदेश गया हो और वह वापिस न आए तो सारी ज़िन्दगी उसका चित्त उसीमें ही रहता, दूसरा कोई याद ही नहीं आता था। आज तो दो साल पति न आए तो दूसरा पति कर लेती है, इसे प्रेम कहेंगे? यह तो संडास है। जैसे संडास बदलते हैं वैसे! जो *गलन* है, वह संडास कहलाता है। प्रेम में तो अर्पणता होती है।

प्रेम मतलब लगनी लगे वह और वह सारा दिन याद आया करे। शादी दो रूप में परिणमित होती है, कभी आबादी में जाती है तो कभी बरबादी में जाती है। प्रेम बहुत उभरे तब वापिस बैठ जाता है। जो उभरे वह आसक्ति है। इसीलिए जहाँ उभरे उससे दूर रहना। लगनी तो आंतरिक होनी चाहिए। बाहर का बक्सा बिगड़ जाए, सड़ जाए फिर भी प्रेम उतने का उतना ही रहे। यह तो हाथ जल गया हो और हम कहें कि, 'ज़रा धुलवा दो।' तो पति कहे कि 'ना, मुझसे नहीं देखा जाता।' अरे, उस दिन तो हाथ सहलाया करता था, और आज क्यों ऐसा? यह घृणा कैसे चले? जहाँ प्रेम है वहाँ घृणा नहीं, और जहाँ घृणा है वहाँ प्रेम नहीं। संसारी प्रेम भी ऐसा होना चाहिए कि जो एकदम कम न हो जाए और एकदम बढ़ न जाए। नोर्मेलिटी में होना चाहिए। ज्ञानी का प्रेम तो कभी घट-बढ़ नहीं होता है। वह प्रेम तो अलग ही होता है। उसे परमात्मप्रेम कहा जाता है।

नोर्मेलिटी, सीखने जैसी

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में 'नोर्मेलिटी' की पहचान क्या है?

दादाश्री : सब कहते हों कि, 'तू देर से उठती है, देर से उठती है', तो हम नहीं समझ जाएँ कि यह नोर्मेलिटी खो गई है? रात को ढाई बजे उठकर तू घूमने लगे तो सब नहीं कहेंगे कि 'इतनी जल्दी क्यों उठते

हो?' इसे भी नोर्मेलिटी खो डाली कहलाएगा। नोर्मेलिटी तो सभी के साथ एडजस्ट हो जाए ऐसी है। खाने में भी नोर्मेलिटी चाहिए, यदि पेट में अधिक डाला हो तो नींद आया करती है। हमारी खाने-पीने की सभी ही नोर्मेलिटी आप देखना। सोने की, उठने की, सब ही हमारी नोर्मेलिटी होती है। खाने बैठते हैं और थाली में पीछे से दूसरी मिठाई रख जाएँ तो मैं अब उसमें से थोड़ा-सा लूँ। मैं प्रमाण बदलने नहीं देता। मैं जानता हूँ कि यह दूसरा आया, इसलिए सब्ज़ी निकाल डालो। आपको इतना सब करने की ज़रूरत नहीं है। आपको तो देर से उठा जाता हो तो बोलते रहना कि यह नोर्मेलिटी में नहीं रहा जाता। इसलिए अपने को तो अंदर खुद को ही टोकना है कि 'जल्दी उठना चाहिए।' वह टोकना फायदा करेगा। इसे ही पुरुषार्थ कहा है। रात को रटते रहो कि 'जल्दी उठना है, जल्दी उठना है।' जबरदस्ती जल्दी उठने का प्रयत्न करें, उससे तो दिमाग बिगड़ेगा।

...शक्तियाँ कितनी 'डाउन' गई?

प्रश्नकर्ता : 'पति वह ही परमात्मा है' वह क्या गलत है?

दादाश्री : आज के पतियों को परमात्मा मानें तो वे पागल होकर घूमें ऐसे हैं!

एक पति अपनी पत्नी से कहता है, 'तेरे सिर पर अँगारे रखकर उस पर रोटियाँ सेक।' मूल तो बंदर छाप और ऊपर से दारू पिलाए, है तो उसकी क्या दशा होगी?

पुरुष तो कैसा होता है? ऐसे तेजस्वी पुरुष होते हैं कि जिनसे हज़ारों स्त्रियाँ काँपे। ऐसे देखने के साथ ही काँप उठे। आज तो पति ऐसे हो गए हैं कि सलिया उसकी पत्नी का हाथ पकड़े तो उसे विनती करता है 'अरे सलिया छोड़ दे। मेरी बीवी है, बीवी है।' 'घनचक्कर, इसमें सलिया से तू विनती कर रहा है? किस तरह का घनचक्कर पैदा हुआ है?' उसे तो मार, उसका गला पकड़ और काट खा। ऐसे उसके पैर पड़ा, वह कोई छोड़ देगा, वैसी जात नहीं है। तब वह, 'पुलिस, पुलिस बचाओ, बचाओ।' करता है। 'अरे! तू पति होकर 'पुलिस, पुलिस' क्या कर रहा है? पुलिस

का तो क्या करनेवाला है? तू जीवित है या मरा हुआ है? पुलिस की मदद लेनी हो तो तू पति मत बनना।

घर का मालिक 'हाफ राउन्ड' चलेगा ही नहीं, वह तो 'ऑल राउन्ड' चाहिए। कलम, कड़छी, बरछी, तैरना, तस्करी और विवाद करना ये छहों। छः कलाएँ नहीं आतीं तो वह मनुष्य नहीं। चाहे जितना गया-बीता मनुष्य हो तब भी उसके साथ एडजस्ट होना आए, दिमाग खिसके नहीं, तब काम का! भड़कने से चलेगा नहीं।

जिसे खुद अपने पर विश्वास है उसे इस जगत् में सबकुछ ही मिले ऐसा है, पर यह विश्वास ही नहीं आता न! कुछ लोगों को तो यह भी विश्वास उड़ गया होता है कि 'यह वाइफ साथ में रहेगी या नहीं रहेगी? पाँच साल निभेगा या नहीं निभेगा?' 'अरे, यह भी विश्वास नहीं?' विश्वास टूटा मतलब खतम। विश्वास में तो अनंत शक्ति है। भले ही अज्ञानता में विश्वास हो। 'मेरा क्या होगा?' हुआ कि खतम! इस काल में लोग हकबका गए हैं और दौड़ता-दौड़ता आ रहा हो और उसे पूछे कि, 'तेरा नाम क्या है?' तो वह हकबका जाता है।

भूल के अनुसार भूलवाला मिले

प्रश्नकर्ता : मैं वाइफ के साथ बहुत एडजस्ट होने जाता हूँ, पर हुआ नहीं जाता।

दादाश्री : सब हिसाबवाला है! टेढ़े पेच और टेढ़ा नट, वहाँ सीधा नट घुमाएँ तो किस तरह चले? आपको ऐसा होता है कि यह स्त्री जाति ऐसी क्यों? पर स्त्री जाति तो आपका 'काउन्टर वेट' है। जितना अपना टेढ़ापन उतनी टेढ़ी। इसलिए तो सब 'व्यवस्थित' है, ऐसा कहा है न?

प्रश्नकर्ता : सभी हमें सीधा करने आए हों ऐसा लगता है।

दादाश्री : तो सीधा करना ही चाहिए आपको। सीधा हुए बिना दुनिया चले नहीं न? सीधे नहीं होंगे तो बाप किस तरह होंगे? सीधा हो, तो बाप होता है।

शक्तियाँ खिलानेवाला चाहिए

यानी स्त्रियों का दोष नहीं है, स्त्रियाँ तो देवियों जैसी हैं। स्त्रियों और पुरुषों में, वे तो आत्मा ही है, केवल पेकिंग का फर्क है। डिफरन्स ऑफ पेकिंग। स्त्री, वह एक प्रकार का 'इफेक्ट' है, इसलिए आत्मा पर स्त्री का 'इफेक्ट' बरतता है। उसका 'इफेक्ट' अपने ऊपर नहीं पड़े तब सही है। स्त्री, वह तो शक्ति है। इस देश में कैसी-कैसी स्त्रियाँ राजनीति में हो चुकी है! और इस धर्मक्षेत्र में जो स्त्री पड़ी वह तो कैसी होती है? इस क्षेत्र से जगत् का कल्याण ही कर डाले। स्त्री में तो जगत् कल्याण की शक्ति भरी पड़ी है। उसमें खुद का कल्याण करके और दूसरों का कल्याण करने की शक्ति है।

प्रतिक्रमण से, हिसाब सब छूटें

प्रश्नकर्ता : कुछ लोग स्त्री से ऊबकर घर से भाग छूटते हैं, वह कैसा है?

दादाश्री : ना, भगोड़े किसलिए बनें? हम परमात्मा हैं। हमें भगोड़ा होने की क्या ज़रूरत है? हमें उसका समभावे निकाल कर देना है।

प्रश्नकर्ता : निकाल करना है, तो किस तरह से होता है? मन में भाव करना कि यह पूर्व का आया है?

दादाश्री : इतने से निकाल नहीं होता। निकाल मतलब तो सामनेवाले के साथ फोन करना पड़ता है, उसके आत्मा को खबर देनी पड़ती है। उस आत्मा के पास, हमने भूल की है ऐसा कबूल-एक्सेप्ट करना पड़ता है। मतलब प्रतिक्रमण बड़ा करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : सामनेवाला मनुष्य अपना अपमान करे तब भी हमें उसका प्रतिक्रमण करना चाहिए?

दादाश्री : अपमान करे तो ही प्रतिक्रमण करना है, हमें मान दे तब नहीं करना है। प्रतिक्रमण करें इसलिए सामनेवाले पर द्वेषभाव तो होता ही

नहीं। ऊपर से उस पर अपना अच्छा असर होता है। अपने साथ द्वेषभाव नहीं होता है, वह तो समझो कि पहला स्टेप, पर फिर उसे खबर भी पहुँचती है।

प्रश्नकर्ता : उसके आत्मा को पहुँचता है?

दादाश्री : हाँ, ज़रूर पहुँचता है। फिर वह आत्मा उसके पुद्गल को भी धकेलती है कि, 'भाई, फोन आया तेरा।' अपना यह प्रतिक्रमण है वह अतिक्रमण के ऊपर है, क्रमण पर नहीं।

प्रश्नकर्ता : बहुत प्रतिक्रमण करने पड़ते हैं?

दादाश्री : जितनी स्पीड में हमें मकान बनाना हो उतने कारीगर हमें बढ़ाने चाहिए। ऐसा है न, कि ये बाहर के लोगों के साथ हमें प्रतिक्रमण नहीं होंगे तो चलेगा, पर अपने आसपास के और नज़दीक के, घर के लोग हैं, उनके प्रतिक्रमण अधिक करने हैं। घरवालों के लिए मन में भाव रखना है कि मेरे साथ जन्म लिया है, साथ में रहते हैं तो किसी दिन ये मोक्षमार्ग पर आएँ।

... तो संसार अस्त हो

जिसे 'एडजस्ट' होने की कला आ गई, वह दुनिया में से मोक्ष की ओर मुड़ा। 'एडजस्टमेन्ट' हुआ उसका नाम ज्ञान। जो 'एडजस्टमेन्ट' सीख गया वह तर गया। भुगतना है वह तो भुगतना ही है, पर 'एडजस्टमेन्ट' आए उसे परेशानी नहीं आती, हिसाब साफ हो जाता है। सीधे के साथ तो हरकोई एडजस्ट हो जाता है, पर टेढ़े-कठिन-कड़क के साथ में, सबके ही साथ एडजस्ट होना आया तो काम हो गया। मुख्य वस्तु एडजस्टमेन्ट है। 'हाँ' से मुक्ति है। हमने 'हाँ' कहा फिर भी 'व्यवस्थित' के बाहर कुछ होनेवाला है? पर 'ना' कहा तो महा उपाधी।

घर में पति-पत्नी दोनों निश्चय करें कि मुझे 'एडजस्ट' होना है तो दोनों का हल आए। वे ज़्यादा खींचे तो 'हमें' एडजस्ट हो जाना है, तो हल आए। एक व्यक्ति का हाथ दुःखता था, पर वह दूसरे को नहीं बताता

था, पर दूसरे हाथ से हाथ दबाकर, दूसरे हाथ से एडजस्ट किया। ऐसा एडजस्ट हो जाएँ तो हल आए। मतभेद से तो हल नहीं आता। मतभेद पसंद नहीं, फिर भी मतभेद पड़ जाते हैं न? सामनेवाला अधिक खींचा-तानी करे तो हम छोड़ दें और ओढ़कर सो जाएँ, यदि छोड़ें नहीं, दोनों खींचते रहें तो दोनों को ही नींद नहीं आएगी और सारी रात बिगड़ेगी। व्यवहार में, व्यापार में, हिस्से में कैसा सँभालते हैं, तो इस संसार के हिस्से में हमें नहीं सँभाल लेना चाहिए? संसार तो झगड़े का संग्रहस्थान है। किसी के यहाँ दो अन्नी, किसी के यहाँ चवन्नी और किसे के यहाँ सवा रुपये तक पहुँच जाता है।

यहाँ घर पर 'एडजस्ट' होना आता नहीं और आत्मज्ञान के शास्त्र पढ़ने बैठे होते हैं! अरे रख न एक तरफ! पहले यह सीख ले। घर में 'एडजस्ट' होना तो कुछ आता नहीं है। ऐसा है यह जगत्! इसलिए काम निकाल लेने जैसा है।

'ज्ञानी' छुड़वाएँ, संसारजाल से

प्रश्नकर्ता : इस संसार के सभी खाते खोटवाले लगते हैं, फिर भी किसी समय नफेवाले क्यों लगते हैं?

दादाश्री : जो खाते खोटवाले लगते हैं, उनमें से कभी यदि नफेवाला लगे तो बाकी कर लेना। यह संसार दूसरे किसी से खड़ा नहीं हुआ है। गुणा ही हुए हैं। मैं जो रकम आपको दिखाऊँ उससे भाग कर डालना, इससे फिर कुछ बाकी नहीं रहेगा। इस तरह से पढ़ाई की जाए तो पढ़ो, नहीं तो 'दादा की आज्ञा मुझे पालनी ही है, संसार का भाग लगाना ही है।' ऐसा निश्चित किया कि तबसे भाग हुआ ही समझो।

बाकी ये दिन किस तरह गुज़ारने वह भी मुश्किल हो गया है। पति आए और कहेगा कि 'मेरे हार्ट में दुःखता है।' बच्चे आएँ और कहेंगे कि 'मैं नापास हुआ हूँ।' पति को हार्ट में दुःखता है ऐसा कहें तो उसे विचार आता है कि 'हार्ट फेल' हो गया तो क्या होगा? चारों ओर से विचार घेर लेते हैं, चैन नहीं लेने देते।

'ज्ञानी पुरुष' इस संसारजाल से छूटने का रास्ता दिखाते हैं, मोक्ष का मार्ग दिखाते हैं और रास्ते पर चढ़ा देते हैं और हमें लगता है कि हम इस उपाधी में से छूट गए!

ऐसी भावना से छुड़वानेवाले मिलते ही हैं

यह सब परसत्ता है। खाते हैं, पीते हैं, बच्चों की शादियाँ करवाते हैं वह सब परसत्ता है। अपनी सत्ता नहीं है। ये सभी कषाय अंदर बैठे हैं। उनकी सत्ता है। 'ज्ञानी पुरुष' 'मैं कौन हूँ?' उसका ज्ञान देते हैं तब इन कषायों से, इस जंजाल में से छुटकारा होता है। यह संसार छोड़ने से या धक्के मारने से छूटे ऐसा नहीं है, इसलिए ऐसी कोई भावना करो कि इस संसार में से छूटा जाए तो अच्छा। अनंत जन्मों से छूटने की भावना हुई है, पर मार्ग का जानकार चाहिए या नहीं चाहिए? मार्ग दिखानेवाले 'ज्ञानी पुरुष' चाहिए।

जैसे चिकनी पट्टी शरीर पर चिपकाई हो, तो उसे उखाड़ें फिर भी वह उखड़ती नहीं। बाल को साथ में खींचकर उखड़ती है, उसी तह यह संसार चिकना है। 'ज्ञानी पुरुष' दवाई दिखाएँ तब वह उखड़ता है। यह संसार छोड़ने से छूटे ऐसा नहीं है। जिसने संसार छोड़ा है, त्याग लिया है, वह उसके कर्म के उदय ने छुड़वाया है। हर किसी को उसके उदयकर्म के आधार पर त्यागधर्म या गृहस्थधर्म मिला होता है। समकित प्राप्त हो, तब से सिद्धदशा प्राप्त होती है।

यह सब आप चलाते नहीं हैं। क्रोध-मान-माया-लोभ कषाय चलाते हैं। कषायों का ही राज है। 'खुद कौन है?' उसका भान हो तब कषाय जाते हैं। क्रोध हो तब पछतावा होता है, लेकिन भगवान का बताया हुआ प्रतिक्रमण नहीं आए तो क्या फायदा होगा? प्रतिक्रमण आएँ तो छुटकारा होगा।

ये कषाय चैन से घड़ीभर भी बैठने नहीं देते। बेटे की शादी के समय मोह ने घेर लिया हुआ होता है। तब मूर्च्छा होती है। बाकी कलेजा तो सारा दिन चाय की तरह उबल रहा होता है! तब भी मन में होता है

कि 'मैं' तो जेठानी हूँ न! यह तो व्यवहार है, नाटक खेलना है। यह देह छूटी इसलिए दूसरी जगह नाटक खेलना है। ये रिश्ते सच्चे नहीं हैं, ये तो संसारी ऋणानुबंध हैं। हिसाब पूरा हो जाने के बाद बेटा माँ-बाप के साथ नहीं जाता है।

'इसने मेरा अपमान किया!' छोड़ो न! अपमान तो निगल जाने जैसा है। पति अपमान करे तब याद आना चाहिए कि यह तो मेरे ही कर्म का उदय है और पति तो निमित्त है, निर्दोष है। और मेरे कर्म के उदय बदलें, तब पति 'आओ, आओ' करता है। इसलिए हमें मन में समता रखकर उकेल ला देना है। यदि मन में हो कि 'मेरा दोष नहीं है फिर भी मुझे ऐसा क्यों कहा?' इससे फिर रात को तीन घंटे जगता है और फिर थककर सो जाता है।

भगवान के ऊपरी जो हो गए उनका काम हो गया और पत्नी के ऊपरी बन बैठे, वे सब मार खाकर मर गए हैं। ऊपरी हो तब मार खाता है। पर भगवान क्या कहते हैं? मेरा ऊपरी बनें तो हम खुश होते हैं। हमने तो बहुत दिन ऊपरीपन भोगा, अब आप हमारे ऊपरी बनो तो अच्छा।

'ज्ञानी पुरुष' जो समझ देते हैं, उस समझ से छुटकारा होता है। समझ के बिना क्या हो? वीतराग धर्म ही सर्व दुःखों से मुक्ति देता है।

घर में तो सुंदर व्यवहार कर डालना चाहिए। 'वाइफ' के मन में ऐसा हो कि ऐसा पति नहीं मिलेगा कभी और पति के मन में ऐसा हो कि ऐसी 'वाइफ' भी कभी नहीं मिलेगी!! ऐसा हिसाब ला दें तब हम सही!!!

६. व्यापार, धर्म समेत

जीवन किसलिए खर्च हुए?

दादाश्री : यह व्यापार किसलिए करते हो?

प्रश्नकर्ता : पैसे कमाने के लिए।

दादाश्री : पैसा किसके लिए?

प्रश्नकर्ता : उसकी खबर नहीं।

दादाश्री : यह किसके जैसी बात है? मनुष्य सारा दिन इंजन चलाया करे, पर किसलिए? कुछ नहीं। इंजन को पट्टा नहीं दें, उसके जैसा है। जीवन किसलिए जीना है? केवल कमाने के लिए ही? जीव मात्र सुख को ढूँढता है। सर्व दुःखों से मुक्ति कैसे हो यह जानने के लिए ही जीना है।

विचारणा करनी, चिंता नहीं

प्रश्नकर्ता : व्यापार की चिंता होती है, बहुत अड़चनें आती हैं।

दादाश्री : चिंता होने लगे कि समझना कि कार्य बिगड़नेवाला है। ज़्यादा चिंता नहीं हो तो समझना कि कार्य बिगड़नेवाला नहीं है। चिंता कार्य के लिए अवरोधक है। चिंता से तो व्यापार की मौत आती है। जिसमें चढ़ाव-उतार हो उसका नाम ही व्यापार, पूरण-गलन है वह। पूरण हुआ उसका गलन हुए बगैर रहता ही नहीं। इस पूरण-गलन में अपनी कोई मिल्कियत नहीं है और जो अपनी मिल्कियत है, उसमें से कुछ भी पूरण-गलन होता नहीं है, ऐसा साफ व्यवहार है। यह आपके घर में आपके बीवी-बच्चे सभी पार्टनर्स हैं न?

प्रश्नकर्ता : सुख-दुःख भुगतने में भी हैं।

दादाश्री : आप अपने बीवी-बच्चों के अभिभावक कहलाते हो। अकेले अभिभावक को किसलिए चिंता करनी? और घरवाले तो उल्टा कहते हैं कि आप हमारी चिंता मत करना।

प्रश्नकर्ता : चिंता का स्वरूप क्या है? जन्म हुआ तब तो थी नहीं और आई कहाँ से?

दादाश्री : जैसे-जैसे बुद्धि बढ़ती है वैसे-वैसे संताप बढ़ता है। जन्म होता है तब बुद्धि होती है? व्यापार के लिए सोचने की ज़रूरत है। पर उससे आगे गए तो बिगड़ जाता है। व्यापार के बारे में दस-पंद्रह मिनट सोचना होता है, फिर उससे आगे जाओ और विचारों का चक्कर चलने लगे, वह नोर्मेलिटी से बाहर गया कहलाता है, तब उसे छोड़ देना। व्यापार के विचार तो आते हैं, पर उन विचारों में तन्मयाकार होकर वे विचार लम्बे चलें तो फिर उसका ध्यान उत्पन्न होता है और उससे चिंता होती है। वह बहुत नुकसान करती है।

चुकाने की नीयत में चोखे रहो

प्रश्नकर्ता : व्यापार में बहुत घाटा हुआ है तो क्या करूँ? व्यापार बंद करूँ या दूसरा करूँ? क़र्ज़ बहुत हो गया है।

दादाश्री : रूई बाज़ार का नुकसान कोई किराने की दुकान लगाने से पूरा नहीं होता। व्यापार में से हुआ नुकसान व्यापार में से ही पूरा होता है, नौकरी में से नहीं होता। कॉन्ट्रेक्ट का नुकसान कभी पान की दुकान से पूरा होता है? जिस बाज़ार में घाव लगा हो, उस बाज़ार में ही घाव भरता है, वहाँ पर ही उसकी दवाई होती है।

हमें भाव ऐसा रखना चाहिए कि अपने से किसी जीव को किंचित् मात्र दुःख न हो। हमें एक शुद्ध भाव रखना चाहिए कि सभी उधार चुका देना है, ऐसी यदि चोखी नीयत हो तो उधार सारा कभी न कभी चुकता हो जाएगा। लक्ष्मी तो ग्यारहवाँ प्राण है। इसलिए किसी की लक्ष्मी अपने

पास नहीं रहनी चाहिए। अपनी लक्ष्मी किसी के पास रहे उसकी परेशानी नहीं है। परन्तु ध्येय निरंतर वही रहना चाहिए कि मुझे पाई-पाई चुका देनी है, ध्येय लक्ष्य में रखकर फिर आप खेल खेलो। खेल खेलो पर खिलाड़ी मत बन जाना, खिलाड़ी बन गए कि आप खतम हो जाओगे।

... जोखिम समझकर, निर्भय रहना

हरएक व्यापार उदय-अस्तवाला होता है। मच्छर बहुत हों तब भी सारी रात सोने नहीं देते और दो हों तब भी सारी रात सोने नहीं देते! इसलिए हमें कहना, 'हे मच्छरमय दुनिया! दो ही सोने नहीं देते तो सभी आओ न!' ये सब नफा-नुकसान वे मच्छर कहलाते हैं।

नियम कैसा रखना? हो सके तब तक समुद्र में उतरना नहीं, परन्तु उतरने की बारी आ गई तो फिर डरना मत। जब तक डरेगा नहीं तब तक अल्लाह तेरे पास हैं। तू डरा कि अल्ला कहेंगे कि जा औलिया के पास! भगवान के वहाँ रेसकॉर्स या कपड़े की दुकान में फर्क नहीं है, पर आपको यदि मोक्ष में जाना हो तो इस जोखिम में मत उतरना। इस समुद्र में प्रवेश करने के बाद निकल जाना अच्छा।

हम व्यापार किस तरह करते हैं, वह पता है? व्यापार की स्टीमर को समुद्र में तैरने के लिए छोड़ने से पहले पूजाविधि करवाकर स्टीमर के कान में फूँक मारते हैं, 'तुझे जब डूबना हो तब डूबना, हमारी इच्छा नहीं है।' फिर छह महीने में डूबे या दो वर्ष में डूबे, तब हम 'एडजस्टमेन्ट' ले लेते हैं कि छह महीने तो चला। व्यापार मतलब इस पार या उस पार। आशा के महल निराशा लाए बगैर रहते नहीं हैं। संसार में वीतराग रहना बहुत मुश्किल है। वह तो ज्ञानकला और बुद्धिकला हमारी जबरदस्त हैं, उससे रहा जा सकता है।

ग्राहकी के भी नियम हैं

प्रश्नकर्ता : दुकान में ग्राहक आएँ, इसलिए मैं दुकान जल्दी खोलता हूँ और देर से बंद करता हूँ, यह ठीक है न?

दादाश्री : आप ग्राहक को आकर्षित करनेवाले कौन? आपको तो दुकान जिस समय लोग खोलते हों, उसी समय खोलनी। लोग सात बजे खोलते हों, और हम साढ़े नौ बजे खोलें तो वह गलत कहलाएगा। लोग जब बंद करें तब हमें भी बंद करके घर जाना चाहिए। व्यवहार क्या कहता है कि लोग क्या करते हैं वह देखो। लोग सो जाएँ तब आप भी सो जाओ। रात को दो बजे तक अंदर घमासान मचाया करो, वह किसके जैसी बात! खाना खाने के बाद सोचते हो कि किस तरह पचेगा? उसका फल सुबह मिल ही जाता है न? ऐसा व्यापार में सब जगह है।

प्रश्नकर्ता : दादा, अभी दुकान में ग्राहकी बिलकुल नहीं है तो क्या करूँ?

दादाश्री : यह 'इलेक्ट्रिसिटी' जाए, तब आप 'इलेक्ट्रिसिटी कब आएगी, कब आएगी' ऐसा करो तो जल्दी आती है? वहाँ आप क्या करते हो?

प्रश्नकर्ता : एक-दो बार फोन करते हैं या खुद कहने जाते हैं।

दादाश्री : सौ बार फोन नहीं करते?

प्रश्नकर्ता : ना।

दादाश्री : यह लाइट गई तब हम तो चैन से गा रहे थे और फिर अपने आप ही आ गई न?

प्रश्नकर्ता : मतलब हमें निःस्पृह हो जाना है?

दादाश्री : निःस्पृह होना भी गुनाह है और सस्पृह होना भी गुनाह है। लाइट आए तो अच्छा, ऐसा हमें रखना है, सस्पृह-निःस्पृह रहने का कहा है। ग्राहक आएँ तो अच्छा ऐसा रखना है, बेकार भाग-दौड़ मत करना। 'रेग्युलारिटी' और भाव नहीं बिगाड़ना, वह 'रिलेटिव' पुरुषार्थ है। ग्राहक नहीं आएँ तो अकुलाना नहीं और एक दिन ग्राहकों के झुंड पर झुंड आएँ तब सबको संतोष देना। यह तो एक दिन ग्राहक नहीं आएँ

तो नौकरों को सेठ धमकाते रहता है। तब हम उनकी जगह पर हो तो क्या होगा? वह बेचारा नौकरी करने आता है और आप उसे धमकाते हो, तो वह बैर बाँधकर सहन कर लेगा। नौकर को धमकाना मत, वह भी मनुष्यजाति है। उसे घर पर बेचारे को दु:ख और यहाँ आप सेठ होकर धमकाओ तब वह बेचारा कहाँ जाए? बेचारे पर ज़रा दयाभाव तो रखो!

यह तो ग्राहक आए तो शांति से और प्रेम से उसे माल देना। ग्राहक नहीं हों, तब भगवान का नाम लेना। यह तो ग्राहक नहीं हों, तब इधर देखता है और उधर देखता है। अंदर अकुलाया करता है, 'आज खर्च सिर पर पड़ेगा। इतना नुकसान हो गया', ऐसा चक्कर चलाता है, चिढ़ता है और नौकर को धमकाता भी है। ऐसे आर्तध्यान और रौद्रध्यान किया करता है! ग्राहक आते हैं, वह 'व्यवस्थित' के हिसाब से जो ग्राहक आनेवाला हो वही आता है, उसमें अंदर चक्कर मत चलाना। दुकान में ग्राहक आए तो पैसे का लेन-देन करना, पर कषाय मत करना, पटाकर काम करना है। यदि पत्थर के नीचे हाथ आ जाए तो हथौड़ा मारते हो? ना, वहाँ तो दब जाए तो पटाकर निकाल लेना चाहिए। उसमें कषाय का उपयोग करें तो बैर बँधता है और एक बैर में से अनंत खड़े होते हैं। यह बैर से ही जगत् खड़ा है, वही मूल कारण है।

प्रामाणिकता, भगवान का लाइसन्स

प्रश्नकर्ता : आजकल प्रामाणिकता से व्यापार करने जाएँ तो ज़्यादा मुश्किलें आती हैं, वह क्यों ऐसा?

दादाश्री : प्रामाणिक प्रकार से काम किया तो एक ही मुश्किल आती है, परन्तु अप्रामाणिक रूप से काम करेंगे तो दो प्रकार की मुश्किलें आएँगी। प्रामाणिकता की मुश्किल में से तो छूटा जाएगा, परन्तु अप्रामाणिकता में से छूटना मुश्किल है। प्रामाणिकता, वह तो भगवान का बड़ा 'लाइसेन्स' है, उस पर कोई ऊँगली नहीं उठाता। आपको वह 'लाइसेन्स' फाड़ डालने का विचार आता है?

...नफा-नुकसान में, हर्ष-शोक क्या?

व्यापार में मन बिगड़े तब भी नफा ६६,६१६ होगा और मन नहीं बिगड़े तब भी नफा ६६,६१६ रहेगा, तो कौन-सा व्यापार करना चाहिए?

हमारे बड़े व्यापार चलते हैं, पर व्यापार का कागज़ 'हमारे' ऊपर नहीं आता। क्योंकि व्यापार का नफा और व्यापार का नुकसान भी हम व्यापार के खाते में ही डालते हैं। घर में तो, मैं नौकरी करता होऊँ और जितनी पगार मिले, उतने ही पैसे देता हूँ। बाकी का नफा भी व्यापार का और नुकसान भी व्यापार के खाते में।

पैसों का बोझा रखने जैसा नहीं है। बैंक में जमा हुए तब चैन की साँस ली, फिर जाएँ तब दुःख होता है। इस जगत् में कहीं भी चैन की साँस लेने जैसा नहीं है। क्योंकि 'टेम्परेरी' है।

व्यापार में हिताहित

व्यापार कौन-सा अच्छा कि जिसमें हिंसा न समाती हो, किसी को अपने व्यापार से दुःख न हो। यह तो किराने का व्यापार हो तो एक सेर में से थोड़ा निकाल लेते हैं। आजकल तो मिलावट करना सीखे हैं। उसमें भी खाने की वस्तुओं में मिलावट करे तो जानवर में, चौपयों में जाएगा। चार पैरवाला हो जाए, फिर गिरे तो नहीं न? व्यापार में धर्म रखना, नहीं तो अधर्म प्रवेश कर जाएगा।

प्रश्नकर्ता : अब व्यापार कितना बढ़ाना चाहिए?

दादाश्री : व्यापार इतना करना कि आराम से नींद आए, हम जब उसे धकेलना चाहें तब वह धकेला जा सके, ऐसा होना चाहिए। जो आती नहीं हो, उस उपाधी को बुलाना नहीं चाहिए।

ब्याज लेने में आपत्ति?

प्रश्नकर्ता : शास्त्रों में ब्याज लेने का निषेध नहीं है न?

दादाश्री : हमारे शास्त्रों ने ब्याज पर आपत्ति नहीं उठाई है, परन्तु

सूदखोर हो गया तो नुकसानदायक है। सामनेवाले को दुःख न हो तब तक ब्याज लेने में परेशानी नहीं है।

किफ़ायत, तो 'नोबल' रखनी

घर में किफ़ायत कैसी चाहिए? बाहर खराब न दिखे, ऐसी मितव्ययता होनी चाहिए। किफ़ायत रसोई में घुसनी नहीं चाहिए, उदार किफ़ायत होनी चाहिए। रसोई में किफ़ायत घुसे तो मन बिगड़ जाता है, कोई मेहमान आए तो भी मन बिगड़ जाता है कि चावल खर्च हो जाएँगे! कोई बहुत उड़ाऊ हो तो उसे हम कहें कि 'नोबल' किफ़ायत करो।

७. ऊपरी का व्यवहार

अन्डरहैन्ड की तो रक्षा करनी चाहिए

प्रश्नकर्ता : दादा, सेठ मुझसे बहुत काम लेते हैं और तनख्वाह बहुत कम देते हैं और ऊपर से धमकाते हैं।

दादाश्री : ये तो हिन्दुस्तान के सेठ वे तो पत्नी को भी धोखा देते हैं। परन्तु अंत में अरथी निकलती है, तब तो वे ही धोखा खाते हैं। हिन्दुस्तान के सेठ नौकर का तेल निकालते रहते हैं, चैन से खाने भी नहीं देते, नौकर की तनख्वाह काट लेते हैं। पहले इन्कम टैक्सवाले काट लेते तब वहाँ वे सीधे हो जाते थे, पर आज तो इन्कम टैक्सवाले का भी ये लोग काट लेते हैं!

जगत् तो प्यादों को, अन्डरहैन्ड को धमकाए ऐसा है। अरे, साहब को धमका न, वहाँ हम जीतें तो काम का! जगत् का ऐसा व्यवहार है। जब कि भगवान ने एक ही व्यवहार कहा था कि तेरे 'अंडर' में जो आया उसका तू रक्षण करना। अंडरहैन्ड का रक्षण करें, वे भगवान हुए हैं। मैं छोटा था तब से ही अन्डरहैन्ड का रक्षण करता था।

अभी यहाँ कोई नौकर चाय की ट्रे लेकर आए और वह गिर जाए तब सेठ उसे धमकाते हैं कि 'तेरे हाथ टूटे हुए हैं? दिखता नहीं है?' अब वह तो नौकर रहा बेचारा। वास्तव में नौकर कभी कुछ तोड़ता नहीं है, वह तो 'रोंग बिलीफ़' से ऐसा लगता है कि नौकर ने तोड़ा। वास्तव में तोड़नेवाला दूसरा ही है। अब वहाँ निर्दोष को दोषी ठहराते हैं, नौकर फिर उसका फल देता है, किसी भी जन्म में।

प्रश्नकर्ता : तो उस समय तोड़नेवाला कौन हो सकता है?

दादाश्री : वह हम 'ज्ञान' देते हैं उस समय सब खुलासा दे देते हैं। यह तोड़नेवाला कौन, चलानेवाला कौन, वह सब 'सॉल्व' कर देते हैं। अब वहाँ वास्तव में क्या करना चाहिए? भ्राँति में भी क्या अवलंबन लेना चाहिए? नौकर तो 'सिन्सियर' है, वह तोड़े ऐसा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : चाहे जितना 'सिन्सियर' हो पर नौकर के हाथों टूट गया तो परोक्ष रूप से वह जिम्मेदार नहीं है?

दादाश्री : जिम्मेदार है! पर हमें वह कितना जिम्मेदार है वह समझना चाहिए। हमें सबसे पहले उसे पूछना चाहिए कि 'तू जला तो नहीं न?' जल गया हो तो दवाई लगाना। फिर धीरे से कहना कि अब जल्दी मत चलना आगे से।

सत्ता का दुरुपयोग, तो...

यह तो सत्तावाला अपने हाथ नीचेवालों को कुचलता रहता है। जो सत्ता का दुरुपयोग करता है, वह सत्ता जाती है और ऊपर से मनुष्य जन्म नहीं आता है। एक घंटा ही यदि अपनी सत्ता में आए हुए व्यक्ति को धमकाएँ तो सारी ज़िन्दगी का आयुष्य बंध जाता है। विरोध करनेवाले को धमकाएँ तो बात अलग है।

प्रश्नकर्ता : सामनेवाला टेढ़ा हो तो जैसे के साथ वैसा नहीं होना चाहिए?

दादाश्री : सामनेवाले व्यक्ति का हमें नहीं देखना चाहिए, वह उसकी जिम्मेदारी है, यदि लुटेरे सामने आ जाएँ और आप लुटेरे बनो तो ठीक है, पर वहाँ तो सबकुछ दे देते हो न? निर्बल के आगे सबल बनो उसमें क्या है? सबल होकर निर्बल के आगे निर्बल हो जाओ तो सच्चा।

ये ऑफिसर घर पर पत्नी के साथ लड़कर आते हैं और ऑफिस में असिस्टेन्ट का तेल निकाल देते हैं। अरे, असिस्टेन्ट तो गलत हस्ताक्षर करवाकर ले जाएगा तो तेरी क्या दशा होगी? असिस्टेन्ट की तो खास ज़रूरत है।

हम असिस्टेन्ट को बहुत संभालते हैं क्योंकि उसके कारण तो अपना सब चलता है। कुछ तो सर्विस में सेठ को आगे लाने के लिए खुद को समझदार दिखलाते हैं। सेठ कहें कि बीस प्रतिशत लेना। तब सेठ के सामने समझदार दिखने के लिए पच्चीस प्रतिशत लेता है। यह किसलिए पाप की गठरियाँ बाँधता है?

८. कुदरत के वहाँ गेस्ट

कुदरत, जन्म से ही हितकारी

इस संसार में जितने भी जीव हैं वे कुदरत के गेस्ट हैं, प्रत्येक चीज़ कुदरत आपके पास तैयार करके देती है। यह तो आपको *कढ़ापा* (कुढ़न, क्लेश)-*अजंपा* (बेचैनी, अशांति, घबराहट) रहा करता है, क्योंकि सही समझ नहीं है और ऐसा लगता है कि 'मैं करता हूँ'। यह भ्रांति है। बाकी किसी से इतना भी हो सकता नहीं है।

यहाँ जन्म होने से पहले, हमारे बाहर निकलने से पहले लोग सारी ही तैयारियाँ करके रखते हैं! भगवान की सवारी आ रही है! जन्म लेने से पहले बालक को चिंता करनी पड़ती है कि बाहर निकलने के बाद मेरे दूध का क्या होगा? वह तो दूध की कुँडियाँ आदि सब तैयार ही होता है। डॉक्टर, दाईयाँ तैयार होते हैं। और दाई न हो तो नाईन भी होती ही है। पर कुछ न कुछ तैयारी तो होती ही है, फिर जैसे 'गेस्ट' हों! 'फर्स्ट क्लास' के हों उसकी तैयारियाँ अलग, 'सेकिन्ड क्लास' की अलग और 'थर्ड क्लास' की अलग, सब क्लास तो हैं न? यानी कि सारी तैयारियों के साथ आप आए हैं। तो फिर हाय-हाय और अजंपा किसलिए करते हो?

जिनके 'गेस्ट' हों, उनके वहाँ पर विनय कैसा होना चाहिए? मैं आपके यहाँ 'गेस्ट' होऊँ तो मुझे 'गेस्ट' की तरह विनय नहीं रखना चाहिए? आप कहो कि 'आपको यहाँ नहीं सोना है, वहाँ सोना है', तो मुझे वहाँ सो जाना चाहिए। दो बजे खाना आए तो भी मुझे शांति से खा लेना चाहिए। जो रखे वह आराम से खा लेना पड़ता है, वहाँ शोर नहीं मचा सकते। क्योंकि 'गेस्ट' हूँ। अब यदि 'गेस्ट' रसोई में जाकर कढ़ी

हिलाने लगे तो कैसा कहलाए? घर में दख़ल करने जाएँ तो आपको कौन खड़ा रखेगा? तुझे बासुंदी थाली में रखें तो खा लेना, वहाँ ऐसा मत कहना कि 'हम मीठा नहीं खाते हैं।' जितना परोसा जाए उतना आराम से खाना। खारा परोसे तो खारा खा लेना। बहुत नहीं भाए तो थोड़ा खाना, परन्तु खाना ज़रूर! 'गेस्ट' के सभी नियम पालना। 'गेस्ट' को राग-द्वेष नहीं करने होते हैं, 'गेस्ट' राग-द्वेष कर सकते हैं? वे तो विनय में ही रहते हैं न?

हम तो 'गेस्ट' के तौर पर ही रहते हैं, हमारे लिए सभी वस्तुएँ आती हैं। जिनके वहाँ 'गेस्ट' के तौर पर रहे हों, उन्हें परेशान नहीं करना चाहिए। हमें सारी चीज़ें घर बैठे आती हैं, याद करते ही हाज़िर होती हैं और हाज़िर नहीं हो तो हमें परेशानी भी नहीं। क्योंकि वहाँ 'गेस्ट' हुए हैं। किसके वहाँ? कुदरत के घर पर! कुदरत की मरज़ी न हो तो हम समझें कि हमारे हित में है और मरज़ी उसकी हो तो भी हमारे हित में है। हमारे हाथ में करने की सत्ता हो, तो एक तरफ दाढ़ी उगे और दूसरी तरफ दाढ़ी नहीं उगे तो हम क्या करें? हमारे हाथ में करने का होता तो सब घोटाला ही हो जाता। यह तो कुदरत के हाथों में है। उसकी कहीं भी भूल नहीं होती, सब पद्धति अनुसार का ही होता है। देखो चबाने के दाँत अलग, छीलने के दाँत अलग, खाने के दाँत अलग। देखो, कितनी सुंदर व्यवस्था है! जन्म लेते ही पूरा शरीर मिलता है, हाथ, पैर, नाक, कान, आँखें सबकुछ मिलता है, पर मुँह में हाथ डालो तो दाँत नहीं मिलते हैं, तब कोई भूल हो गई होगी कुदरत की? ना, कुदरत समझती है कि जन्म लेकर तुरन्त उसे दूध पीना है, दूसरा आहार पचेगा नहीं, माँ का दूध पीना है, यदि दाँत देंगे तो वह काट लेगा! देखो कितनी सुंदर व्यवस्था की हुई है! जैसे-जैसे ज़रूरत पड़ती है वैसे दाँत निकल आते हैं। पहले चार आते हैं, फिर धीरे-धीरे दूसरे आते हैं और इन बूढ़ों के दाँत गिर जाते हैं तो फिर वापस नहीं आते हैं।

कुदरत सभी तरह से रक्षण करती है। राजा की तरह रखती है। परन्तु अभागे को रहना नहीं आता, तब क्या हो?

पर दख़लंदाज़ी से दुःख मोल लिए

रात को हाँडवा पेट में डालकर सो जाता है न? फिर खर्राटें गरड़-गरड़ बुलवाता है! घनचक्कर, अंदर पता लगा न, क्या चल रहा है? तब कहे कि, 'उसमें मी काय करूँ?' और कुदरत का कैसा है? पेट में पाचक रस, 'बाइल' पड़ता है, दूसरी चीज़ें पड़ती है, सुबह 'ब्लड' 'ब्लड' की जगह, 'युरिन' 'युरिन' की जगह, 'संडास' 'संडास' के स्थान पर पहुँच जाता है। कैसा पद्धति अनुसार सुंदर व्यवस्था की हुई है! कुदरत कितना बड़ा अंदर काम करती है! यदि डॉक्टर को एक दिन यह अंदर का पचाने का काम सौंपा हो तो वह मनुष्य को मार डाले! अंदर में पाचक रस डालना, 'बाइल' डालना, आदि डॉक्टर को सौंपा हो तो डॉक्टर क्या करे? भूख नहीं लगती इसलिए आज ज़रा पाचक रस ज़्यादा डालने दो। अब कुदरत का नियम कैसा है कि पाचक रस ठेठ मरते दम तक चलें उस अनुसार डालती है। अब ये उस दिन, रविवार के दिन पाचकरस ज़्यादा डाल देता है, इसलिए बुधवार को अंदर बिलकुल पचेगा ही नहीं, क्योंकि बुधवार के हिस्से का भी रविवार को डाल दिया।

कुदरत के हाथ में कितनी अच्छी बाज़ी है! और एक आपके हाथ में व्यापार आया, और वह भी व्यापार आपके हाथ में तो नहीं ही है। आप खाली मान बैठे हो कि मैं व्यापार करता हूँ, इसलिए झूठी हाय-हाय, हाय-हाय करते हो। दादर से सेन्ट्रल टेक्सी में जाना हुआ, तब वह मन में टकरा जाएगी-टकरा जाएगी करके डर जाता है। अरे! कोई बाप भी टकरानेवाला नहीं है। तू अपने आप आगे देखकर चल। तेरा फ़र्ज़ कितना? तुझे आगे देखकर चलना है, इतना ही। वास्तव में तो वह भी तेरा फ़र्ज़ नहीं है। कुदरत तेरे पास से वह भी करवाती है। पर आगे देखता नहीं है और दख़ल करता है। कुदरत तो इतनी अच्छी है! यह अंदर इतना बड़ा कारखाना चलता है तो बाहर नहीं चलेगा? बाहर तो कुछ चलाने को है ही नहीं। क्या चलाना है?

प्रश्नकर्ता : कोई जीव उल्टा करें, तो वह भी उसके हाथ में सत्ता नहीं है?

दादाश्री : ना, सत्ता नहीं है, पर उल्टा हो वैसा भी नहीं है, पर उसने उल्टे-सुल्टे भाव किए इसलिए यह उल्टा हो गया। खुद ने कुदरत के इस संचालन में दख़ल दिया है, नहीं तो ये कौए, कुत्ते ये जानवर कैसे हैं? अस्पताल नहीं चाहिए, कोर्ट नहीं चाहिए, वे लोग झगड़े कैसे सुलझा देते हैं? दो साँड़ लड़ते हैं, बहुत लड़ते हैं, पर अलग होने के बाद वे क्या कोर्ट ढूँढने जाते हैं? दूसरे दिन देखें तो आराम से दोनों घूम रहे होते हैं! और इन मूर्खों के कोर्ट होते हैं, अस्पताल होते हैं, तब भी वे दुःखी, दुःखी और दुःखी! ये लोग रोज़ अपना रोना रोते हैं, इन्हें अकर्मी कहें या सकर्मी कहें? ये चिड़िया, कबूतर, कुत्ते सब कितने सुंदर दिखते हैं! वे क्या सर्दी में *वसाणुं* (जड़ी-बूटी डालकर बनाई गई मिठाई) खाते होंगे? और ये मूर्ख वसाणुं खाकर भी सुंदर दिखते नहीं हैं, बदसूरत दिखते हैं। इस अहंकार के कारण सुंदर व्यक्ति भी बदसूरत दिखता है। इसीलिए कोई भूल रह जाती है, ऐसा विचार नहीं करना चाहिए?

... फिर भी कुदरत, सदा मदद में रही

प्रश्नकर्ता : शुभ रास्ते पर जाने के विचार आते हैं, पर वे टिकते नहीं और फिर अशुभ विचार आते हैं, वह क्या हैं?

दादाश्री : विचार क्या है? आगे जाना हो, तो भी विचार काम करते हैं और पीछे जाना हो तो भी विचार काम करते हैं। खुदा की तरफ जाने के रास्ते पर आगे जाते हो और वापिस मुड़ते हो उसके जैसा होता है। एक मील आगे जाओ और एक मील पीछे जाओ, एक मील आगे जाओ और वापिस मोड़ो... विचार ही एक तरह के रखना अच्छा। पीछे जाना है मतलब पीछे जाना और आगे जाना है मतलब आगे जाना। आगे जाना हो उसे भी कुदरत 'हेल्प' करती है और पीछे जाना हो उसे भी कुदरत 'हेल्प' करती है। 'नेचर' क्या कहता है? 'आई विल हेल्प यु'। तुझे जो काम करना हो, चोरी करनी हो तो 'आई विल हेल्प यु'। कुदरत की तो बहुत बड़ी 'हेल्प' है, कुदरत की 'हेल्प' से तो यह सब चलता है! पर तू निश्चित नहीं करता कि मुझे क्या करना है? यदि तू निश्चित करे तो कुदरत तुझे 'हेल्प' देने के लिए तैयार ही है। 'फर्स्ट डिसाइड' कि मुझे इतना करना

है, फिर उसे निश्चयपूर्वक सुबह में पहले याद करना चाहिए। आपके निश्चय को आपको 'सिन्सियर' रहना चाहिए, तो कुदरत आपके पक्ष में 'हेल्प' करेगी। आप कुदरत के 'गेस्ट' हो।

इसलिए बात को समझो। कुदरत तो 'आई विल हेल्प यू' कहती है। भगवान कुछ आपकी 'हेल्प' करते नहीं हैं। भगवान बेकार नहीं बैठे हैं। यह तो कुदरत की सब रचना है और वह भगवान की सिर्फ हाज़िरी से ही रचा गया है।

प्रश्नकर्ता : हम कुदरत के 'गेस्ट' हैं या 'पार्ट ऑफ नेचर' हैं?

दादाश्री : 'पार्ट ऑफ नेचर' भी हैं और 'गेस्ट' भी हैं। हम भी 'गेस्ट' के तौर पर रहना पसंद करते हैं। चाहे वहाँ बैठोगे तब भी आपको हवा मिलती रहेगी, पानी मिलता रहेगा और वह भी 'फ्री ऑफ कॉस्ट'! जो अधिक क़ीमती है वह 'फ्री ऑफ कॉस्ट' मिलता रहता है। कुदरत को जिसकी क़ीमत है, उसकी इन मनुष्यों को क़ीमत नहीं है। और जिसकी कुदरत के पास क़ीमत नहीं (जैसे कि हीरे), उसकी हमारे लोगों को बहुत क़ीमत है।

९. मनुष्यपन की क़ीमत

क़ीमत तो, सिन्सियारिटी और मॉरालिटी की

पूरे जगत् का 'बेसमेन्ट' 'सिन्सियारिटी' और 'मॉरालिटी' दो पर ही है। वे दोनों सड़ जाएँ तो सब गिर जाता है। इस काल में 'सिन्सियारिटी' और 'मॉरालिटी' हों, वह तो बहुत बड़ा धन कहलाता है। हिन्दुस्तान में वह धन ढेरों था, पर अब इन लोगों ने वह सब फ़ॉरेन में एक्सपोर्ट कर दिया है, और फ़ॉरेन से बदले में क्या इम्पोर्ट किया, वह आप जानते हो? वे ये एटिकेट के भूत घुस गएँ! उसके कारण ही इन बेचारों को चैन नहीं रहता। हमें उसे एटिकेट के भूत की क्या ज़रूरत है? जिनमें नूर नहीं हैं, उनके लिए वह है। हम तो तीर्थंकरी नूरवाले लोग हैं, ऋषिमुनिओं की संतान हैं! तेरे फटे हुए कपड़े हों, फिर भी तेरा नूर तुझे कह देगा कि 'तू कौन है?'

प्रश्नकर्ता : 'सिन्सियारिटी' और 'मॉरालिटी' का एक्ज़ेक्ट अर्थ समझाइए।

दादाश्री : 'मॉरालिटी' का अर्थ क्या है? खुद के हक़ का और सहज मिल आए, वह सभी भोगने की छूट है। यह सबसे अंतिम मॉरालिटी का अर्थ है। मॉरालिटी तो बहुत गूढ़ है, उस पर तो शास्त्र के शास्त्र लिखे जा सकते हैं। पर इस अंतिम अर्थ पर से आप समझ जाओ।

और 'सिन्सियारिटी' तो जो मनुष्य दूसरों के प्रति 'सिन्सियर' रहता नहीं, वह खुद अपने लिए 'सिन्सियर' रहता नहीं। किसी को थोड़ा भी 'इनसिन्सियर' नहीं होना चाहिए, उससे खुद की 'सिन्सियारिटी' टूटती है।

'सिन्सियारिटी' और 'मॉरालिटी' – ये दो वस्तुएँ इस काल में हों

तो बहुत हो गया। अरे! एक हो फिर भी वह ठेठ मोक्ष तक ले जाए। परन्तु उसे पकड़ लेना चाहिए। और 'ज्ञानी पुरुष' के पास, जब-जब अड़चन पड़े तब आकर खुलासा कर जाना चाहिए कि यह 'मॉरालिटी' है या यह 'मॉरालिटी' नहीं है।

'ज्ञानी पुरुष का राज़ीपा' और खुद की 'सिन्सियारिटी' इन दोनों के गुणा से सारे कार्य सफल हों, ऐसा है।

'इनसिन्सियारिटी' से भी मोक्ष

कोई बीस प्रतिशत 'सिन्सियारिटी' और अस्सी प्रतिशत 'इनसिन्सियारिटी'वाला मेरे पास आए और पूछे कि 'मुझे मोक्ष में जाना है और मुझमें तो यह माल है तो क्या करना चाहिए?' तब मैं उसे कहूँ कि, 'सौ प्रतिशत 'इनसिन्सियर' हो जा, फिर मैं तुझे दूसरा रास्ता दिखाऊँ कि जो तुझे मोक्ष में ले जाएगा।' यह अस्सी प्रतिशत का कर्ज़ उसकी कब भरपाई करेगा? इससे तो एक बार दिवाला निकाल दे। 'ज्ञानी पुरुष' का एक ही वाक्य पकड़े तब भी वह मोक्ष में जाए। पूरे 'वर्ल्ड' के साथ 'इनसिन्सियर' रहा होगा उसका मुझे एतराज नहीं है, पर एक यहाँ 'सिन्सियर' रहा तो वह तुझे मोक्ष में ले जाएगा! सौ प्रतिशत 'इनसिन्सियारिटी' वह भी एक बड़ा गुण है, वह मोक्ष में ले जाएगा, क्योंकि भगवान का संपूर्ण विरोधी हो गया। भगवान के संपूर्ण विरोधी को मोक्ष में ले जाए बिना छुटकारा ही नहीं! या तो भगवान का भक्त मोक्ष में जाता है या तो भगवान का संपूर्ण विरोधी मोक्ष में जाता है! इसीलिए मैं नादार को तो दिखाता हूँ कि सौ प्रतिशत 'इनसिन्सियर' हो जा, फिर मैं तुझे दूसरा दिखाऊँगा, जो तुझे ठेठ मोक्ष तक ले जाएगा। दूसरा पकड़ाऊँ तभी काम होगा।

१०. आदर्श व्यवहार

अंत में, व्यवहार आदर्श चाहिएगा

आदर्श व्यवहार के बिना कोई मोक्ष में गया नहीं है। जैन व्यवहार, वह आदर्श व्यवहार नहीं है। वैष्णव व्यवहार, वह आदर्श व्यवहार नहीं है। मोक्ष में जाने के लिए आदर्श व्यवहार चाहिएगा।

आदर्श व्यवहार मतलब किसी जीव को किंचित् मात्र दु:ख नहीं हो, वह। घरवाले, बाहरवाले, अड़ोसी-पड़ोसी किसी को भी हमारे से दु:ख नहीं हो वह आदर्श व्यवहार कहलाता है।

जैन व्यवहार का अभिनिवेश करने जैसा नहीं है। वैष्णव व्यवहार का अभिनिवेश करने जैसा नहीं है। सारा अभिनिवेश व्यवहार है। भगवान महावीर का आदर्श व्यवहार होता था। आदर्श व्यवहार हो मतलब दुश्मन को भी अखरता नहीं है। आदर्श व्यवहार मतलब मोक्ष जाने की निशानी। जैन या वैष्णव गच्छ में से मोक्ष नहीं है। हमारी आज्ञाएँ आपको आदर्श व्यवहार की तरफ ले जाती हैं। वे संपूर्ण समाधि में रखें वैसी हैं। आधि-व्याधि-उपाधी में समाधि रहे ऐसा है। बाहर सारा 'रिलेटिव' व्यवहार है और यह तो 'साइन्स' है। साइन्स मतलब रियल!

आदर्श व्यवहार से अपने से किसी को दु:ख नहीं होता, अपने से किसी को दु:ख नहीं हो उतना ही देखना है। फिर भी अपने से किसी को दु:ख हो जाए तो तुरन्त ही प्रतिक्रमण कर लेना। हमसे कुछ उनकी भाषा में नहीं जाया जा सकता। यह जो व्यवहार में पैसों के लेन-देन आदि व्यवहार है, वह तो सामान्य रिवाज है, उसे हम व्यवहार नहीं कहते, किसी को दु:ख नहीं होना चाहिए, वह देखना है, और दु:ख हुआ हो तो प्रतिक्रमण

कर लेना, उसका नाम आदर्श व्यवहार।

हमारा आदर्श व्यवहार होता है। हमसे किसी को अड़चन हुई हो, ऐसा होता नहीं है। किसी के खाते में हमारी अड़चन जमा नहीं होती। हमें कोई अड़चन दे और हम भी अड़चन दें तो हम में और आपमें फर्क क्या? हम सरल होते हैं, सामनेवालों को आँटी में डालकर सरल रहते हैं। इसलिए सामनेवाला समझता है कि, 'दादा अभी कच्चे हैं।' हाँ, कच्चे होकर छूट जाना बेहतर, परन्तु पक्के होकर उसकी जेल में जाना गलत, ऐसे तो किया जाता होगा? हमें हमारे भागीदार ने कहा कि, 'आप बहुत भोले हो।' तब मैंने कहा कि, 'मुझे भोला कहनेवाला ही भोला है।' तब उन्होंने कहा कि, 'आपको बहुत लोग छल जाते हैं।' तब मैंने कहा कि, 'हम जान-बूझकर छले जाते हैं।'

हमारा संपूर्ण आदर्श व्यवहार होता है। जिनके व्यवहार में कोई भी कमी होगी, वह मोक्ष के लिए पूरा लायक हुआ नहीं कहा जाएगा।

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी के व्यवहार में दो व्यक्तियों के बीच भेद होता है?

दादाश्री : उनकी दृष्टि में भेद ही नहीं होता, वीतरागता होती है। उनके व्यवहार में भेद होता है। एक मिलमालिक और उसका ड्राइवर यहाँ आए, तो सेठ को सामने बिठाऊँ और ड्राइवर को मेरे पास बिठाऊँ, इससे सेठ का पारा उतर जाएगा! और प्रधानमंत्री आएँ तो मैं खड़ा होकर उनका स्वागत करूँ और उन्हें बिठाऊँ, उनका व्यवहार नहीं चूकता। उन्हें तो विनयपूर्वक ऊपर बिठाऊँ, और उन्हें यदि मेरे पास से ज्ञान ग्रहण करना हो, तो मेरे सामने नीचे बिठाऊँ, नहीं तो ऊँचे बिठाऊँ। लोकमान्य को व्यवहार कहा है और मोक्षमान्य को निश्चय कहा है। इसलिए लोकमान्य व्यवहार को उसी रूप में एक्सेप्ट करना पड़ता है। हम उठकर उन्हें नहीं बुलाएँ तो उनको दु:ख होगा, उसकी जोखिमदारी हमारी कहलाएगी।

प्रश्नकर्ता : बड़े हों उन्हें पूज्य मानना चाहिए?

दादाश्री : बड़े मतलब उम्र में बड़े ऐसा नहीं, फिर भी माँजी बड़े हों तो उनका विनय रखना चाहिए और ज्ञानवृद्ध हुए हों, वे पूज्य माने जाते हैं।

सत्संग में से हम घर समय पर जाते हैं। यदि रात को बाहर बजे दरवाज़ा खटखटाएँ तो वह कैसा दिखेगा? घरवाले मुँह पर बोलेंगे कि 'चाहे जब आओगे तो चलेगा।' पर उनका मन तो छोड़ता नहीं है न? वह तो तरह-तरह का दिखाएगा। अपने से उन्हें ज़रा-सा भी दुःख कैसे दिया जाए? यह तो नियम कहलाता है और नियम के आधीन तो रहना ही पड़ता है। इसी तरह दो बजे उठकर 'रियल' की भक्ति करें तो कोई कुछ बोलता है? ना, कोई नहीं पूछता।

शुद्ध व्यवहार : सद्व्यवहार

प्रश्नकर्ता : शुद्ध व्यवहार किसे कहना चाहिए? सद्व्यवहार किसे कहना चाहिए?

दादाश्री : 'स्वरूप' का ज्ञान प्राप्त होने के बाद ही शुद्ध व्यवहार शुरू होता है, तब तक सद्व्यवहार होता है।

प्रश्नकर्ता : शुद्ध व्यवहार और सद्व्यवहार में फर्क क्या है?

दादाश्री : सद्व्यवहार अहंकार सहित होता है और शुद्ध व्यवहार निरहंकारी होता है। शुद्ध व्यवहार संपूर्ण धर्मध्यान देता है और सद्व्यवहार अल्प अंश में धर्मध्यान देता है।

जितना शुद्ध व्यवहार होता है, उतना शुद्ध उपयोग रहता है। शुद्ध उपयोग मतलब 'खुद' ज्ञाता-दृष्टा होता है, पर देखे क्या? तब कहे, शुद्ध व्यवहार को देखो। शुद्ध व्यवहार में निश्चय, शुद्ध उपयोग होता है।

कृपालुदेव ने कहा है: '*गच्छमत नी जे कल्पना ते नहीं सद्व्यवहार।*'

सभी संप्रदाय, वे कल्पित बातें हैं। उनमें सद्व्यवहार भी नहीं है तो फिर वहाँ शुद्ध व्यवहार की बात क्या करनी? शुद्ध व्यवहार, वह निरहंकारी पद है, शुद्ध व्यवहार स्पर्धा रहित है। हम यदि स्पर्धा में उतरें तो राग-द्वेष होते हैं। हम तो सभी से कहते हैं कि आप जहाँ हो वहीं ठीक हो। और आपको कोई कमी हो तो यहाँ हमारे पास आओ। हमारे यहाँ तो प्रेम की ही बरसात होती है। कोई द्वेष करता हुआ आए फिर भी प्रेम देना।

क्रमिक मार्ग मतलब शुद्ध व्यवहारवाले होकर शुद्धात्मा बनो और अक्रम मार्ग मतलब पहले शुद्धात्मा बनकर फिर शुद्ध व्यवहार करो। शुद्ध व्यवहार में व्यवहार सभी होता है, पर उसमें वीतरागता होती है। एक-दो जन्मों में मोक्ष जानेवाले हों, वहाँ से शुद्ध व्यवहार की शुरूआत होती है।

शुद्ध व्यवहार स्पर्श नहीं करे, उसका नाम 'निश्चय'। व्यवहार उतना पूरा करना कि निश्चय को स्पर्श नहीं करे, फिर व्यवहार चाहे जिस प्रकार का हो।

चोखा व्यवहार और शुद्ध व्यवहार में फर्क है। व्यवहार चोखा रखे वह मानवधर्म कहलाता है और शुद्ध व्यवहार तो मोक्ष में ले जाता है। बाहर या घर में लड़ाई-झगड़ा न करे वह चोखा व्यवहार कहलाता है। और आदर्श व्यवहार किसे कहा जाता है? खुद की सुगंधी फैलाए वह।

आदर्श व्यवहार और निर्विकल्प पद वे दोनों प्राप्त हो जाएँ फिर बचा क्या? इतना तो पूरे ब्रह्मांड को बदलकर रख दे।

आदर्श व्यवहार से मोक्षार्थ सधे

दादाश्री : तेरा व्यवहार कैसा करना चाहता है?

प्रश्नकर्ता : संपूर्ण आदर्श।

दादाश्री : बूढ़ा होने के बाद आदर्श व्यवहार हो, वह किस काम का? आदर्श व्यवहार तो जीवन की शुरूआत से होना चाहिए।

'वर्ल्ड' में एक ही मनुष्य आदर्श व्यवहारवाला हो तो उससे पूरा 'वर्ल्ड' बदल जाए ऐसा है।

प्रश्नकर्ता : आदर्श व्यवहार किस तरह होता है?

दादाश्री : आपको (महात्माओं को) जो निर्विकल्प पद प्राप्त हुआ है तो उसमें रहने से आदर्श व्यवहार अपने आप आएगा। निर्विकल्प पद प्राप्त होने के बाद कोई दख़ल होती नहीं है, फिर भी आपसे दख़ल हो जाए तो आप मेरी आज्ञा में नहीं हैं, हमारी पाँच आज्ञा आपको भगवान महावीर जैसी

स्थिति में रखें ऐसी हैं। व्यवहार में हमारी आज्ञा आपको बाधक नहीं है, आदर्श व्यवहार में रखे ऐसी है। 'यह' ज्ञान तो व्यवहार को कम्प्लीट आदर्श बनाए ऐसा है। मोक्ष किसका होगा? आदर्श व्यवहारवाले का। और 'दादा' की आज्ञा वह आदर्श व्यवहार लाती है। ज़रा-सी भी किसी की भूल आए तो वह आदर्श व्यवहार नहीं है। मोक्ष कोई 'गप्प' नहीं है, वह हक़ीक़त स्वरूप है। मोक्ष कोई वकीलों का खोजा हुआ नहीं है। वकील तो 'गप्प' में से खोजें, वैसा यह नहीं है, यह तो हक़ीक़त स्वरूप है।

एक भाई मुझे एक बड़े आश्रम में मिले। मैंने उनसे पूछा कि, 'यहाँ कहाँ से आप?' तब उन्होंने कहा कि, 'मैं इस आश्रम में पिछले दस वर्ष से रह रहा हूँ।' तब मैंने उनसे कहा कि, 'आपके माँ-बाप गाँव में बहुत गरीब हालत में अंतिम अवस्था में दुःखी हो रहे हैं।' तब उन्होंने कहा कि, 'उसमें मैं क्या करूँ? मैं उनका करने जाऊँ तो मेरा धर्म करने का रह जाएगा।' इसे धर्म कैसे कहा जाए? धर्म तो उसका नाम कि जो माँ-बाप को बुलाए, भाई को बुलाए, सबको बुलाए। व्यवहार आदर्श होना चाहिए। जो व्यवहार खुद के धर्म को धिक्कारे, माँ-बाप के संबंध को ठुकराए, उसे धर्म कैसे कहा जाए? अरे! मन में दी गई गाली या अँधेरे में किए गए कृत्य, वे सब भयंकर गुनाह हैं! वह समझता है कि, 'मुझे कौन देखनेवाला है, और कौन इसे जाननेवाला है?' अरे, यह नहीं है पोपाबाई का राज! यह तो भयंकर गुनाह है। इन सबको अँधेरे की भूलें ही परेशान करती हैं।

व्यवहार आदर्श होना चाहिए। यदि व्यवहार में अत्यधिक सतर्क हुए तो कषायी हो जाते हैं। यह संसार तो नाव है, और नाव में चाय-नाश्ता सब करना है पर समझना है कि इससे किनारे तक जाना है।

इसलिए बात को समझो। 'ज्ञानी पुरुष' के पास तो बात को केवल समझनी ही है, करने का कुछ भी नहीं है। और जो समझकर उसमें समा गया तो हो गया वीतराग!

जय सच्चिदानंद

मूल गुजराती शब्दों के समानार्थी शब्द

ऊपरी	:	बॉस, वरिष्ठ मालिक
कल्प	:	कालचक्र
गोठवणी	:	सेटिंग, प्रबंध, व्यवस्था
नोंध	:	अत्यंत राग अथवा द्वेष सहित लम्बे समय तक याद रखना, नोट करना
नियाणां	:	अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना
धौल	:	हथेली से मारना
सिलक	:	राहखर्च, पूँजी
तायफ़ा	:	फज़ीता
उपलक	:	सतही, ऊपर ऊपर से, सुपरफ्लुअस
कढ़ापा	:	कुढ़न, क्लेश
अजंपा	:	बेचैनी, अशांति, घबराहट
राजीपा		गुरजनों की कृपा और प्रसन्नता
सिलक	:	जमापूंजी
पोतापणुं	:	मैं हूँ और मेरा है, ऐसा आरोपण, मेरापन
लागणी	:	भावुकतावाला प्रेम, लगाव

नौ कलमें (भावनाएँ)

१. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा का किंचित्मात्र भी अहम् न दुभे (दु:खे), न दुभाया (दु:खाया) जाये या दुभाने (दु:खाने) के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

मुझे किसी देहधारी जीवात्मा का किंचित्मात्र भी अहम् न दुभे, ऐसी स्याद्वाद वाणी, स्याद्वाद वर्तन और स्याद्वाद मनन करने की परम शक्ति दो।

२. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी धर्म का किंचित्मात्र भी प्रमाण न दुभे, न दुभाया जाये या दुभाने के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी परम शक्ति दो। मुझे किसी भी धर्म का किंचित्मात्र भी प्रमाण न दुभाया जाये ऐसी स्याद्वाद वाणी, स्याद्वाद वर्तन और स्याद्वाद मनन करने की परम शक्ति दो।

३. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी उपदेशक साधु, साध्वी या आचार्य का अवर्णवाद, अपराध, अविनय न करने की परम शक्ति दो।

४. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा के प्रति किंचित्मात्र भी अभाव, तिरस्कार कभी भी न किया जाये, न करवाया जाये या कर्ता के प्रति न अनुमोदित किया जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

५. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा के साथ कभी भी कठोर भाषा, तंतीली भाषा न बोली जाये, न बुलवाई जाये या बोलने के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी परम शक्ति दो।

कोई कठोर भाषा, तंतीली भाषा बोलें तो मुझे मृदु-ऋजु भाषा बोलने की शक्ति दो ।

६. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा के प्रति स्त्री, पुरुष या नपुंसक, कोई भी लिंगधारी हो, तो उसके संबंध में किचिंत्मात्र भी विषय-विकार संबंधी दोष, इच्छाएँ, चेष्टाएँ या विचार संबंधी दोष न किये जायें, न करवाये जायें या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जाये, ऐसी

परम शक्ति दो। मुझे निरंतर निर्विकार रहने की परम शक्ति दो।

७. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी रस में लुब्धता न हो ऐसी शक्ति दो। समरसी आहार लेने की परम शक्ति दो।

८. हे दादा भगवान ! मुझे किसी भी देहधारी जीवात्मा का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष, जीवित अथवा मृत, किसी का किंचित्मात्र भी अवर्णवाद, अपराध, अविनय न किया जाये, न करवाया जाये या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जायें, ऐसी परम शक्ति दो।

९. हे दादा भगवान ! मुझे जगत कल्याण करने में निमित्त बनने की परम शक्ति दो, शक्ति दो, शक्ति दो।

(इतना आप दादा भगवान से माँगा करें। यह प्रतिदिन यंत्रवत् पढ़ने की चीज़ नहीं है, हृदय में रखने की चीज़ है। यह प्रतिदिन उपयोगपूर्वक भावना करने की चीज़ है। इतने पाठ में समस्त शास्त्रों का सार आ जाता है।)

प्रतिक्रमण विधि

प्रत्यक्ष दादा भगवान की साक्षी में, देहधारी (जिसके प्रति दोष हुआ हो, उस व्यक्ति का नाम) के मन-वचन-काया के योग, भावकर्म-द्रव्यकर्म-नोकर्म से भिन्न ऐसे हे शुद्धात्मा भगवान, आपकी साक्षी में, आज दिन तक मुझसे जो जो ★★ दोष हुए हैं, उसके लिए क्षमा माँगता हूँ। हृदयपूर्वक बहुत पश्चाताप करता हूँ। मुझे क्षमा करें। और फिर से ऐसे दोष कभी भी नहीं करूँ, ऐसा दृढ़ निश्चय करता हूँ। उसके लिए मुझे परम शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए।

★★ क्रोध-मान-माया-लोभ, विषय-विकार, कषाय आदि से किसी को भी दु:ख पहुँचाया हो, उस दोषो को मन में याद करें।

❖ ❖ ❖

दादा भगवानना असीम जय जयकार हो

(प्रतिदिन कम से कम १० मिनट से लेकर ५० मिनट तक जोर से बोलें)

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

हिन्दी

१. ज्ञानी पुरूष की पहचान
२. सर्व दु:खों से मुक्ति
३. कर्म का विज्ञान
४. आत्मबोध
५. मैं कौन हूँ ?
६. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
७. भूगते उसी की भूल
८. एडजस्ट एवरीव्हेयर
९. टकराव टालिए
१०. हुआ सो न्याय
११. चिंता
१२. क्रोध
१३. प्रतिक्रमण
१४. दादा भगवान कौन ?
१५. पैसों का व्यवहार
१६. अंत:करण का स्वरूप
१७. जगत कर्ता कौन ?
१८. त्रिमंत्र
१९. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
२०. पति-पत्नी का दीव्य व्यवहार
२१. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार
२२. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य
२३. दान
२४. मानव धर्म
२५. सेवा-परोपकार
२६. मृत्यु समये, पहेला और पश्चात
२७. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
२८. प्रेम
२९. क्लेष रहित जीवन
३०. अहिंसा
३१. आप्तवाणी-१

★ **दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी ५५ पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।**

★ **दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।**

प्राप्तिस्थान

दादा भगवान परिवार

अडालज : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे, पोस्ट : अडालज, जिला : गांधीनगर, गुजरात - ३८२४२१.
फोन : (०७९) ३९८३०१००,
email : info@dadabhagwan.org

अहमदाबाद : दादा दर्शन, ५, ममतापार्क सोसाइटी, नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा, अहमदाबाद-३८००१४.
फोन : (०७९)२७५४०४०८, २७५४३९७९

राजकोट : त्रिमंदिर, अहमदाबाद-राजकोट हाईवे, तरघड़िया चोकड़ी, पोस्ट : मालियासण, जिला : राजकोट. फोन : ९९२४३४३४७८

भुज : त्रिमंदिर, हिल गार्डन के पीछे, सहयोगनगर के पास, एयरपोर्ट रोड, भुज (कच्छ), गुजरात. संपर्क : ०२८३२ २३६६६६

मुंबई : ९३२३५२८९०१ **पुणे** : ९८२२०३७७४०

वड़ोदरा : (०२६५)२४१४१४२ **बेंगलूर** : ९३४१९४८५०९

कोलकता : ०३३-३२९३३८८५

U.S.A. : **Dada Bhagwan Vignan Institue : Dr. Bachu Amin,** 100, SW Redbud Lane, Topeka, Kansas 66606.
Tel : 785-271-0869, E-mail : bamin@cox.net
Dr. Shirish Patel, 2659, Raven Circle, Corona, CA 92882, Tel. : 951-734-4715,
E-mail : shirishpatel@sbcglobal.net

U.K. : **Dada Centre**, 236, Kingsbury Road, (Above Kingsbury Printers), Kingsbury, London, NW9 0BH, **Tel. :** 07956476253,
E-mail: dadabhagwan_uk@yahoo.com

Canada : **Dinesh Patel,** 4, Halesia Drive, Etobicock, Toronto, M9W 6B7. **Tel. :** 416 675 3543
E-mail: ashadinsha@yahoo.ca

Canada : +1 416-675-3543 **Australia** : +61 421127947

Dubai : +971 506754832 **Singapore** : +65 81129229

Website : www.dadabhagwan.org, www.dadashri.org

क्लेश रहित घर, मंदिर समान

जहाँ क्लेश न हो वहाँ भगवान का निवास निश्चित है, उसकी मैं आपको 'गारन्टी' देता हूँ। क्लेश तो बुद्धि और समझदारी से मिटाया जा सके ऐसा है। दूसरा कुछ न आए तो उसे समझाना कि, 'क्लेश होगा तो अपने घर में से भगवान चले जाएँगे। इसलिए तू निश्चित कर कि हमें क्लेश नहीं करना है।' और निश्चित करने के बाद यदि क्लेश हो जाए तो समझना कि यह अपनी सत्ता के बाहर हो गया है। उसके लिए पश्चाताप करना। एक ही जन्म क्लेश रहित जीवन जीया, तो भी मोक्ष जाने की लिमिट में आ गया।

\- दादाश्री